BIHAR YOGA

ध्यान
तन्त्र के आलोक में

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

ध्यान तन्त्र के आलोक में
स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

ध्यान
तन्त्र के आलोक में

ॐ, प्रेम, मंगलम्

स्वामी निरंजन

ध्यान
तन्त्र के आलोक में

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रथम संस्करण 1975
द्वितीय संस्करण 1984
पुनर्मुद्रण 1992
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा पुनर्मुद्रण 2002, 2005

ISBN : 81-85787-63-8

© बिहार योग विद्यालय 1984

प्रकाशक एवं वितरक–योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट,
गंगादर्शन, मुंगेर, बिहार, भारत
मुद्रक-- भार्गव ऑफसेट्स,
मच्छोदरी, वाराणसी

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट से लिखित अनुमति के बिना इस पुस्तक के किसी भी अंश का अन्यत्र मुद्रण या अन्य किसी रूप में प्रयोग वर्जित है।

The terms Satyananda Yoga and Bihar Yoga are trademarks of International Yoga Fellowship Movement (IYFM). The use of the same in this book is with permission.

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

स्वामी शिवानन्द का जन्म तमिलनाडु के पट्टामडई में 8 सितम्बर 1887 को हुआ। मलाया में चिकित्सक के रूप में कार्य करने के पश्चात् वे चिकित्सा कार्य छोड़कर ऋषिकेश आ गये तथा 1924 में स्वामी विश्वानन्द सरस्वती द्वारा दशनामी संन्यास-परम्परा में दीक्षित हुए। 1925 में उन्होंने सत्य सेवाश्रम औषधालय की स्थापना की। सम्पूर्ण भारतवर्ष में भ्रमण करते हुए लोगों को योगाभ्यास तथा आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा दी। 1936 में ऋषिकेश में दिव्य जीवन संघ की स्थापना की। 1945 में शिवानन्द आयुर्वेदिक फार्मेसी, 1948 में योग वेदान्त अरण्य अकादमी तथा 1957 में शिवानन्द नेत्र चिकित्सालय की स्थापना की। योग स्वास्थ्य तथा आध्यात्मिक जीवन पर दो सौ से भी अधिक पुस्तकों का प्रणयन किया।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

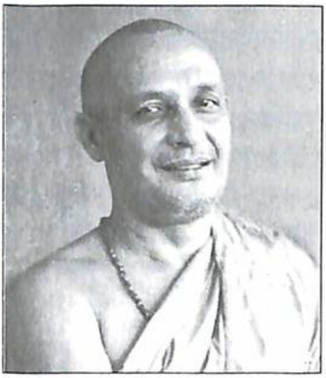

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा ग्राम में 1923 में हुआ। 1943 में उन्हें ऋषिकेश में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के दर्शन हुए। 1947 में गुरु ने उन्हें परमहंस संन्यास में दीक्षित किया। 1956 में उन्होंने परिव्राजक संन्यासी के रूप में भ्रमण करने के लिए शिवानन्द आश्रम छोड़ दिया। तत्पश्चात् 1956 में ही उन्होंने अन्तरराष्ट्रीय योग मित्र मण्डल एवं 1963 में बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। अगले 20 वर्षों तक वे योग के अग्रणी प्रवक्ता के रूप में विश्व भ्रमण करते रहे। अस्सी से अधिक ग्रन्थों के प्रणेता स्वामीजी ने ग्राम्य-विकास की भावना से 1984 में दातव्य संस्था 'शिवानन्द मठ' की एवं योग पर वैज्ञानिक शोध की दृष्टि से योग शोध संस्थान की स्थापना की। 1988 में अपने मिशन से अवकाश ले, क्षेत्र संन्यास अपनाकर सार्वभौम दृष्टि से परमहंस संन्यासी का जीवन अपना लिया है।

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

स्वामी निरंजनानन्द का जन्म छत्तीसगढ़ के राजनाँदगाँव में 1960 में हुआ। चार वर्ष की अवस्था में बिहार योग विद्यालय आये तथा दस वर्ष की अवस्था में संन्यास परम्परा में दीक्षित हुए। आश्रमों एवं योग केन्द्रों का विकास करने के लिए उन्होंने 1971 से ग्यारह वर्षों तक अनेक देशों की यात्राएँ कीं। 1983 में उन्हें भारत वापस बुलाकर बिहार योग विद्यालय का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। अगले ग्यारह वर्षों तक उन्होंने गंगादर्शन, शिवानन्द मठ तथा योग शोध संस्थान के विकास-कार्य को दिशा दी। 1990 में वे परमहंस-परम्परा में दीक्षित हुए और 1993 में परमहंस सत्यानन्द के उत्तराधिकारी के रूप में उनका अभिषेक किया गया। 1993 में ही उन्होंने अपने गुरु के संन्यास की स्वर्ण-जयन्ती के उपलक्ष्य में एक विश्व योग सम्मेलन का आयोजन किया। 1994 में उनके मार्गदर्शन में योग-विज्ञान के उच्च अध्ययन के संस्थान, बिहार योग भारती की स्थापना हुई।

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती का जन्म चन्द्रनगर (प.बंगाल) में 24 मार्च 1953 को हुआ था। दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री प्राप्त करने के पश्चात् एयर इण्डिया में सेवा प्रारम्भ की एवं सारे विश्व में दूर-दूर तक यात्रायें कीं। 22 वर्ष की उम्र में स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के मार्गदर्शन एवं दिशा निर्देशों से उन्हें संन्यास मार्ग ग्रहण करने की प्रेरणा मिली। 1981 से वे अपने गुरु के साथ लगातार देश और विदेश में यात्रा करती रहीं। स्वामी सत्संगी की योग एवं तन्त्र परम्परा में एवं आधुनिक विज्ञान एवं दर्शनों में गहरी पैठ है। आज के युग में एक ऐसी महिला संन्यासिनी शायद ही मिलें, जिन्हें व्यावहारिक एवं आधुनिक दृष्टि के साथ-साथ प्राचीन आध्यत्मिक परम्पराओं पर पूर्ण अधिकार हो।

रिखिया में शिवानन्द मठ के कार्यकलापों का वे प्रभावी मार्गदर्शन करती हैं तथा रिखिया पंचायत के कमजोर, असुविधाग्रस्त एवं उपेक्षित वर्ग के लिए अथक कार्य करती हैं।

समर्पण

उन सब ज्ञात-अज्ञात महान् आत्माओं को
जो इस धरती पर आयीं और चली गयीं;
जिन्होंने तन्त्र विद्या को जन्म देकर
उसे विकसित किया।
और इस प्रकार
उन्होंने मानव को वह सब कुछ दिया
जो उसके क्रमविकास के लिए आवश्यक है।
हम अति विनम्रतापूर्वक साभार
उनका नाम स्मरण करते हैं।
उन्हीं की शिक्षाओं के कारण
आज इस पुस्तक में वर्णित साधना-विधियाँ
जन-साधारण के लिए सुलभ बन सकी हैं।
और वे महान आत्मायें हैं—
अपने अनेक रूपों में ब्रह्मा, विष्णु और शिव;
युग-युगों तक मानव का मार्गनिर्देशन करने वाले गुरु—
वशिष्ठ, व्यास और शंकराचार्य;
नौ नाथ; चौरासी सिद्ध और चौंसठ योगिनियाँ;
ईसा; एसेनेस तथा ईसाई सन्त; मोहम्मद तथा सूफी सन्तगण;
रहस्यवादी मायन; जरतुश्त; महावीर; भगवान बुद्ध;
पद्मसम्भव; गुरुनानक; बाबा जी; कबीर; तुलसीदास; चैतन्य महाप्रभु;
पातंजलि; भैरव-भैरवियाँ; कौल; अघोरी तथा अवधूत साधकगण;
ग्रेट ह्वाइट ब्रदरहुड; रामप्रसाद; वामक्षेम;
रामकृष्ण परमहंस; तैलंग स्वामी; साईं बाबा (शिरडी); लाहिड़ी महाशय;
श्रीयुक्तेश्वर; स्वामी योगानन्द; जॉन वुडरॉफ; स्वामी विवेकानन्द;
श्री अरविन्द; स्वामी नित्यानन्द; मेहरबाबा; रमण महर्षि
तथा परमगुरु स्वामी शिवानन्द (ऋषिकेश)।

विषय-सूची

प्रथम खण्ड—ध्यान के सिद्धान्त

प्रथम अध्याय	ध्यान क्या है ?	३
द्वितीय अध्याय	विज्ञान, आत्मा और ध्यान	९
तृतीय अध्याय	ध्यान और स्वास्थ्य	२०
चतुर्थ अध्याय	योग का अतीन्द्रिय शरीरविज्ञान	२५
पंचम अध्याय	मन का पुनर्संयोजन	३४
षष्ठ अध्याय	योग दर्शन	४९
सप्तम अध्याय	राजयोग की पद्धति	५३
अष्टम अध्याय	योग के अन्य मार्ग तथा ध्यान	६९

द्वितीय खण्ड—ध्यान की तैयारियाँ

नवम अध्याय	सामान्य निर्देश एवं सुझाव	८५
दशम अध्याय	ध्यान के आसन	९१
एकादश अध्याय	मुद्रा तथा बन्ध	१०४
द्वादश अध्याय	प्राणायाम	१२४

तृतीय खण्ड—ध्यान के अभ्यास

त्रयोदश अध्याय	जप योग	१३९
चतुर्दश अध्याय	मंत्र सिद्धि योग	१४७
पंचदश अध्याय	अजपा जप	१५३
षोडश अध्याय	योगनिद्रा	१७०
सत्तरहवाँ अध्याय	अंतर्मौन	२०५
अठारहवाँ अध्याय	अन्तर्धारणा	२१९
उन्नीसवाँ अध्याय	चिदाकाश धारणा	२३७
बीसवाँ अध्याय	त्राटक और अन्तर्त्राटक	२५२
इक्कीसवाँ अध्याय	नाद योग	२७०
बाईसवाँ अध्याय	निराकार ध्यान	२७८
तेईसवाँ अध्याय	विविध प्रकार के ध्यान	२८५
चौबीसवाँ अध्याय	प्राण विद्या	३०४
पच्चीसवाँ अध्याय	कुण्डलिनी क्रियाएँ	३१५

प्रकाशकीय

तन्त्र अत्यन्त प्राचीन विज्ञान है। मानव के क्रमविकास को द्रुतगति प्रदान करने के लिए इसमें अनेक प्रणालियों पर विचार किया गया है। यह संसार के सभी वर्तमान धर्मों से अधिक पुराना है। तन्त्र ने ही कुछ ऐसे गुह्य आधार प्रस्तुत किये हैं जिन पर बाद में अनेक धर्म उठ खड़े हुये। हर प्रकार की प्रकृति वाले एवं प्रत्येक आध्यात्मिक स्तर के व्यक्ति के लिए व्यावहारिक पद्धतियाँ तन्त्र में मिलती हैं। यह विज्ञान जीवन की प्रत्येक क्रिया को आध्यात्मिक साधना में रूपांतरित कर देता है।

सृष्टि के कुछ हजार वर्ष पश्चात् आर्यों ने तन्त्र विज्ञान में वेदान्त दर्शन जोड़ दिया। इन दोनों का मिला-जुला रूप ही योग है जो वर्तमान समय में बहुत प्रचलित है। इस पुस्तक का उद्देश्य ध्यान की उन विधियों की व्यावहारिक जानकारी देना है जो तन्त्र पर आधारित हैं। इससे यह लाभ होगा कि उनका अभ्यास उनके मूल तथा सही रूपों में किया जा सकेगा।

इस पुस्तक की सभी क्रियायें तंत्र पर आधारित हैं यद्यपि उनमें से अनेक हजारों वर्षों तक विस्मृति के गर्त में पड़ी रहीं। स्वामी सत्यानन्द सरस्वती ने उन्हें ढूँढ कर और सरल रूप में प्रस्तुत करके एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य किया है। जीवन की गहराइयों को समझने के लिए उत्सुक वर्तमान सभ्यता को उनकी यह एक बहुमूल्य देन है।

हम आशा करते हैं कि अब तक सर्वथा अप्रकाशित तथा अत्यन्त व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत इन पद्धतियों से संसार कुछ न कुछ लाभ अवश्य उठायेगा और मानवता उन्नयन के मार्ग में कुछ कदम आगे बढ़ेगी।

आमुख

अधिकांश मनुष्य सुख की खोज में हैं। परन्तु बहुत कम लोग ऐसे उपाय ढूँढ पाते हैं जो उन्हें सन्तोष प्रदान कर सकें। लोग सुख प्राप्त करने के लिए टेलिविजन, सिनेमा, खेलकूद आदि की ओर झुकते हैं। इनसे शायद उन्हें क्षणिक सुख मिल जाता हो परन्तु चिरस्थायी सुख से वे वंचित रह जाते हैं। लोग शक्ति, पद और भौतिक आधिपत्य चाहते हैं। बदले में उन्हें मिलती हैं अनिश्चितता, असुरक्षा और शारीरिक-मानसिक व्याधियाँ।

हममें जीवन के प्रति उल्लास से भरी रचनात्मक अभिवृत्ति हो, हम सन्तुष्ट हों—इसका उपाय अत्यन्त सरल है। सचमुच यह इतना सरल है कि लोग इसे करने की बात ही नहीं सोचते।

हम अपनी चेतना का विकास करें और मन की अनन्त गहराइयों में पैठें। तब आपको अब तक प्राप्त समस्त सुखानुभवों का अतिक्रमण करने वाले आनन्द की अनुभूति होगी। जब आप अपने सूक्ष्म मन को जानेंगे तब जीवन के सारे छोटे-बड़े संघर्ष महत्वहीन हो जायेंगे। आप तब भी पूर्ववत् संसार में रहते हुये अपने सहकर्मियों के साथ कर्तव्यों का निर्वाह करेंगे। उस स्थिति में आपको पूर्ण सन्तोष की प्राप्ति होगी। तब आपका जीवन सार्थक हो जायेगा और उन सतही-उथले विचारों से मुक्त हो जायेगा जिनमें अधिकांश लोग अपने को उलझाये रखते हैं।

मन किस प्रकार कार्य करता है, किस तरह वह बाह्य दृश्यप्रपंचों और पूर्वसंचित ज्ञान का विश्लेषण करता है, यह बात मुख्य है। हम देखते हैं कि कुत्सित स्थिति में रह कर भी कुछ लोग बहुत प्रसन्न रहते हैं। क्यों? इस प्रश्न का उत्तर है उनका मन और बाह्य परिस्थितियों के प्रति उनकी प्रतिक्रियायें। इसीलिए हम कहते हैं— ध्यान करें और इस प्रकार अपने मन को बदलें। अपने मन की गूढ़तर प्रक्रियाओं के प्रति जागरूक बनें। आनन्द स्वत: ही आपके पास दौड़ा आयेगा।

सम्पादकीय

गत हजार वर्षों में मनुष्य ने अनेक अनुसंधान किये हैं। उसके क्रम-विकास का प्रारम्भ तब से हुआ जब वह घुमक्कड़ी जीवन व्यतीत कर रहा था तथा प्रकृति का दास था। तब से लेकर वर्तमान समय तक के विकास की यात्रा करते-करते अब उसने प्रकृति को अपनी दासी बना लिया है। अब जीविकोपार्जन के अतिरिक्त भी उसके पास अन्य कार्य हैं। मानव का क्रमविकास अव्यवस्था से व्यवस्था की ओर, अपरिष्कार से परिष्कार की ओर तथा स्थूल से सूक्ष्म की ओर का एक निरन्तर प्रवाह है। अधिकांश लोगों के साथ यह शारीरिक एवं मानसिक स्तर पर घटित हुआ है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति के साथ-साथ इस दिशा में भी प्रगति होती जा रही है। परन्तु परिवर्तन और विकास का यही एक पथ नहीं है। आज लोग महसूस करने लगे हैं कि उनका विकास और उनके जीवन-मूल्य असन्तुलित हैं। किसी महत्वपूर्ण पक्ष का अभाव उनके जीवन में बना हुआ है।

वास्तव में आज हम क्रमविकास के चौराहे पर आ खड़े हुये हैं। इसमें एक मार्ग है– बाह्य जगत में क्रमविकास करते-करते जहाँ तक हम आ पहुँचे हैं उससे आगे बढ़ने की ओर; अब तक की सांसारिक उपलब्धियों की दिशा में और अधिक अग्रसर होने की ओर ले जाने वाला। दूसरा विपरीत दिशा में ले जाने वाला मार्ग है– बाह्य जगत की यात्रा में हम जहाँ तक पहुँचे हैं वहाँ से वापस अन्तर्जगत की ओर ले जाने वाला मार्ग। इस दूसरे मार्ग पर हम बाह्याभिमुखी होने के स्थान पर अन्तराभिमुखी होना शुरू कर सकते हैं। बाह्य वातावरण के साथ अन्योन्य क्रिया के माध्यम से क्रमविकास करने के बजाय हम अपनी आन्तरिक सत्ता की खोज करना प्रारंभ कर सकते हैं तथा अपनी चेतना के नवीन स्तरों का विकास कर सकते हैं। साथ ही साथ सन्तुलन बनाये रखने के लिए हम बाह्य जीवन के विकास को भी जारी रख सकते हैं। यह दूसरा मार्ग ही हमें अध्यात्म की ओर ले जाता है।

हम सब किसी न किसी रूप में यह समझते हैं कि आध्यात्मिक विकास का मार्ग कहीं है और इस मार्ग की यात्रा हमें किसी न किसी मंजिल पर पहुँचाती है। यह मात्र कोरी कल्पना या आधारहीन चिन्तन नहीं है। युग-युगों से महान सन्त अध्यात्म मार्ग से यात्रा करके जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत करते आये हैं। उन्होंने अपने उपदेशों में यह भी बतलाया है कि कैसे हम भी उस मार्ग की यात्रा कर सकते हैं। यह अलग बात है कि अनजाने में या अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए हमने उनके उपदेशों को गलत समझा है। इन महात्माओं ने अपने-अपने शब्दों में एक ही बात कही है– अपने अन्दर देखो, अपने को पहचानो।

उदाहरणार्थ ईसा ने कहा– "भगवान का राज्य तुम्हारे अन्दर है।"

ग्रीक दार्शनिकों ने कहा– "अपने को पहचानो, सारे विश्व का परिचय पा जाओगे।"

रामकृष्ण परमहंस ने इस बात को यों कहा– "हिरण कस्तूरी का सुगन्ध-स्रोत जानने के लिये सारी दुनिया छान मारता है, यद्यपि वह उसके अन्दर ही रहता है।"

गीता में भी कहा गया है– "ध्यान बौद्धिक ज्ञान से उत्तम है।"

इन अनुभवों से हम सीखें। सत्यदर्शन, आत्मविकास या आत्म-साक्षात्कार का मार्ग बाह्य जगत् में नहीं है। यह हमारे अन्दर ही है। हमें इस मार्ग का पता लगाना है। अपने अन्दर की गहराइयों में जाकर हमें वह ढूंढना है जो सदैव से–इस जन्म से पूर्व भी–हमारे अन्दर है। हमें सोचना होगा– हम बाह्य जगत् के असंतोष-संताप के अंधकार में ठोकर खाते रहें (जैसा कि अधिकतर लोग करते हैं) या अन्तर्जगत के पथिकों की बात मानकर आन्तरिक यात्रा की तैयारी करें। आपको अपने वर्तमान जीवन को त्यागना नहीं है। आपको अपनी आध्यात्मिक आकांक्षाओं और योगाभ्यास से इसका सम्पूरण करना है।

आप कह सकते हैं– ठीक है, मैं अध्यात्म मार्ग पर चलूँगा लेकिन मैं अपनी यात्रा का प्रारम्भ कैसे करूँ? एक तरीका यह है कि आप योग की सरल से कठिन अवस्थाओं की ओर बढ़ें। पहले आसन आदि करें, फिर धीरे-धीरे धारणा और ध्यान की अवस्थाओं पर पहुंचें। ध्यान का अभ्यास करने से उच्चतर चेतना तथा सत्ता के उच्चतर क्षेत्रों तक ले जाने वाले मार्ग स्पष्ट दीखने लगते हैं। अपनी सत्ता के भीतर-बाहर अनुभवों का जो असीमित दायरा है, उसमें आप प्रवेश करने लगते हैं।

अपनी आंतरिक सत्ता के प्रति अपने दृष्टिकोण को हमें बदलना होगा। वैज्ञानिकों के अनुसार हमारी मानसिक क्षमता के अधिकांश भाग का इस्तेमाल ही नहीं हो पाता। कुछ अन्य लोगों का कहना है कि ९५ से ९९ प्रतिशत तक हमारी शक्तियाँ प्रसुप्त ही रह जाती हैं। तात्पर्य यह है कि हमारी क्षमताओं का बहुत बड़ा भाग अप्रयुक्त रहता है। यह निश्चित है कि संसार की महत्वपूर्ण घटनायें मन के इन अनजाने क्षेत्रों की गवेषणा करने से ही घटित हो सकेंगी और यह तभी सम्भव है जब हम बाह्य जगत् की ओर उन्मुख होने के बजाय अन्तर्जगत की गहराइयों में रुचि लें। अब हमारा नारा होना चाहिये– मन को जगाओ।

सब लोग सहज ढंग से यह सोच लेते हैं कि हमारा मन केवल उसका ही चिन्तन करता है जिसकी हमें चेतना होती है। यह सच नहीं है। मन प्रति क्षण लाखों शारीरिक, चाक्षुष तथा ध्वनिक अनुभूतियाँ प्राप्त करता है, उनको अस्वीकारता है, उनका विश्लेषण तथा उनकी छँटाई करता रहता है। हम केवल उन्हीं अनुभूतियों के बारे में जान पाते हैं जिनकी हमें चेतना रहती है। शेष हमारी चेतना के स्तर के नीचे रह जाती हैं।

पाश्चात्य मनोविज्ञान में मन का यह अज्ञात भाग अवचेतन या अचेतन मन कहलाता है। जिस हिस्से के बारे में हम जानते हैं, उसे चेतन मन कहते हैं। चेतन मन एक हिमशैल (iceberg) की तरह है जिसकी ऊपरी परत पानी पर रहती है तथा एक भाग पानी में डूबा रहता है। अचेतन मन को हिमशैल या पानी में डूबा हुआ भाग कहा जा सकता है। योग में मन को एक समग्र अस्तित्व माना जाता है। इसके स्तर सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होते जाते हैं। मन के सूक्ष्म स्तर मन के वे भाग हैं जिसमें हमारी मूल प्रवृत्तियों, आवेगों तथा बौद्धिकता का निवास होता है। अधिकांश लोगों की चेतना मुख्यत: इसी भाग में रहती है। इसमें हमारी सत्ता के सहजगत (intuitive), प्रेरणात्मक, सृजनात्मक तथा आध्यात्मिक पक्ष रहते हैं। आध्यात्मिक पथ पर चलकर साधक इन अज्ञात क्षेत्रों में अपनी चेतना को अवस्थित करने में समर्थ हो जाता है। आधुनिक मनोविज्ञान और योग का मन के बारे में एक-सा मत है।

सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होते जाते मन के स्तरों की गवेषणा ही चेतना का विस्तार है। मन के सभी क्षेत्रों का और अपनी आत्मा का ज्ञान ही आत्मसाक्षात्कार, निर्वाण या ईश्वर के साथ ऐक्यभाव कहलाता है।

बाह्य जगत् की उपमा एक अनन्त क्षैतिज वृत्त से दी जा सकती है। हमारी मानसिक जागृति की तुलना उन विभिन्न रेखाओं से की जा सकती है जो वृत्त से समकोण बनाते हुये केन्द्र से मिलती हैं। केन्द्र कालातीत अवस्था तथा शाश्वततत्व का बोधक है जब कि वृत्त दिक्काल (time and space) का प्रतिनिधित्व करता है। केन्द्र हमारी आन्तरिक सत्ता का सार है। यदि हम बाह्य जगत पर ही अपना ध्यान रखेंगे तो वृत्त की परिधि पर ही रह जायेंगे, केन्द्र तक नहीं पहुँच पायेंगे। लेकिन बाह्य जगत् में रहते हुए भी मन को जागृत किया जाये, तो जीवन की गति केन्द्र की ओर जाती हुई लम्ब रेखाओं के समान हो जायेगी। जितना ही हम मन को जागृत करते हैं, उतना ही हम केन्द्र (अस्तित्व का सार भाग) के निकट होते जाते हैं। इसलिए हमें अविलम्ब इस केन्द्रोन्मुखी यात्रा पर चल पड़ना चाहिए।

लेकिन कैसे? यदि यात्रा बाह्य जगत की हो, तब तो उपाय मालूम है– वाहन पर सवार होना है या पैदल चल देना है। लेकिन आन्तरिक यात्रा कैसे प्रारम्भ की जाये? उत्तर है– ध्यान के माध्यम से। इस यात्रा के लिए टिकट खरीदने की जरूरत नहीं है। मन ही तो टिकट है। बस, ध्यान करना शुरू कर दीजिये।

इस पुस्तक में ध्यान के अव्यावहारिक और सैद्धांतिक पक्षों को स्थान नहीं दिया गया है। हमारा उद्देश्य है– साधक के लिए संभावना के मार्ग खोलना, ध्यान के लिए आवश्यक तैयारियाँ कराना, विभिन्न योग पद्धतियों के साथ ध्यान का सम्बन्ध स्थापित करना तथा ध्यान की व्यावहारिक विधियाँ बतलाना। हमारा मत है कि व्यक्तिगत साधना का अनुभव कोरे शब्दों की अपेक्षा अधिक उपयोगी है। शब्दों से यह आशा नहीं की जा सकती है कि वे ध्यान के व्यक्तिगत अनुभवों को ठीक-ठीक व्यक्त कर सकेंगे। साधक को बौद्धिक मन, शब्दों और घिसी-पिटी बातों से परे ले जाना ही ध्यान का उद्देश्य है। शब्दों में अनुभव का वर्णन व्यक्ति पर गहरी छाप नहीं छोड़ता, जबकि एक छोटा-सा व्यक्तिगत अनुभव एक ऐसा महान परिवर्तन ला सकता है जो जीवन की दिशा ही बदल दे।

हमने इस पुस्तक में ध्यान की अनेक व्यावहारिक विधियाँ प्रस्तुत की हैं। हम आग्रह करते हैं कि आप इनमें से कुछ को ही आजमायें और स्वयं देखें कि ध्यान क्या है? यदि आप स्वानुभव की अपेक्षा दूसरों

के (ध्यान के) अनुभवों में अधिक रुचि रखते हैं तब हम आपको यह सलाह देंगे कि आप कोई अन्य पुस्तक पढ़ें।

मन को रूपान्तरित करने के लिए हमने व्यक्तिगत प्रयास पर बल दिया है। हमें अपनी रुचि-अरुचि और अहं के अनुरूप जीवन की परिस्थितियों के प्रति एक निश्चित ढंग से प्रतिक्रिया व्यक्त करने की आदत पड़ गई है। अगर बाह्य जगत् की परिस्थितियाँ हमारे विचारों के अनुरूप नहीं हुई तो हम दुखी हो जाते हैं। सफल ध्यान के लिए यह बात बाधक है। इसलिए हम अपने मन की क्रिया-पद्धति बदलें।

ध्यान की क्रियाओं द्वारा अचेतन मन में दबी पड़ी ग्रंथियों, भयों (phobias) और द्वन्द्वों से मुक्ति पाई जा सकती है। इस तरह मनुष्य स्वयं अपना मनोविश्लेषक बन सकता है। एक बार समस्यायें समझ में आ जायें तो उन्हें आत्मसुझाव (देखिये पंचम अध्याय) तथा अतीन्द्रिय असंवेदना (psychic desensitisation) द्वारा ठीक किया जा सकता है। जैसे-जैसे ये समस्यायें दूर होंगी, जीवन संघटित और आनन्दित होता जायेगा। इस प्रकार यह रूपान्तरित हो जायेगा।

योग और ध्यान किसी धर्म, दर्शन, आस्था या अनास्था का विरोध नहीं करते। वस्तुतः योग और ध्यान का अभ्यास करने से मनुष्य अपने निजी जीवन को सुधार लेता है और उसे भली प्रकार जीने लगता है। साथ ही, वह दूसरों की आस्थाओं के प्रति अधिक सहिष्णु हो जाता है। दैनिक जीवन में दूसरों के साथ उसके सम्बन्ध अधिक सद्भावपूर्ण हो जाते हैं।

लेकिन प्रारम्भिक प्रयासों से ही ध्यान की उच्च अवस्थाओं में पहुँचने की आशा मत रखिये। वस्तुतः ध्यान– वास्तविक ध्यान– आध्यात्मिकता की परिपक्व स्थिति है। इसके लिए नियमित अभ्यास की आवश्यकता है।

नियमित किये जाने वाले ध्यान के अभ्यास निश्चित रूप से दैनिक जीवन पर प्रभाव डालते हैं। ध्यान के समय प्राप्त अन्तर्दृष्टि और आनन्द शारीरिक और मानसिक स्थिति को दिन भर प्रभावित करते रहते हैं। ध्यान से व्यक्तित्व और व्यवहार में एक रचनात्मक परिवर्तन आता है। और तब व्यक्ति के समूचे अस्तित्व का एक नया ही अध्याय प्रारम्भ होता है।

प्रथम खण्ड

ध्यान के सिद्धान्त

प्रथम अध्याय

ध्यान क्या है ?

ध्यान के सम्बन्ध में अधिकांश लोगों ने सुना है, कुछ लोगों को इसका वास्तविक ज्ञान है और किंचित लोगों ने इसका अनुभव पाया है। अन्य आध्यात्मिक अनुभवों की तरह इसे भी शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता। जिज्ञासुओं को चाहिए कि वे स्वयं प्रयास कर के इसे जानें। ध्यान में अनुभव ही सत्य है, वर्णन नहीं, फिर भी हम इस विषय पर प्रकाश डालने की चेष्टा करेंगे।

आधुनिक मनोविज्ञान ने चेतना को तीन भागों में बाँटा है—

१. **निम्नस्तर मन** : इसके द्वारा शरीर की आन्तरिक क्रियायें— श्वसन, रक्त संचार, पाचन आदि संचालित होती हैं। यही सहज प्रवृत्तियों का उदगम् है और मन के इसी भाग से मन: ग्रन्थियाँ, संकुचित विचार, कुण्ठा, भय आदि प्रकट होते हैं।

२. **मध्यम मन** : चेतन अवस्था में सोच-विचार, क्रिया-प्रक्रिया आदि का निर्धारण यहीं होता है। यह बौद्धिक शंका समाधान का कार्यालय है, यहीं से हमें समस्याओं के उत्तर प्राप्त होते हैं।

३. **उच्चतर मन** : यह उर्ध्व चेतना की क्रियाओं का क्षेत्र है। यह सूक्ष्म दृष्टि, प्रेरणा, आनन्द और अनुभवातीत अनुभवों का उद्गम स्थान है। विशेष बुद्धि सम्पन्न लोग इसी क्षेत्र से अपनी रचनात्मकता के लिए प्रकाश ग्रहण करते हैं। यही गूढ़तर ज्ञान का पीठ है।

जाग्रत अवस्था में हम कतिपय दृश्य-वस्तुओं के प्रति सोचते रहते हैं। यह मध्यम मन की स्थिति है जिसमें प्राय: हमारी चेतना अत्यन्त सीमित क्रियाओं तक ही सीमित रहती है।

मन का दूसरा भाग एक सामूहिक अचेतन का क्षेत्र है जिसे मान्यता दिलाने में कार्ल जुंग ने बड़ी चेष्टा की है। मन के इसी हिस्से में हमारे

क्रम विकास के अभिलेख एकत्रित हैं। यहीं हमारे पूर्वजों के कार्यकलाप संग्रहीत हैं। मन के इसी अंश के द्वारा मनुष्य एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है। यही हमारे सामान्य विगत का मूल खाका है।

मन के इन विभिन्न भागों के परदे में हमारी आत्मा, हमारी सत्ता का बीज कोष छिपा है। यही आत्मा हमारी प्रत्येक क्रिया को प्रकाशित करती है। कुछ लोग मानते हैं कि अहं हमारी सत्ता के मूल में है, लेकिन अहं भी मन का ही एक भाग है और आत्मा ही इस अहं को प्रकाश देती है। ध्यान में यही तो होता है कि हम चेतना को मन के विभिन्न भागों में ले जाते हैं। ध्यान हमें बुद्धिवादिता के दायरे से निकलने की क्षमता देता है।

यह सामान्य अनुभव है कि ध्यान के प्रारम्भिक अभ्यास में लोग ऊटपटांग चीजें देखने लगते हैं या अपने अन्दर की ऐसी कुण्ठाओं का सामना करते हैं जिनका पता सामान्यत: आयु पर्यन्त उन्हें नहीं हो पाता। इन मानसिक व्याधियों का पता लगने पर इन्हें दूर करना संभव हो जाता है (सन्दर्भ— पंचम अध्याय, 'मन का पुनर्संयोजन') और जीवन आनन्द से भर उठता है। बहुत से लोग शरीर की अंतरंग क्रिया के प्रति अत्यन्त सजग हो उठते हैं।

ध्यान की उच्चतर स्थिति प्राप्त करना तब तक कठिन है जब तक हम निम्नतर मन में रहने वाले भयों को दूर नहीं कर देते। इन भयों के कारण चेतना उनकी ओर उसी प्रकार आकर्षित हो जाती है जैसे लोहा चुम्बक की ओर।

ध्यान की उच्चतर स्थिति में चेतना आनन्द की ओर बढ़ती है। वह अधिचेतना का क्षेत्र है। बुद्धि के क्षेत्र से ऊपर जाकर चेतना सत्य के निकटस्थ होती है। साधक प्रेरणा और प्रकाश के आयामों में प्रवेश करता है। सत्ता के ऐसे गहनतम सत्य और पक्ष प्रकट होने लगते हैं जो अब तक असम्भव ही समझे जाते हैं।

ध्यान की परिणति है आत्म साक्षात्कार। यह उच्चतर मन के भी परे है। चेतना मन के क्षेत्र को छोड़ कर सत्ता के बीज-कोष आत्मा के साथ एकाकार हो जाती है। यही शुद्ध चेतना की स्थिति है, जहाँ पहुँचने पर मनुष्य का अपनी केंद्रीय सत्ता से सम्पर्क स्थापित होता है। तब मन

और शरीर भिन्न वस्तु लगने लगते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि ध्यान का उद्देश्य है मन के विभिन्न क्षेत्रों का अवगाहन करना तथा उससे भी परे जा कर अवस्थित होना।

ध्यान दो प्रकार के हैं– सक्रिय एवं निष्क्रिय।

सक्रिय ध्यान : वास्तव में योग का उद्देश्य यह है कि सामान्य जीवन के कर्म-सम्पादन में भी मनुष्य ध्यान की अवस्था में रह सके। यही सक्रिय ध्यान हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि वह दैनिक कार्यों के प्रति अन्यमनस्क हो जाय, बल्कि यह कि वह अधिक तत्परता एवं दक्षता से कार्य सम्पन्न करे। निष्क्रिय ध्यान के माध्यम से भी सक्रिय ध्यान का अभ्यास किया जा सकता है। (संदर्भ–अष्टम अध्याय, 'कर्म और भक्ति योग')

निष्क्रिय ध्यान: निष्क्रिय ध्यान में एक आसन में बैठकर ध्यान का अभ्यास किया जाता है। चंचल मन को एक बिन्दु पर केन्द्रित करना ही इसका उद्देश्य है। इसे दक्षता के निम्नलिखित स्तरों में बाँटा जा सकता है :

१. किसी वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करना। इससे मन शान्त होता है और अन्तर्मुखता आती है।

२. प्रथम स्तर में सफलता के पश्चात स्वत: ही मन के अवचेतन क्षेत्र से विचारों, ग्रन्थियों, दृश्यों और स्मृतियों की बाढ़ सी आ जाती है। यही समय है जब हम अपने व्यक्तित्व का परीक्षण करें और दुर्गुणों को निकाल फेकें।

३. निम्न मन में विचरण करने के पश्चात उच्चतर चेतना के क्षेत्र में अवगाहन प्रारम्भ होता है। यहीं से वास्तविक ज्ञान की शुरुआत होती है। ज्ञान तथा शक्ति के अनन्त कोष अनायास दिखने लगते हैं। फलस्वरूप हमारी सत्ता विश्व-व्यवस्था के साथ एकात्म होने लगती है।

४. मन के अतिक्रमणांतर साधक सर्वोच्च चेतना के साथ ऐक्य स्थापित कर आत्म दर्शन के लक्ष्य पर पहुँचता है।

निष्क्रिय ध्यान के फलस्वरूप सक्रिय ध्यान स्वतः सफल हो जाता है। जितना ही व्यक्ति अन्तर्लोक में गोते लगाएगा, बाह्य जगत में कर्मशील रहते हुए भी उतनी ही अधिक उसमें सतत ध्यानावस्थित रहने की क्षमता बढ़ेगी। मनुष्य कर्मसम्पादन करने में अधिक कुशल बन जायेगा।

आत्म साक्षात्कार के पश्चात् निष्क्रिय ध्यान एक निरर्थक क्रिया बन जाता है। यद्यपि व्यक्ति इस अवस्था में आध्यात्मिक और आंतरिक मूल्यों के अनुसार जीवन-यापन करता है, तथापि वह बाह्य जगत के प्रति भी सचेत रहता है। बिना किसी द्वन्द्व के वह आध्यात्मिक और भौतिक जीवन का निर्वाह एक साथ करते हुए सक्रिय ध्यान के अनुभव अनवरत प्राप्त करता रहता है।

साधारणत: लोगों में दृश्य वस्तु के साथ एकात्म हो जाने की प्रवृत्ति रहती है। उदाहरण के लिए जब कभी हम सूर्यास्त का मनोरम दृश्य देखते हैं तो हमारी पूरी चेतना उसी में विलीन हो जाती है, कभी-कभी हम अपने आपको भी भूल जाते हैं। हम यह भूल जाते हैं कि हम एक प्राकृतिक दृश्य देख रहे हैं। इस स्थिति में सूर्यास्त के दृश्य का कैसे आनन्द उठाया जा सकता है? जब अनुभव कर्त्ता अनुभव करते-करते अपने आपको बिल्कुल खो देता है तो अनुभव की जानेवाली वस्तु की छाप उसके व्यक्तित्व पर पड़ जाती है। इस तरह जब हमारी चेतना विषय वस्तु के साथ एकत्व की स्थिति प्राप्त कर लेती है तो विषय वस्तु का प्रभाव हमारे पूरे व्यक्तित्व पर छा जाता है। हम अपना अस्तित्व बिल्कुल खो देते हैं। पाठक इस बात को ध्यान में रखें कि जब वे यह पुस्तक पढ़ रहे हैं उस समय उनका ख्याल कहाँ है? क्या वे इस पुस्तक के शब्दों द्वारा उनके अर्थों को अलग से अनुभव कर रहे है या उन्होंने उन अर्थों के अनुभवों में अपने आपको बिल्कुल खो दिया है?

आदर्श स्थिति यह है कि जहाँ वस्तु हो वहाँ स्व का ज्ञान भी बना रहे। अनुभवकर्त्ता के तटस्थ अनुभव की उपस्थिति भी आवश्यक है। इस विधि से अनुभव का आध्यात्मिक बोध बढ़ेगा। बाह्य वस्तु के अनुभव में आत्मा का आनन्द प्रकट हो सकेगा। पहले वस्तु के अनुभव से आत्मा की प्रकृति ढँक गई थी, अब वह अपने असली रूप में चमक सकेगी।

हमारी समस्त भौतिक सत्ता पर भी यह बात लागू होनी चाहिए। हम बाह्य जगत का अनुभव प्राप्त करेंगे ही क्योंकि यह जीवन का एक अंग है परन्तु आन्तरिक जीवन को उसका पूरक बनकर रहना चाहिए। इस तरह हम भौतिक जीवन का भरपूर आनन्द उठा पाएंगे। अपने आंतरिक आनन्द सागर की सत्ता से अनभिज्ञ हममें से अधिकांश लोग

पूर्णत: बहिर्मुख जीवन जीते जा रहे हैं। ध्यान का एक उद्देश्य यह भी है कि वह हमें बाह्य उलझनों से, किंचित काल के लिए ही सही, मुक्त करके अंतर्जगत की झाँकी दिखा दे परन्तु वह बाह्य जगत से भी हमारा संबंध बनाये रखे। बाह्य और आंतरिक जगत के बीच इस सम्बन्ध के प्रति सजगता प्रदान करके ध्यान आध्यांत्मिक आनन्द और शांति प्रदान करता है। यही हमें अनिवार्य स्वानुभूतिमूलक अंत:प्रकृति के प्रति जागरूक करता है।

ध्यान हमारी पूर्वार्जित सम्पत्ति है। इसका अनुभव हम सहज ही कर सकते हैं; पर वर्तमान जीवन पद्धति इसमें बाधक हो जाती है। अपनी अन्त:प्रकृति को न जानने के कारण हम एक तनावपूर्ण स्थिति में रहा करते हैं। हम जो हैं, और जो चाहते हैं, उसके बीच यदि ऐक्य स्थापित हो जाए, तब ध्यान सहज ही लग जायेगा।

दिन-रात जो तनाव हमारे जीवन में बढ़ते जा रहे हैं उसका कारण यह है कि हम अपने आंतरिक स्वभाव को नहीं जानते।

हम लोग जीवन में जो चाहते हैं और हम जो हैं तथा दोनों के बीच जो विरोध बना है, इससे जीवन में खींचातानी चलती रहती है। इस दूरी को, इस विरोध को अगर हम दूर कर दें तो ध्यान की अवस्था को सहज रूप से प्राप्त करने में हम लोग सफल हो सकते हैं।

जिस ज्ञान का अनुभव हमें होता है, वस्तुत: यह सापेक्ष और बौद्धिक ज्ञान है। इसमें जो सीमित तथ्य हुआ करते हैं, उनसे हम सिद्धांत स्थापित करते हैं। वैज्ञानिक, शिल्पी, दार्शनिक आदि के तर्क इसी प्रकार बौद्धिक मन से नि:सृत होते हैं। सबसे भ्रामक बात यह है कि हमारी मूल मान्यतायें ही अपूर्ण हैं। फलत: इस तरह के ज्ञान सदा ही खण्डित होते रहे हैं। उदाहरणार्थ– न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त को आइन्स्टाइन ने तोड़ा। यही दशा बुद्धि से उपजे ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र की है।

हम संवेगों द्वारा भी ज्ञान प्राप्त करते हैं। मानसिक स्तर पर भी सत्य का आभास पाने का अनुभव होता है। कुछ लोग इसको अन्तर्ज्ञान समझने की भूल करते हैं।

बौद्धिकता और संवेग से परे एक और ज्ञान है। यह ज्ञान ध्यान द्वारा प्राप्त होता है और सत्य के अधिक निकट है। यह वह सूक्ष्म

ज्ञान है जो स्थिति की सम्पूर्णता को देख सकता है। यह मन के उस अधि-चेतन भाग से आता है जो सामान्यत: हमारे लिए अज्ञात है। इस ज्ञान पर न तो बुद्धि का आवरण है, न संवेग का रंग।

ध्यान व्यक्तिगत प्रक्षेप पर निर्भर नहीं करता। ध्यान की अवस्था में मन के उच्चतर क्षेत्रों, विकसित चेतना तथा जाग्रत मन के सचेतन भागों के साथ सम्पर्क स्थापित होता है। इस सम्पर्क के फलस्वरूप साधक को उच्चतर मानसिक कम्पनों का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त होता है। ये सूक्ष्म उच्चतर कम्पन सदा ही बने रहते हैं, पर सामान्यत: उनका अनुभव नहीं हो पाता। कभी-कभी उनकी झाँकी सृजनात्मक प्रबोध आदि के रूप में यदा-कदा दीख जाती है। अपने ग्रन्थि-आक्रान्त, अशुद्ध मन के कारण हम इन सबसे अनभिज्ञ रहते हैं। ज्ञान के ये उच्चतर रूप हमें दैनिक जीवन की स्थूलता में निहित सत्य का दर्शन कराते हैं। जीवन के गूढ़तर तत्व ध्यान मे हमारे सम्मुख आ जाते हैं।

द्वितीय अध्याय

विज्ञान, आत्मा और ध्यान

विज्ञान और धर्म जो विपरीतधर्मी समझे जाते थे, अब समीप आते जा रहे हैं। यह हर्ष का विषय है कि विज्ञान में योग की प्रणालियों से लाभ उठाने के लिए अध्ययन हो रहे हैं और योग ने वैज्ञानिक रीति से अपनी बातें कहना शुरू कर दिया है। वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग भी योग-क्षेत्र में किया जाने लगा है। विज्ञान अब सिर्फ भौतिक सत्ता से ही सम्बन्धित न रहकर सत्ता के आध्यात्मिक पहलुओं को खोजने में अधिकाधिक सक्रिय हो गया है। आध्यात्मिक प्रगति के फलस्वरूप प्राप्त हुये शारीरिक उपफलों को बुद्धिवादी वर्ग के समक्ष प्रस्तुत करके विज्ञान अब अवश्य ही योग, धर्मों तथा आध्यात्मिक मार्गों की सम्भावनाओं तथा सत्य को उद्घाटित करेगा।

गत शताब्दी के अनेक उद्भट वैज्ञानिकों ने यह कहा था कि अनुसंधान के क्षेत्र में अब कुछ करने को बाकी नहीं रहा। लेकिन तभी आइन्सटाइन और फ्रायड आदि आए, जिन्होंने गवेषणा की और नई दिशाएँ दिखाईं। अब वैज्ञानिक इस बात के प्रति सतर्क हैं कि कहीं वे आत्मतुष्ट होकर न बैठ जाएँ। सिर्फ पचास वर्ष पूर्व फ्रायड ने निम्नतर मन के सम्बन्ध में अपनी खोज प्रकाशित की थी। संत-ऋषि उच्चतर मन की चर्चा न जाने कब से करते आये हैं। आश्चर्य है कि अभी तक क्यों नहीं इस पर शोध किया गया।

शरीर पर पड़ने वाले ध्यान के प्रभावों पर शोध करना आधुनिक विज्ञान का एक अतिमनोरंजक विषय माना जाता है। यद्यपि ये शोध अभी प्रारम्भिक अवस्था में ही हैं परन्तु इनसे शरीर वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक लोगों के लिए ध्यान की उपयोगिता का पता लगता है। विज्ञान लोगों को आध्यात्मिक पथगामी बनाने में सहायक

होगा, यह निश्चित है। अभी पुनर्निवेषण (बायोफीड बैक) जैसे यंत्र का उपयोग ध्यान की उच्चतर अवस्था प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है। आधुनिक मनोविज्ञान कई अर्थों में व्यक्ति के आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य से एक साथ सम्बन्ध रखता है। योग और मनोसंश्लेषण दोनों का उद्देश्य एक ही है— सम्पूर्ण सत्ता का एकीकरण, तदनन्तर आत्म-दर्शन या आत्मसाक्षात्कार।

जहाँ योग और विज्ञान समान धरातल पर कदम रख रहे हैं, अब हम उसकी चर्चा करेंगे।

हजारों वर्ष पूर्व के सांख्य-दर्शन तथा आधुनिक मनोविज्ञान में आश्चर्यजनक साम्य है। योग में मनुष्य की सम्पूर्ण प्रकृति–शारीरिक, मानसिक, संवेदनात्मक, चैत्य एवं आध्यात्मिक पहलुओं का महत्व है। योगाभ्यास से इनकी सुप्त क्षमताएँ विकसित होती हैं। जहाँ सभी पक्ष एकसूत्र होकर संपूर्ण व्यक्ति का परिचय दें, वहीं आध्यात्मिक क्षेत्र है।

सामान्यत: मनोविज्ञान (अपवाद स्वरूप मनोसंश्लेषण-प्रवर्तक रौबर्टो असागिओली को छोड़कर) एक सीमित दायरे मे ही कार्य करता है। उदाहरणार्थ–पाश्चात्य मनोविज्ञान के जन्मदाता फ्रायड की मान्यता थी कि मनुष्य की सर्व प्रमुख मनोवृत्ति है यौन तथा आत्म-सुरक्षा। यह मनोविज्ञान का अत्यन्त सीमित पक्ष है। तथापि अभी भी अनेक मनोविज्ञान इसी तथ्य को मानते आ रहे हैं, पर इसी समय जुंग ने जो प्रगतिशील विचार रखे उनके अनुसार मनुष्य की क्रियाएँ ऐसे गूढ़तर तथ्यों से प्रभावित हैं, जिनके विषय में अधिकांशत: वह अनभिज्ञ ही रहता है। सम्भवत: जंग ही ऐसा मनोवैज्ञानिक है जिसने मनोविज्ञान को मनुष्य की सत्ता के प्रति सम्पूर्ण अभिवृत्ति प्रदान की। हाल में ही उसके विचारों को गंभीरता से लिया जाने लगा है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में उसी के सिद्धान्तों के आधार पर अनेक आधुनिक विचारधाराएँ फूट पड़ी हैं, जैसे–विकास मनोविज्ञान, जेस्टाल्ट मनोविज्ञान, जीव मनोविज्ञान आदि। ये सभी यौगिक विचारधारा के समीप हैं और मनुष्य को बहुपक्ष सम्पन्न प्राणी मानती हैं। इनकी मान्यता है कि मनुष्य को समझने के लिए उसके सभी पक्षों पर ध्यान देना होगा। यदि उसका कोई भी पक्ष छूट जाए तो अधूरा चित्र ही सामने आएगा।

आधुनिक मनोविज्ञान मनुष्य की सुप्त सम्भावनाओं को विकसित करने की बात पर बहुत बल देता है। इसे 'आत्म कार्यान्वियन' कहा जाता है। यह है मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों का क्रमिक उद्घाटन एवं विकास। योग का उद्देश्य भी इसी प्रकार का है। पर आत्म कार्यान्वयन के बदले योग में होता है आत्मसाक्षात्कार। इसमें अपनी आन्तरिक प्रकृति और उसकी क्रियाओं के प्रति जागरूकता होती है। योग का अन्तिम उद्देश्य है मनुष्य की बीज शक्ति का चरमोत्कर्ष, बाह्य वातावरण तथा आंतरिक अस्तित्व के बीच सर्वोच्च समस्वरता। आधुनिक मनोविज्ञान में आत्मकार्यान्वित व्यक्ति वह है जिसने अपनी सभी सुप्त क्षमताओं को जगा लिया है, और जिसकी प्रतिक्रियाएँ अपने व्यक्तित्व तथा वातावरण के साथ सदा ही अनुकूलता रखती हैं। आधुनिक मनोविज्ञान तथा योग, दोनों ही क्रम-विकास पर बल देते हैं—कम पूर्णता से अधिक पूर्णता की ओर की यात्रा की बात करते हैं। ईश्वर और परम चेतना का मिलन ही योग का सर्वोच्च लक्ष्य है; मनोविज्ञान ने इस लक्ष्य की बात अभी नहीं कही है। पर कौन जानता है कि निकट भविष्य में उसे कौन सी अभिधारणा प्रस्तुत करनी है, हालाँकि मन:संश्लेषण का सिद्धान्त मानने वाले लोग कह ही चुके हैं कि आत्म-साक्षात्कार ही जीवन का अंतिम लक्ष्य है।

मनोविज्ञान की विगत मान्यता यह थी कि मनुष्य रूढ़ प्रवृत्तियों में मानसिक रूप से बँधा हुआ है। इन्हीं प्रवृत्तियों के साथ चलते जाना उसकी नियति है। मूलभूत आवश्यकताओं की निर्बाध तुष्टि उसके तनाव तथा असंतोष को कुछ काल के लिए कम कर देती है। आधुनिक मनोविज्ञान एवं योग मनुष्य के सर्वांगीण विकास पर जोर देना चाहते हैं ताकि वह इस तनाव और शरीर के क्षणिक तुष्टि के पुराने जाल से निकल सके और संतुष्टि के अधिक उन्नत रूपों की प्राप्ति हेतु अग्रसर हो। विकासशील व्यक्ति निम्नतर प्रवृत्तियों को छोड़ता जाएगा, क्योंकि उनसे कम सन्तोष मिलता है। योग तो यह पहले ही कह चुका है। आधुनिक मनोविज्ञान इस तथ्य से अधिकाधिक सहमति प्रकट करता जा रहा है।

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों की ध्यान के प्रति आस्था बढ़ती जा रही है। उन्होंने इसका व्यावहारिक अनुभव प्राप्त किया है और उस आधार

पर सामान्य मनुष्य की परिभाषा बदलने को प्रेरित हुए हैं। उन्होंने घोषित किया कि अधिकांश मनुष्य को वर्ग व्यवस्था की दासता के कारण जन्म से ही अपने को कुण्ठित करके रखना पड़ता है। उन्हें व्यक्तियों और वस्तुओं का परिचय अच्छा-बुरा, काला-सफेद, हिन्दू-मुसलमान कहकर दिया जाता है। अतः वे पूर्व निश्चित धारणा के अनुसार एक स्वचालित मशीन की तरह चलते रहते हैं। मनोविज्ञान का एक उद्देश्य है इस यंत्रवत् स्थिति से उन्हें उबारना।

आधुनिक विचारक, विशेषकर मनोवैज्ञानिक आज के असंयमित और प्रतिद्वंदितापूर्ण जीवन का घातक प्रभाव देखकर चिंतित हैं। मानसिक समस्यायें महामारी की तरह फैल रही हैं। वर्तमान स्थिति झेलने के लिए फौलादी मस्तिष्क की आवश्यकता है। यह भी जरूरी है कि मनुष्य स्वयं अपना मनोविश्लेषक हो। इसके लिए एक ही उपाय है—ध्यान।

ध्यान न तो निद्रा है, न सम्मोहन। यह इनसे परे एक अत्यन्त स्वस्थ स्थिति है जिसमें मनुष्य अपने अन्दर चल रहे तनावों आदि के प्रति सजग होकर उन्हें समय रहते दूर करने का अवसर पा जाता है। व्याधि दूर करने का यह सर्वोत्तम तरीका है। नित्य प्रातःकाल आधे घंटे का ध्यान ऐसी स्थिति ला देता है कि दिन भर के कार्यों की रूपरेखा ही बदल जाती है। आन्तरिक शान्ति और सन्तुलन का प्रभाव हर कार्य पर पड़ने लगता है। ध्यान से निराशावादिता, उदासी तथा तनाव आदि का निवारण होना अवश्यम्भावी है। मनुष्य की स्वाभाविक स्थिति आनन्द की है। नकारात्मक स्थितियों के अन्धकार को दूर कर स्वस्थ मनोभाव लाने का कार्य ध्यान द्वारा ही सम्भव हो पाता है।

मनुष्य की वर्तमान समस्या है परिवर्तनों के अनुरूप अपने को ढालते जाने की। प्रौद्योगिक समाज में परिवर्तन की गति इतनी तीव्रता से बढ़ रही कि मस्तिष्क उसका सरलता से अनुकरण नहीं कर पा रहा है। फलस्वरूप परिवर्तनों को न झेल सकने वाला मनुष्य असंतुलित हो उठता है। ध्यान इस सन्तुलन पर नियंत्रण रखता है।

अचेतन मन की आन्तरिक क्रियाओं का विस्तृत परिचय होना आवश्यक है, ताकि उन संकुचित भावों एवं भ्रांतियों को पकड़ा जा सके जो जीवन पर आधिपत्य जमाकर समस्या खड़ी कर देती हैं। साथ ही

उन क्षमताओं का भी पता लगना चाहिए जो हमें अधिकाधिक उपयोगी बना सकती हैं। यदि इन समस्याओं को ढूँढ न निकाला जाए तो हम इनके प्रति आयुपर्यन्त अनभिज्ञ रह जाएँगे और जीवन से असंतुष्ट बने रहेंगे। ध्यान इस अन्वेषण क्षेत्र में भी हमारी मदद करके हमें रचनात्मक जीवन जीने की सुविधा प्रदान करेगा।

पुर्नानिवेषण (Bio-feedback): योग की एक आधुनिक धारा—

यह पद्धति कुछ वर्षों से काम में लाई जा रही है। पर ध्यान में इसका उपयोग अभी ही शुरू हुआ है। इसका कार्य है— मस्तिष्क से निकलने वाली विद्युत धारा को नापना और नियन्त्रित करना। पहले, इस मानस तरंग और इसकी प्रकृति को समझना होगा। गत शताब्दी के अंतिम भाग में बन्दरों के मस्तिष्क पर शोध करते समय मानस तरंगों की उपस्थिति का पता चला था। इस शताब्दी के प्रारंभ में इस शोधकार्य का क्षेत्र मनुष्य तक पहुँचा और तरंगों की आवृत्ति, उनके वोल्टेज एवं आयाम में स्पष्ट विविधता दिखाई पड़ी। मानसिक रोगों के निवारण में इन मानस तरंगों के प्रभाव को उपयोग में लाने की कोशिश की जा रही है। **ये मानस तरंगें क्या हैं?** औषध विज्ञान शोधकर्ता निश्चित रूप से तो नहीं पर अनुमानत: इनके कारण और इनकी प्रकृति का विश्लेषण करते हैं। मस्तिष्क करोड़ों-करोड़ कोशाणुओं से बना है, जिन्हें स्नायु कोशिका कहते हैं। इन कोशाणु इकाइयों में परस्पर अनगिनत सम्बन्ध हैं। हम कह सकते हैं, प्रत्येक कोशाणु किसी न किसी तरह एक दूसरे से सम्बद्ध हैं। स्नायु तन्तु इन पेचीदा कोशिका परिपथों के साथ-साथ लगे रहते हैं। प्रत्येक स्नायु कोशिका में एक अक्ष तन्तु एवं अनेक द्रुमाष्म होते हैं। अक्षतन्तु संवेगों को ग्रहण करता है और दूसरी स्नायु कोशिकाओं को द्रुमाष्म के माध्यम से संवाद संचारित करता है। स्नायु संवेगों का संचारण तभी सम्भव है जब स्नायु कोशिका में विद्युत शक्ति एक विशेष मात्रा में विद्यमान रहे। इस पूर्व निश्चित स्तर में अचानक एक धड़कन होती है— इसे ही 'मानस तरंग' कहते हैं।

शोधकर्ताओं ने पता लगाया है कि मानस तरंगों की आवृत्ति, वोल्टेज एवं घनत्व पर व्यक्ति की स्थिति निर्भर करती है। सुविधा के लिए

तरंगों को चार प्रकारों में बाँट दिया गया है– बीटा, अल्फा, थीटा और डेल्टा। पाठक यह ध्यान में रखें कि मानस तरंग मन:स्थिति नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मन का परिचय देने वाले उपकरण हैं। यद्यपि इन तरंगों और मन:स्थिति के बीच के सम्बन्धों के बारे में बहुत कुछ जानना बाकी है, पर अब तक के ज्ञात तत्वों के आधार पर यह विवरण प्रस्तुत है :

बीटा तरंगें: मुख्यत: जाग्रत अवस्था में प्रतिदिन हमारे मस्तिष्क से विकीर्ण होती हैं। इनका सम्बन्ध बाह्य कार्यकलापों से है। बौद्धिक विचार, चिन्ता, इन्द्रिय ज्ञान आदि की स्थिति में ये तरंगें उत्सर्जित होती रहती हैं। इनका विस्तार लघु एवं इनकी आवृत्ति तीव्र होती है। इनके प्रति सेकेण्ड तेरह चक्र होते हैं।

अल्फा तरंगें: ये तरंगें ध्यान की मन्द अवस्था में स्वत: उठती हैं। इनका सम्बन्ध मस्तिष्क की निश्चिन्त, तनावशून्य एवं शांत स्थिति से है। इनका सम्बन्ध सृजनात्मकता से रहता है, अत: रचनात्मक क्रियाओं के समय ये तरंगें प्रचुरता से उत्सर्जित होती हैं। बौद्धिक मन और इन्द्रियों के चुप बैठने पर ही ये तरंगें उठती हैं। ध्यानावस्था में योगियों का अध्ययन करने से ये तथ्य सामने आये हैं। इनकी आवृत्ति की परिधि आठ से तेरह चक्र प्रति सेकेण्ड है।

थीटा तरंगें: इनका उत्सर्जन नींद की अवस्था में बहुतायत से होता है। इनका सम्बन्ध अचेतन मन से है। जब अचेतन के गहरे पूर्वांकन चेतना और जाग्रत अवस्था की सतहों पर उभरने लगते हैं, तब ये तरंगें उठती हैं। ये तरंगें गहन ध्यान, तीव्र सृजनात्मकता, आनन्द तथा इन्द्रियातीत अनुभूति की अवस्था में उठती हैं। कई बच्चों में जाग्रत अवस्था में ही इन तरंगों का उत्सर्जन होता है। पर वयस्कों में ऐसा बहुत कम होता है। इनकी आवृत्ति-परिधि चार से सात चक्र प्रति सेकेण्ड है।

डेल्टा तरंगें: इनका विस्तार गहन है, पर आवृत्ति चार चक्र प्रति सेकेण्ड है। इन तरंगों के विषय में कम ही जाना जा सका है। पर इनका सम्बन्ध स्वप्न रहित प्रगाढ़ निद्रा से है। इस स्थिति में ग्रहणशीलता बढ़ जाती है। अर्थात् गहरी नींद में टेप रेकार्ड की सहायता से ज्ञानार्जन किया जा सकता है। ज्ञानेन्द्रियों को लांघते हुए ज्ञान अचेतन मन में प्रवेश कर जाता है।

उपरोक्त वर्गीकरण अपरिवर्तनीय नहीं है। सिद्ध योगी या मानसिक क्रियाओं पर नियंत्रण रखने वाला व्यक्ति एक स्थिति से दूसरी स्थिति में इच्छानुसार आ सकता है। वह जाग्रत अवस्था से भी बीटा परिधि को पारकर अल्फा तरंगों का उत्सर्जन कर सकता है।

अंततः बीटा तरंगें शान्त हो जायेंगी और थीटा तरंगें आयेंगी। अगर नींद नहीं है तो गहरा ध्यान लग जाएगा। इस तरह वह डेल्टा तरंगों का भी उत्सर्जन कर सकता है। इससे ध्यान की उच्चतम अवस्था 'समाधि' प्राप्त हो सकती है।

इन तरंगों का स्वरूप परिचय इलेक्ट्रोइनसेफैलोग्राफ (E E G) नामक विद्युत उपकरण द्वारा पाया जा सकता है। यह एक विस्तारक प्रणाली है जो मस्तिष्क में होने वाली विद्युत क्रियाओं को संसूचित करती है। ये सूचनाएँ मस्तिष्क में लगे विद्युदग्र द्वारा ग्रहण कर ली जाती हैं। इनसे लगा 'पेन रेकार्डर'ग्राफ इन संसूचनाओं को अंकित करता जाता है। इसी यन्त्र से तरंगों के प्रकार का भी पता चल जाता है। तरंगों के आकार से व्यक्ति की मानसिक स्थिति ज्ञात होती है। इस प्रकार के यंत्रों का उपयोग अभी रोग निदान के लिए ही होता है। अभी ये जन-साधारण के उपयोग में आयें, इसका प्रश्न ही नहीं उठता है। पर अनेक यंत्र निर्माता इस दिशा में सक्रिय हैं कि कम मूल्य का ऐसा उपकरण तैयार हो, जो लोगों को आसानी से उपलब्ध हो सके। सबसे प्रचलित और सरल यन्त्र है—'हेड फोन', जिससे मानस तरंगों की क्रियाओं से सम्बन्धित शब्द सुनाई पड़ते हैं। एक दूसरा यन्त्र है जो विशेष प्रकार की मानस तरंग उठने पर विशेष ध्वनि करता है। इस ओर अभी और प्रगति होने की आशा है।

अब जानना यह है कि पुनर्निवेषण किस प्रकार ध्यान में सहायक होगा। अपने अन्दर उठने वाली मानस तरंगों की जानकारी रहने पर व्यक्ति उन्हें अपनी इच्छानुसार बदल सकता है। इस तरह मनःस्थिति भी बदल सकती है। यह तो सम्भव नहीं दिखता कि कोई पुनर्निवेषण यन्त्र उठाए और अपनी मनःस्थिति बदल ले। लेकिन अभ्यास से ध्यान की अवस्था प्राप्त की जा सकती है।

सचेतन रहकर किस तरह मानस तरंगों को बदला जा सकता है? शुरू में यह असंभव प्रतीत होता है, क्योंकि तरंग स्वयं एक मानसिक

क्रिया है। इसमें वही अभ्यास और धीरज चाहिए, जिसकी आवश्यकता जीवन के प्रत्येक कार्य में होती है। आधुनिक शोधों ने सिद्ध किया है कि शरीर की सभी क्रियाओं, जैसे– हृदय गति, श्वास प्रक्रिया आदि पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। युगों से योगी यही कहते आ रहे हैं। पर विज्ञान ने अब इसे गंभीरता से लेना शुरू किया है। इन क्रियाओं में व्यक्तिगत भिन्नताएँ रहेंगी। प्रत्येक व्यक्ति को अपने अनुरूप पद्धति चुन लेनी होगी।

पुनर्निवेषण यंत्र की आवश्यकता स्वाभाविक रूप से होनी नहीं चाहिये। लेकिन हममें कुछ लोग इतने संवेदनशील होते हैं जो यह भी नहीं बता पाते कि उनका तनाव बढ़ा या घटा। उनके लिये यह सहायक होगा। यद्यपि यह यंत्र अभी अपनी शैशवावस्था में है, पर इससे भविष्य को अनेक आशाएँ है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि ऐसे युवक-युवतियाँ जो अगोचर की झाँकी पाने के लिए नशा करते थे, अब इस पुनर्निवेषण यंत्र का उपयोग करने लगे हैं। इस यंत्र का उपयोग संसार में मन और चेतना का विकास करने में बहुत सहायक सिद्ध होगा।

ध्यान की स्थिति एवं तद्सदृश अन्य स्थितियाँ, जैसे–आत्मविस्मृति और सम्मोहन में उत्सर्जित मानस तरंगों के बीच क्या अन्तर है, यह जानने की उत्सुकता पाठकों को होगी। इनमें कहीं कोई सम्बन्ध नहीं है। निम्नतर स्थितियों में तरंगों पर व्यक्ति का वश नहीं होता। पर ध्यान की स्थिति में इन तरंगों पर साधक की जाग्रत चेतना का नियंत्रण रहता है।

प्रत्येक कोषाणु में अनन्त ज्ञान अंतर्विष्ट है–

वैज्ञानिकों ने अभी हाल ही में शरीर के कोषाणु की दुरूहता को स्वीकार किया है। कुछ ही वर्ष पूर्व वैज्ञानिक जीवन अणु (DNA) का एक प्रतिमान बना सके हैं। यह अणु संतान में माता-पिता की विशेषताएँ आरोपित करता है। यह शुक्र और रज में वर्तमान रहता है। इतना ही नहीं, यह शरीर के प्रत्येक कोषाणु में उपस्थित रहता है।

वैज्ञानिकों ने इसके रूपाकार की अनुकृति बनाकर इस बात की पुष्टि की है कि व्यक्ति के केशों के रंग, ऊँचाई, पैरों की माप और बचपन

स वयस्क होने तक का विकास का ढाँचा इसी के द्वारा तय होता है। अणु जीवन की रूपरेखा तैयार करता है। यद्यपि वातावरण, स्थितियाँ और हमारी पारस्परिक क्रियायें भी प्रभाव डालती हैं, पर जीवन के मूलरूप का निर्धारण इसी अणु द्वारा होता है और व्यक्ति उस पर चलने को बाध्य है।

हम देखते हैं कि यह वैज्ञानिक विचारधारा यौगिक दृष्टिकोण के करीब आती जा रही है। योग ने प्रत्येक अणु को चेतना-सम्पन्न माना है। इसका प्रत्यक्ष रूप व्यक्ति की बाह्य प्रकृति में देखने को मिलता है। मनुष्य की आदिम सत्ता कोषाणुओं की चेतना के अनुसार ही नियत और निर्देशित हुई। वैज्ञानिकों द्वारा अन्वेषित अणु के ढाँचे कोषाणु चेतना की इच्छा को कार्यान्वित करने वाले कार्यपालक मात्र हैं। लेकिन वैज्ञानिक जीवन अणु (DNA) के पीछे छिपे चेतना के सिद्धान्त को ही नहीं समझ पाते।

उदभट् विचारक आश्चर्यचकित होकर यह स्वीकार कर रहे हैं कि प्रत्येक कोषाणु अपने अन्दर क्रमिक विकास की विगत प्रक्रिया का सम्पूर्ण इतिहास विरासत में लिये चल रहा है। दूसरे शब्दों में व्यक्ति अपने अन्दर प्रत्येक अणु में अतीत की सारी स्मृतियाँ सुरक्षित रखता है। यह गाथा उस समय से प्रारम्भ होती है जब आदि जीव पंक से निकलने को सुगबुगा रहा था, जल में तैर रहा था, जल से थल की ओर रेंग रहा था, पेड़ों पर लटकने लगा था और मानव रूपाकृति के समीप आ रहा था। कुछ ही हजार वर्षों की तो बात है कि वह वर्तमान मानव स्वरूप पा सका है। माँ के गर्भ में ही उसके निर्माणाधीन शरीर के अणुओं में विगत विकास क्रम के सारे अनुभव संगृहीत हो गए हैं।

आध्यात्मिक विचारकों ने युगों से यही बात कही है कि अनन्त ज्ञान मनुष्य के अन्दर वर्तमान है। जो बाहर है, वह सब अन्दर है। मनुष्य विश्व का एक लघु संस्करण है। अपने अन्दर गोता लगाकर विगत का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इन तर्कातीत कथनों की सत्यता अब विज्ञान द्वारा भी प्रमाणित हो रही है। धर्म और विज्ञान कुछ ही वर्ष पूर्व तक एक-दूसरे से कितने भिन्न लगते थे! पर अब वे एक-दूसरे के निकट आते जा रहे हैं।

वैज्ञानिकों ने जीवन अणु (DNA) का नक्शा विद्युत सूक्ष्म दर्शक यंत्र से खींचा है। इसका दूसरा पग है जीवन अणु की अंतर्स्थित प्रकृति का पता लगाना। विज्ञान के लिये अभी यह संभव नहीं है क्योंकि यह व्यक्तिगत अनुभूति का विषय है। क्या यह कहना अत्युक्ति होगा कि ध्यान से ही जीवन अणु की गवेषणा सम्भव है ?

ध्यान का उद्देश्य ही है आन्तरिक प्रकृति का उद्घाटन। ध्यान विज्ञान के हाथों का एक आवश्यक उपकरण बन सकता है। जीवन-अणु के विश्लेषण या ऐसे ही किसी सूक्ष्म अन्वेषण के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है।

अहं वृत्ति—

मेरुदण्ड के सिरे पर जालवत क्रियाशील संस्थान अवस्थित है। वहाँ एक कपाट है जिसके द्वारा हमारे सचेतन, प्रत्यक्ष ज्ञान से प्राप्त सूचनाओं का नियंत्रण होता है। यह मस्तिष्क का वह हिस्सा है जो मनुष्य की गहरी चेतना के आयामों का नियमन करता है। जैसे— नींद की अवस्था, चेतना और परम चेतना की अवस्था इत्यादि। यह मस्तिष्क के लिए छिद्रान्वेषी का कार्य करता है, यानी बाह्य अनुभवों की छानबीन करके उन्हें अन्दर जाने देता है। कुछ लोग इसे अहं कहते हैं। मनोविज्ञान का मूल आधार यही है। इसकी क्रियाओं के कारण हम प्रत्यक्ष ज्ञान के थोड़े पहलुओं के प्रति ही सजग रहते हैं और मस्तिष्क में कौन सी सूक्ष्म बात कैसे पहुँच जाती है, पता भी नहीं चलता। वास्तव में यह मस्तिष्क का एक अनिवार्य अंग है। अगर यह न होता तो हम सूचनाओं की बाढ़ में डूब जाते। उदाहरणार्थ— जब हम कोई पत्र लिखते रहते हैं तो क्या लिखना है, इसी ओर हमारा मस्तिष्क सजग रहता है। पृष्ठ भूमि में होनेवाले ध्वनि, स्पर्श आदि ज्ञानेन्द्रियों के असंगत अनुभवों की तरफ हमारा ध्यान नहीं जाता, अन्यथा लिख पाना सम्भव नहीं होता।

यह व्यवस्था अहं की तरह कैसे काम करती है ? इस क्रियाशील संस्थान का जालीदार प्रहरी सूचनाओं को तभी अन्दर जाने देता है जब वह हमारे मानसिक प्रतिमान के अनुरूप हो। इसी रूप में यह अहं की तरह काम करता है। रुचि-अरुचि, भ्रांति, अन्तर्बाधा आदि के साथ

मिलकर यह व्यक्ति को अहंवादी प्रकृति का बना देता है और तब उन्हीं सूचनाओं से चेतना को भरता है जो व्यक्ति की रुचि और इच्छा के अनुरूप हैं। यही कारण है कि हम दुनिया को यथावत् नहीं देख पाते। बल्कि, उसमें अपने आस-पास की एक धुँधली तस्वीर ही देखते हैं।

रुचि-अरुचि, भय, भ्रान्ति तथा पूर्व धारणाओं को हटा दें तो संसार का हमें अधिक साफ दृश्य दिखाई पड़ेगा। अगर हमारा मस्तिष्क परेशानियों से मुक्त, तनावरहित और प्रेमपूर्ण है तो हम उसी की परछाइँ संसार में देखेंगे।

उच्चतम आध्यात्मिक स्तर में प्रेम की संवेगात्मकता समाप्त हो जाती है। इसमें प्रेम की अनुभूति का अतिक्रमण हो जाता है। अतः वह भी मन को नहीं ढँक पाता। चेतना प्रत्येक वस्तु से एकात्म बोध करती है और तब मस्तिष्क एवं वातावरण के बीच सम्बन्ध नहीं रहता। इस हालत में अहं की कोई उपयोगिता नहीं रह जाती है क्योंकि मस्तिष्क रुचि-अरुचि की परिधि से निकल जाता है। अब चेतना का केन्द्र आत्मा हो जाती है, न कि अहं।

मनशुद्धि योग का सामान्य उद्देश्य है, पर यही ध्यान का विशेष उद्देश्य है। इस तरह वर्तमान भ्रान्ति, भय और धारणाबद्ध मानसिक योजना को तोड़कर एक शुद्ध मानसिक योजना की स्थापना करना ही मूल उद्देश्य है।

विज्ञान और योग को एक-दूसरे से दूर रखने वाली बाधायें तेजी से टूट रही हैं। उनके बीच द्विभाजन समाप्तप्राय है। विज्ञान लोगों को आध्यात्मिक पथ पर चलने में सहयोग देने की सम्भावना व्यक्त कर रहा है और योग की मदद से मानव मन को सुचारु रूप से समझ कर सृष्टि के प्रति गहरी अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने की भी आशा प्रदान कर रहा है।

तृतीय अध्याय

ध्यान और स्वास्थ्य

ध्यान में जो शारीरिक और मानसिक विश्राम मिलता है वह हमें नींद में भी नहीं मिल पाता। अत: ध्यान द्वारा अनेक बीमारियाँ दूर की जा सकती हैं; अपूर्व स्वास्थ्य-लाभ किया जा सकता है। इस पर विचार-विमर्श करने के पूर्व हम शरीर और मस्तिष्क के बीच के आपसी सम्बन्ध को समझ लें। युगों से यह माना जाता रहा था कि शारीरिक व्याधि का मन से कोई वास्ता नहीं और मानसिक व्याधि का शरीर से कोई सम्बन्ध नहीं है। हाल ही में दोनों के बीच के घनिष्ठ आन्तरिक सम्बन्ध को मान्यता दी गयी है। वास्तव में ये दोनों मिलकर एक ही इकाई हैं। जैसे—मानसिक विश्राम से शरीर की थकान कम होती है और शारीरिक विश्राम से मस्तिष्क की। अत: यह स्पष्ट है कि किसी भी रोग का कारण निश्चित रूप से मन और शरीर दोनों ही से सम्बन्धित है और दोनों के संतुलित इलाज से ही रोग-निवारण सम्भव है।

दवाओं से जो उपचार होते हैं उनसे किसी अंग विशेष के रोग दूर हो सकते हैं। शरीर या मस्तिष्क के दूसरे अंगों पर उनका दुष्प्रभाव भी पड़ सकता है। पर ध्यान में सम्पूर्ण व्यक्तित्व को समेटा जाता है। रुग्ण व्यक्ति में ध्यान द्वारा वह क्षमता आ जाती है जिससे वह रोग से लड़ सकने में समर्थ हो जाता है। यह उपचार मन और शरीर से एक साथ सम्बन्ध रखेगा। लेकिन सबसे पहले तो ध्यान की विधि जान कर मन और शरीर पर नियंत्रण रखने की कला सीखनी होगी। अपनी आंतरिक क्रियाओं के सम्बन्ध में जानकर मनुष्य अपनी शक्तियों को आवश्यकता-नुसार दिशा प्रदान कर सकता है। आधुनिक व्यस्त मानव समाज जो अनेक शारीरिक एवं मानसिक व्याधियों का शिकार बना हुआ है, ध्यान की विधि द्वारा इनसे मुक्ति पा सकता है।

ध्यान का शरीर पर प्रभाव—

शारीरिक क्रिया-कलापों को नियंत्रित करने में ध्यान अत्यन्त प्रभावशाली है। यहाँ तक कि मनोवैज्ञानिक घटनाओं पर होने वाली शारीरिक प्रतिक्रियाओं को भी वह नियंत्रित कर लेता है। ध्यानावस्था में शरीर पर होने वाला सबसे गम्भीर परिवर्तन है–चयापचय की गति में ह्रास क्योंकि कार्बन-डाइआक्साइड की उत्पत्ति कम हो जाने से ऑक्सीजन की आवश्यकता घट जाती है। प्रयोगों से पता लगा है कि ऑक्सीजन व्यय में २०% तक कमी आ जाती है क्योंकि श्वसन की गति धीमी पड़ जाती है। स्नायु संस्थान पर नियंत्रण के कारण ही चयापचय की मात्रा कम होती है और यह नियंत्रण ध्यान से आता है।

रक्त चाप पर ध्यान का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। यह ध्यानावधि में और उसके बाद भी बहुत नीचे गिर जाता है। इसलिये उच्चरक्त-चाप से पीड़ित व्यक्तियों के लिये तो ध्यान विशेष लाभदायक उपचार है। हृदय गति भी अधिक स्वस्थ ढंग से चलने लगती है। ध्यान में रक्त प्रवाह भी बढ़ जाता है। इसे समझने के लिये हम स्वाधीन रूप से चलने वाले स्नायु संस्थान की ओर पुन: देखें। स्नायुओं के जाल रक्तवाही नाड़ियों को संकुचित करते हैं जिसके बाद रक्तसंचार होता है। जितना अधिक संकुचन होगा रक्त प्रवाह उतना ही कम होगा। ध्यान की अवस्था में अनुकम्पी स्नायु संस्थान के कार्यों की गति धीमी हो जाती है, स्वभावत: रक्त संचार में निर्बाधता बढ़ जाती है अर्थात गति बढ़ जाती है।

साधक के लिए यह बढ़ा हुआ रक्त संचार अत्यन्त लाभदायक है। जब आक्सीजन की कमी हो जाती है तब दुग्धलवण नाम का एक स्राव माँसपेशियों से प्रारम्भ होता है। माँसपेशियाँ जितनी अधिक क्रियाशील होती हैं इसका स्रवण, संचयन उतना ही अधिक होता है क्योंकि आक्सीजन से प्राप्त शक्ति से अधिक शक्ति मांसपेशियाँ खर्च कर देती हैं। दुग्धलवण शक्ति की इस कमी को पूरा करता है। विश्राम के समय दुग्धलवण अन्य तत्वों में धीरे-धीरे बदलता है क्योंकि आक्सीजन मांसपेशियों को प्राप्त होने लगता है। ध्यान में बढ़ते हुए रक्त संचार के फलस्वरूप मांसपेशियों को अधिक आक्सीजन मिलना निश्चित है अत: दुग्धलवण का शीघ्रता से क्षय होने लगता है।

ध्यान में आक्सीजन की प्राप्ति वास्तव में कम होती है, पर मांस-पेशियों को आक्सीजन अधिक मिलती है। तब यह दुग्धलवण को तोड़ देती है। साथ ही, उपचयन की क्रिया में कोषाणु कम आक्सीजन ग्रहण करते हैं। अनुकम्पी स्नायु-संस्थान दुग्ध-लवण की उत्पत्ति करता है। ध्यान में यह स्नायु संस्थान निष्क्रिय सा हो जाता है, अतः दुग्ध-लवणं की उत्पत्ति कम हो जाती है।

दुग्धलवण की उत्पत्ति को इतना महत्व इसलिए दिया जा रहा है क्योंकि औषध विज्ञान के शोधों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि चिन्ता, मानसिक रोग, तनाव आदि से पीड़ित लोगों में, शांत स्थिति में रहने वाले लोगों की अपेक्षा इसकी मात्रा ज्यादा पायी जाती है। दुग्धलवण को जिस व्यक्ति के शरीर में बाहर से डाला गया, वह चिन्ताग्रस्त हो उठा। उच्च रक्तचाप वाले व्यक्ति में दुग्धलवण की मात्रा ज्यादा रहती है।

दुग्धलवण की मात्रा कम करने का सर्वोत्तम उपाय है ध्यान। इससे रक्तचाप स्वतः स्वाभाविक होकर मानसिक स्थिति शांत हो जायेगी। चिन्ता स्वयं अनेक शारीरिक एवं मानसिक रोगों का मूल कारण है। अत: रोग मुक्ति के अनेकों प्रचलित उपायों में ध्यान सर्वोत्तम उपाय है। इससे अन्तर्निहित कारणों का निदान होता है, मात्र ऊपरी लक्षणों का नहीं।

इन शारीरिक परिवर्तनों के साथ निद्रा और सम्मोहन का क्या साम्य है? कहना चाहिये कि कोई साम्य नहीं; क्योंकि सम्मोहन में उपचयन की मात्रा में कोई अन्तर नहीं आता। निद्रा में कुछ घंटों के बाद शारीरिक परिवर्तन प्रारम्भ होते हैं। निद्रावस्था में कार्बन डाइआक्साइड का विशेष संचयन रक्त में पाया जाता है। ध्यानावस्था में रक्त में आक्सीजन तथा कार्बन डाइआक्साइड का अनुपात निरन्तर एक समान बना रहता है।

संघर्ष अथवा पलायन के हेतु शरीर का रक्षा यंत्र—

शरीर में संघर्ष, पलायन एवं रक्षा का भार अनुकम्पी स्नायु संस्थान और ऐड्रेनल ग्रन्थियों पर है। ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। तनाव, भय, विपत्ति आदि की स्थिति में एड्रेनल ग्रन्थि एक रस स्रवित

करती है जिसे एड्रेनेलिन कहते हैं। यह रस शरीर को संघर्ष या पलायन के लिये तैयार करता है। यह हृदय गति, श्वसन गति एवं इन्द्रियों की ग्रहणशीलता को बढ़ाकर तथा पाचन क्रिया को रोक कर सारी शक्ति एक ओर लगा देता है, ताकि व्यक्ति इस शक्ति से अचानक आये हुए खतरे का सामना कर सके। जो विपत्तियाँ देर तक ठहरने वाली हैं उनसे सामना करने के लिये अनुकम्पी स्नायु संस्थान ही क्रियाशील रहता है और वह शरीर को अधिकाधिक गतिशील बनाये रखता है। सामान्य स्थिति में शरीर की क्रियायें सहज ढंग से चलती है।

आधुनिक जीवन पद्धति इतनी प्रतिद्वन्दिता और कठिनाइयों से भरी हुई है कि अधिकांश लोगों को सदा ही संघर्ष अथवा पलायन के लिये तनावयुक्त स्थिति में रहना पड़ता है। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में विपत्तियों की जड़ें फैली हुई हैं। असंतोष और क्षोभ की स्थिति में रहते-रहते व्यक्ति प्रतिरोध की क्षमता भी खो बैठता है। तब उसमें कुछ अस्वाभाविक आदतें घर कर लेती हैं, जैसे– नाखून कुतरना, मांसपेशियाँ को तानना या व्यर्थ आँखें झपकाना, पैर हिलाना इत्यादि। ये क्रियायें निर्दोष दिखती हैं परन्तु इनका कारण मानसिक तनाव ही है। ये क्रियायें इतने सहज ढंग से होती हैं कि इन्हें करने वाले को भी पता नहीं चलता।

ये असंगत और नगण्य सी क्रियायें मन:शारीरिक व्याधियों की पूर्व-सूचना देती हैं। यदि जाँचा जाये तो पता लगेगा कि ऐसे व्यक्तियों की हृदयगति, श्वसन क्रिया आदि में एक ऐसी अस्वाभाविकता है जो धीरे-धीरे उन्हें रक्तचाप, अलसर, मधुमेह, थ्रोमबोसिस जैसे घातक रोगों की ओर ले जा रही होती है।

इन्हें रोकने और इनसे मुक्ति पाने का एक मात्र और निश्चित उपाय है– प्रतिदिन सम्पूर्ण शरीर व मन को पूरी तरह नियत विश्राम देना। निद्रा विश्राम की एक स्थिति है। पर कुछ लोग इतने तनावपूर्ण होते हैं कि नींद में भी तनावरहित नहीं हो पाते। एड्रेनल तथा अनुकम्पी स्नायु संस्थान के अतिशय उपयोग से जो क्षय होता है उसे निद्रा पर्याप्त रूप से पूरा नहीं कर पाती। गंभीर शिथिलीकरण के बाद ही शरीर की आंतरिक क्रियाएँ सामान्य हो पाती हैं। ध्यान में यह संभव है। एक अर्थ में ध्यान ऐड्रेनल ग्रंथि तथा अनुकम्पी स्नायु संस्थान का प्रति संतुलक है।

यह मनुष्य के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का सर्वोत्तम साधन है ।

केवल शिथिलीकरण की ही नहीं, अपने वातावरण के प्रति अपनी प्रतिक्रिया बदलने की भी कला हम सीखें। वातावरण से भीति नहीं, प्रीति रखकर ही हम आनन्द पा सकते हैं। शरीर एवं मन की व्यवस्था में हमें नये कार्यक्रम लागू करने होंगे।

मस्तिष्क का मुख्य भाग मस्तकदण्ड के शीर्ष पर अवस्थित है। इसका मुख्य कार्य है ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त संवादों को मस्तिष्क में संचित पूर्व अनुभवों से मिलाना। यदि अनुभव नये हैं और मस्तिष्क की धारणाओं से मेल नहीं खाते तो मस्तिष्क का यह भाग उनमें संवेगों का रंग-रस डाल देता है। फलस्वरूप एड्रेनल से स्राव अधिक होता है और हममें क्रोध या विपत्ति संरक्षण सूचक प्रतिक्रियाएँ होने लगती हैं। यह सारे शरीर में तनाव भर देता है। इससे रक्त प्रवाह और श्वसन क्रिया तीव्र हो जाती हैं। यह स्थिति बार-बार मनुष्य को रोग-पथ पर खींच ले जाती है।

मस्तिष्क के इसी संस्थान का एक हिस्सा जिसे पटीय क्षेत्र (septal region) कहते हैं, दूसरी दिशा में कार्य करता है। यह हमारी संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं को घटा कर तनाव कम कर देता है। ऐसे में मन और शरीर को शिथिलता की अनुभूति होती है। ध्यान द्वारा जीवन भर हम पटीय क्षेत्र की क्रिया को लिम्बिक व्यवस्था की बागडोर थमाये रख सकते हैं। इन अवस्थाओं में हम निश्चिन्तता की स्थिति में रहते हैं— आलस्य में नहीं। हम अधिक दक्षता से कार्य कर सकते हैं।

जो निश्चिन्त, आनन्दमय जीवन की आकांक्षा रखते हैं, उन्हें दूसरे का नहीं, अपना मन बदलना है। फलस्वरूप बदले हुए मन का प्रकटीकरण स्वस्थ और आनन्दमय जीवन में होगा और इसका प्रभाव जगत पर भी पड़ेगा। बिना मन को बदले संसार में सुख खोजना मृगतृष्णा है।

यदि रोग मुक्त स्वस्थ जीवन चाहिये तो आप ध्यान करें और अपने मन को एक नई दिशा दें। भूतकाल से लगाव, वर्तमान से असन्तुष्टि और भविष्य की चिन्ता ही दुःख का कारण हैं। तो क्यों नहीं हम ध्यान द्वारा कष्ट से मुक्ति पाने के लिए अपनी मानसिक व्यवस्था में परिवर्तन लायें और जीवन की अप्रसन्नता के मूल कारण को ही समाप्त कर दें!

चतुर्थ अध्याय

योग का अतीन्द्रिय शरीरविज्ञान

मानव अस्तित्व का अतीन्द्रिय पक्ष सामान्य जन को उलझन में डाल देता है। इसका एक कारण यह भी है कि इसकी सुगम व्याख्या उपलब्ध नहीं है। यह खुशी की बात है कि अनेक मूर्धन्य वैज्ञानिक अपने शोध कार्यों के क्रम में इस क्षेत्र की ओर मुड़े हैं। उन्होंने इसका विवरण अपने ढंग से देने की चेष्टा की है। हमें विश्वास है कि वह दिन अब निकट है जब आधिभौतिक बातें मनुष्य के सामान्य ज्ञान का एक अंग बन जायेंगी। तब सब लोंग आधिभौतिक जगत का दर्शन कर पायेंगे। संसार में ऐसी बहुत सी अनुसंधान-संस्थाएँ हैं जो विभिन्न वैज्ञानिक यंत्रों के द्वारा इस पर शोध कार्य कर रही हैं यद्यपि वे कार्य अभी प्रारम्भिक अवस्था में हैं। इस दिशा में अभी बहुत कुछ होना बाकी है।

योग पद्धति की एक मूल आधार मान्यता यह है कि समष्टि अनेक सूक्ष्म स्तरों पर अवस्थित है। पार्थिव जगत में रहने वाला प्रत्येक पदार्थ एवं प्राणी तदनुरूप विभिन्न सूक्ष्म स्तरों पर भी विद्यमान है। ठोस पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों के जीवन और कार्यक्रम सूक्ष्म स्तरों में रहने वालों से बहुत समान हैं या मिलते-जुलते हैं।

कहा जाता है कि पदार्थ (जो प्रोटोनों, एलेक्ट्रोनों तथा अणुओं से से भी छोटे अंशों से बना है) के प्रकम्प की गति प्रकाश की गति से भी तीव्र है तथा इसकी प्रकृति अतीन्द्रिय है। कुछ स्तर तो अतीन्द्रिय से भी सूक्ष्म हैं पर उन्हें अभी पदार्थ विज्ञान की शब्दावली में वर्णित नहीं किया जा सकता है। इनमें दो उच्च स्तर हैं— मानसिक स्तर और कारण शरीर के स्तर। इनकी अनुभूति ध्यान की उस अवस्था में ही सम्भव है जब मनुष्य अपने अस्तित्व के सभी स्तरों को पार करके समाधि में प्रवेश करने वाला होता है।

भौतिक जगत के ठीक ऊपर अतीन्द्रिय जगत है। इसकी अनेक चीजें भौतिक जगत से साम्य रखती हैं, इसीलिये बहुत लोगों को अतीन्द्रिय अनुभव आसानी से प्राप्त हो जाते हैं। ऐसा अक्सर निद्रा की स्थिति में हुआ करता है। इन अतीन्द्रिय घटनाओं का तमाशा कुछ हानिकारक द्रव्यों (दवाइयों) के सेवन से देखने को मिलता है। अतीन्द्रिय जागृति का आधार हमारी अन्तर्प्रज्ञा है।

प्राचीन तंत्र-शास्त्र पर आधारित कुंडलिनी योग प्रणाली में ऐसी बहुत सी विधियाँ बतलायी गयी हैं जिनके द्वारा नियंत्रित ढंग से साधकों को बहुत तरह के सूक्ष्म अतीन्द्रिय अनुभव कराये जा सकते है। साधना को गंभीरता से करने वाले साधक के लिए यह बात महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि यह उसका लक्ष्य नहीं होता। सच्चे साधक का लक्ष्य आध्यात्मिक जागृति या आत्म-साक्षात्कार होता है तथापि यह एक ऐसा स्तर है जिसे प्रत्येक साधक को पार करना ही पड़ता है।

कुंडलिनी योग के अनेक अभ्यासों में अतीन्द्रिय क्षेत्र की घटनाओं का पर्यवेक्षण करना आवश्यक होता है। इन क्रियाओं में उन अतीन्द्रिय सूक्ष्म केन्द्रों का दर्शन करना पड़ता है जिन्हें चक्र कहते हैं। ये चक्र मनुष्य के सूक्ष्म शरीर में विद्यमान हैं। साथ ही, सूक्ष्म शक्ति को भी देखना पड़ता है जो इन सूक्ष्म केन्द्रों को मिलाने वाली नाड़ियों द्वारा प्रभावित होती है। इन अतीन्द्रिय घटनाओं को सामान्य व्यक्ति स्वेच्छा से नहीं देख सकता इसीलिये कुण्डलिनी-योग के अभ्यास में साधक को अपनी चेतना को विशिष्ट आधिभौतिक केन्द्रों तथा नाड़ियों के पथ पर चलाने का आदेश मिलता है जहाँ उसे सूक्ष्म घटनाओं और दृश्यों के अनुभव होते हैं। ये केन्द्र एक दूसरे से सम्बद्ध हैं और साधक उनका प्रवर्तन अपनी यात्रा क्रम में करता जाता है।

मनुष्य के अतीन्द्रिय शरीर के विभिन्न केन्द्रों तथा शक्तिपथों का उल्लेख अब किया जायेगा।

सूक्ष्म केन्द्र

यद्यपि अतीन्द्रिय केन्द्र या चक्र अनेक हैं पर योगाभ्यास के लिए ग्यारह ही महत्वपूर्ण हैं। इनमें आठ प्रधान चक्र सुषुम्ना नाड़ी क्षेत्र में

अवस्थित हैं और बाकी तीन चक्र सहायक हैं जो अन्य चक्रों को उत्तेजित करने का कार्य करते हैं ।

निम्नांकित विवरण में विभिन्न यौगिक चक्रों के नाम, स्थिति, प्रकृति, मन्त्र, वाहन तथा अन्य अनुभवों का वर्णन किया गया है । इस भौतिक शरीर में उनकी स्थिति और सम्बन्धित भाग का भी निर्देश किया गया है जिससे योगाभ्यास करते समय सही-सही स्थान पर ध्यान किया जा सके ।

मूलाधार: मूल+आधार=मूलाधार । मूलाधार चक्रों में निम्नस्थ है और मूल केन्द्र माना जाता है । यह प्रकृति के जड़ तत्व से सम्बन्धित है । इसे मनुष्य का आदिम शक्ति पीठ कहा जाता है । इसे ही कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं । यह मनुष्य की काम (यौन) शक्ति और आध्यात्मिक शक्ति का केन्द्र है ।

मूलाधार चक्र का दर्शन चतुष्दल रक्त कमल के रूप में होता है । इन दलों पर संस्कृत के ये चार मंत्र काले रंग में अंकित होते हैं– वं, शं, षं, सं । कमल के केन्द्र में अधोमुखी समान भुजा वाला त्रिकोण है । इस त्रिकोण में धूम्ररंग का शिवलिंग अवस्थित है जिसे एक सुनहले सर्प ने साढ़े तीन फेरे में लपेट रखा है ।

मूलाधार चक्र के स्वामी सृष्टि कर्त्ता ब्रह्मा हैं और अपनी शक्ति डाकिनी के साथ निवास करते हैं । डाकिनी शक्ति शरीर के त्वचा तत्त्व का नियंत्रण करती है । इस चक्र का बीज मंत्र 'लं' है और इसका वाहन है हाथी, जो सम्पूर्ण पृथ्वी तत्व की गुरुता का प्रतीक है । मूलाधार चक्र का सबसे अधिक महत्पूर्ण पक्ष यह है कि यह मनुष्य की आध्यात्मिक शक्ति का मूल केन्द्र है । इसे एक कुण्डलीबद्ध सर्प के रूप में माना जाता है जो आध्यात्मिक जागरण के समय सुषुम्ना नाड़ी के रास्ते से ऊपर उठता है ।

मूलाधार चक्र की स्थिति इस भौतिक शरीर में, स्त्री और पुरुष में अलग-अलग होती है । पुरुषों में यह मूत्रेन्द्रिय और मलद्वार के बीच स्थित है और स्त्रियों में गर्भाशय और योनिमार्ग के बीच स्थित हैं ।

स्वाधिष्ठान : स्व+अधिष्ठान=स्वाधिष्ठान । स्वाधिष्ठान का शाब्दिक अर्थ है 'अपना निवास' । यह दूसरा चक्र है जिसका सम्बन्ध अचेतन मन

में संचित सुदूर संस्कारों से है। यह उन संवेगों और मूल प्रवृत्तियों का मूल केन्द्र है जो आधुनिक मनुष्य के लिये बड़ी दु:खद और भ्रामक सिद्ध हो रही हैं।

यह चक्र सिंदूरी रंग के षट्दलीय कमल के रूप में दृष्टिगोचर होता है। इस पर संस्कृत के ये मंत्र लिखे होते हैं– बं, भं, मं, यं, रं, लं। कमल के मध्य में रजत वर्ण (सफेद) का धवल अर्द्धचन्द्र विराजमान है। साथ ही चक्र का बीज मंत्र 'वं' काले अक्षरों में लिखा हुआ है। स्वाधिष्ठान चक्र के अधिपति जगतपालक विष्णु भगवान हैं और स्वामिनी हैं भगवती राकिनी जिनका नियंत्रण शरीर के रक्त प्रवाह पर है। इस चक्र में निद्रा संवेदना ही मुख्य है। इससे प्रजनन तथा मल-मूत्र त्याग करनेवाले अंग सम्बन्धित हैं। इसका केन्द्र बिन्दु है जघन अस्थि। अधिकांशत: यह मेरुदण्ड के समीप दिखाई पड़ता है। परन्तु अभ्यास से शरीर के अग्रभाग में भी इसका अनुभव किया जा सकता है।

मणिपुर : मणि + पुर = मणिपुर। मणिपुर का शब्दार्थ है मणियों का नगर। यह ताप का केन्द्र है। यह शक्ति से सम्बन्धित है और इसका प्रतीक अत्यन्त क्रोधी और आक्रामक पशु मेष है। सर्व संहारक रुद्र इसके अधिपति हैं और मांस-मज्जा तत्व पर नियंत्रण रखने वाली देवी लाकिनी इसकी स्वामिनी हैं।

मणिपुर चक्र दशदलीय पीत कमल के रूप में दिखाई पड़ता है जिस पर संस्कृत के ये मंत्र लिखे हुए हैं– डं, ढं, णं, तं, थं, दं, धं, नं, पं, फं। कमल के मध्य में लाल त्रिकोण पर बीज मंत्र लिखा हुआ है 'रं'। इस भौतिक शरीर में ध्यान के दृष्टिकोण से मणिपुर चक्र नाभि केन्द्र के पास होता है। इसका अनुभव साधारणत: रीढ़ की हड्डी में नाभि केन्द्र के पास होता है। पर कुछ लोगों को शरीर के अग्रभाग में इसकी अनुभूति हो जाती है।

अनाहत: अना + आहत या बिना आघात = अनाहत। यह वह चक्र है जहां उच्च ध्यान की स्थिति में साधक को अतीन्द्रिय स्वर सुनाई पड़ते हैं। इन्हें अनाहत इसलिये कहा जाता है कि ये भौतिक-घर्षण से उत्पन्न नहीं होते। सभी संवेगों का मूल हृदय ही अनाहत का केन्द्र है, जहाँ ईश्वरीय तथा मानवीय प्रेम की चरम अभिव्यक्ति दिव्यता में हो सकती है।

अनाहत का दर्शन द्वादश दलीय नील कमल के रूप में होता है जिस पर संस्कृत के ये मन्त्र अंकित हैं– कं, खं, गं, घं, ङं, चं, छं, जं, झं, ञं टं, ठं। मध्य में दो त्रिकोण मिलकर एक-दूसरे को काटते हैं और षट्कोण बनाते हैं जो सितारे की तरह दिखता है। उसके बीच में 'यं' लिखा होता है जो वायु तत्व का प्रतीक है। अनाहत का प्रतीक एक द्रुतगामी हिरण होता है। इसके अधिपति जगत में सर्वव्याप्त ईश हैं और शरीर की मांसलता की नियंत्रिका देवी काकिनी इसकी स्वामिनी हैं।

भौतिक शरीर में अनाहत चक्र हृदय क्षेत्र में छाती की हड्डियों के पीछे अवस्थित है। यह मेरुदण्ड में और सीने के सामने के आंतरिक भाग में भी अनुभूत होता है।

विशुद्धि : विशुद्धि चक्र पवित्रीकरण का केन्द्र है। लोगों की ऐसी मान्यता है कि इसका प्रभाव अमृत के सदृश हो सकता है अथवा विष के सदृश। यह नील-लोहित रंग वाले सोलह दल वाले कमल के रूप में दिखाई पड़ता है जिस पर ये मंत्र लिखे होते हैं– अं, आं, इं, ईं, उं, ऊं, ऋं, ॠं, लृं, लॄं, एं, ऐं, ओं, औं, अं, अः। कमल के मध्य में एक वृत्त है जिस पर इसका बीज मंत्र 'हं' लिखा होता है। इस चक्र का प्रतीक हाथी है जो आकाश तत्व का प्रतीक है और इसके अधिपति हैं– शिव-पार्वती या अर्ध-नारीश्वर। इस विशुद्धि चक्र की स्वामिनी हैं अस्थि नियंत्रिका देवी शाकिनी।

विशुद्धि चक्र शरीर के कंठ (टेंटुआ) में स्थित है। इसका अनुभव मेरुदण्ड के बीच कंठ क्षेत्र में होता है। इसमें शीतल अमृत की बूंदों की अनुभूति के साथ एक आनन्ददायक मदमत्तता सी आती है।

आज्ञा चक्र : आज्ञा चक्र को भगवान शिव का तीसरा नेत्र कहा जाता है। यह गुरु चक्र भी कहा जाता है क्योंकि यहीं से आदेश और नियंत्रण संचालित होता है। अतीन्द्रिय शरीर में आज्ञा वह केन्द्र बिन्दु है जहाँ बाहरी संवाद प्राप्त किये जाते हैं। साधना की उच्चतर स्थिति में इसी केन्द्र के द्वारा शिष्य गुरु के सूक्ष्म आदेशों को प्राप्त करता है। यह अन्तर्प्रज्ञा का नेत्र है। जिसने इसको जगा लिया है वह भौतिक और अतीन्द्रिय दोनों ही स्तरों पर होने वाली घटनाओं को देख सकता है। आज्ञाचक्र ज्ञान का केन्द्र माना जाता है।

आज्ञा चक्र को रजत नील द्विदलीय कमल के रूप में देखा जा सकता है, जिस पर हं और क्षं मन्त्र लिखे होते हैं। इस कमल के मध्य में पीले रंग में 'ॐ' बीज मंत्र लिखा होता है। तीन लाल रेखायें ऊपर से नीचे की ओर खिंची होती हैं और श्वेत अर्ध चन्द्र शीर्ष पर स्थित होता है। आज्ञा चक्र के देव अमूर्त चेतना स्वरूप परम शिव हैं और स्वामिनी हैं सूक्ष्म मन की-नियंत्रिका देवी हाकिनी।

इस भौतिक शरीर में आज्ञा चक्र की स्थिति भ्रूमध्य के ठीक पीछे मेरुदण्ड के सबसे ऊपरी भाग में है। इसमें ध्यान करने से समय और दूरी से परे निराकार जगत में संचरण करने की अनुभूति होती है।

बिन्दु : यह चन्द्र चक्र है जो चंद्र तत्व से सम्बन्धित है। बिन्दु चक्र में ध्यान करने से नाद की अनुभूति होती है। अतीन्द्रिय स्वरों की स्थिति यहीं पर है। योग्य साधक ध्यान की स्थिति में इन स्वरों को सुन सकते हैं। चाँदनी रात में अर्द्ध-चन्द्र की तरह इसका दर्शन होता है। यह कुण्डलिनी योग का बहुत ही महत्वपूर्ण चक्र है।

इसका शारीरिक केन्द्र बिन्दु मस्तक का वह पिछला भाग है जहाँ हिन्दू लोग चोटी रखते हैं।

सहस्रार : यह सर्वोच्च अतीन्द्रिय केन्द्र है। इसे अतीन्द्रिय और आध्यात्मिक क्षेत्रों के बीच की दहलीज कहा जा सकता है। कहा जाता है कि सहस्रार में सभी चक्र समाहित हैं। इसका विस्तार अनन्त है। यह एक वृहद स्तूप की तरह है जिसके अन्दर सभी अतीन्द्रिय सत्ताएँ निवास करती हैं।

सहस्र दलयुक्त ज्योतिर्मय रक्त कमल के रूप में इसका दर्शन होता है जिस पर संस्कृत के सभी वर्ण बीस-बीस बार लिखे होते हैं। इसके मध्य में ज्योतिर्मय शिवलिंग अवस्थित है।

भौतिक शरीर में यह मस्तिष्क के शीर्ष पर स्थित है। यहीं से अपनी अन्तर्दृष्टि की क्षमतानुसार इसके चतुर्दिक प्रसार की अनुभूति की जा सकती है।

ललना : ललना चक्र मुख्य चक्र नहीं है तथापि कुण्डलिनी चक्र के साधकों के लिये इसकी महत्वपूर्ण स्थिति है। यह टांसिल की जड़ के पास अवस्थित है जहाँ से अमृत की बूंदें चक्र पर गिरती हैं।

भ्रूमध्य : यह अपने आप में चक्र नहीं है। यह आज्ञा चक्र का केन्द्र बिन्दु है। इसकी स्थिति दोनों भौहों के बीच है।

अज्ञात बिन्दु : यह भी चक्र नहीं है परन्तु केन्द्र बिन्दु है। इसकी स्थिति सिर के मध्य में कर्ण रन्ध्रों के बीच है।

चिदाकाश : चित + आकाश = चिदाकाश या अन्त:करण का आकाश। इसका अर्थ है अंतरिक्ष का ज्ञान। यह वह आकाश है जहाँ सभी अतीन्द्रिय घटनायें देखी जा सकती हैं। ललाट के पीछे घोर कालिमा युक्त कक्ष के रूप में इसकी अनुभूति की जाती है। इस कक्ष के मध्य भाग में सतह के मध्य एक छिद्र है जिससे होकर सुषुम्ना नाड़ी नीचे की तरफ जाती है।

हृदयाकाश : हृदय स्थित आकाश प्रदेश को हृदयाकाश कहते हैं। छाती के मध्य इसकी स्थिति मानी जाती है।

सूक्ष्म पथ और नाड़ियाँ

नाड़ी का शाब्दिक अर्थ है बहाव या धारा। प्राचीन शास्त्रों में लिखा है कि मनुष्य के अतीन्द्रिय शरीर में बहत्तर हजार नाड़ियाँ हैं। जिनकी अन्तर्दृष्टि जागृत हो चुकी है उन्हें ये नाड़ियाँ प्रकाश-किरणों के रूप में दिखाई पड़ती हैं। ये नाड़ियाँ सूक्ष्म शरीर में विभिन्न चक्रों और अतीन्द्रिय केन्द्रों को एक-दूसरे से जोड़ती हैं। साधकों के लिए अभ्यास के दृष्टिकोण से ये नाड़ियाँ कुछ महत्वपूर्ण हैं। कुण्डलिनी योग के अभ्यास में प्राय: साधकों को उनकी चेतना की जागृति के समय सर्प, अमृत, बाण, त्रिशूल या कमल की कली के रूप में आध्यात्मिक शक्ति इन नाड़ी पथों में प्रवाहित होती हुई दृष्टिगोचर होती है। इन नाड़ियों के अतीन्द्रिय पथों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

सुषुम्ना : यह अतीन्द्रिय शरीर की सर्व प्रधान नाड़ी है। यह मनुष्य शरीर में सबसे महत्वपूर्ण अतीन्द्रिय पथ है। इसकी जड़ मूलाधार चक्र में है। मूलाधार से सुषुम्ना किंचित ऊपर स्वाधिष्ठान चक्र में जाती है और मेरुदण्ड में प्रवेश करती है और मेरुदण्ड में मणिपुर, अनाहत तथा विशुद्धि चक्रों से होती हुई ऊपर की ओर आती है।

निम्न मस्तक में जहाँ से मेरुदंड समाप्त होता है, सुषुम्ना सीधे आज्ञा चक्र और बिन्दु चक्र को पार करती हुई सहस्रार में विलुप्त हो जाती है।

पिंगला और इड़ा : ये दो महत्वपूर्ण अतीन्द्रिय नाड़ियाँ हैं। लेकिन अतीन्द्रिय पथ के रूप में केवल पिंगला नाड़ी का ही उपयोग किया जाता हैं। इसका कारण यह है कि इड़ा का उपयोग इस प्रकार करने से मनुष्य की मानसिक शक्तियाँ प्रबल हो जाती हैं और उसकी प्राण शक्ति को अधीनस्थ कर लेती हैं। फलत: मनुष्य अपना शारीरिक एवं मानसिक संतुलन खो बैठता है। पिंगला मूलाधार से प्रारम्भ होकर शरीर के दाहिने भाग में अर्धवृत्त बनाती हुई ऊपर उठती है तथा स्वाधिष्ठान चक्र में सुषुम्ना को बाईं ओर से पार कर पुन: अर्धवृत्त बनाती हुई ऊपर जाती है और मणिपुर में सुषुम्ना से मिल जाती है। इस प्रकार यह ऊपर उठती हुई अनाहत चक्र को दाहिनी ओर से पार करती हुई विशुद्धि के बाईं ओर जाती है; फिर आज्ञा के दाहिनी ओर पहुँच कर समाप्त होती है। इड़ा नाड़ी का प्रवाह ठीक इसकी विपरीत दिशा में है।

अग्रभाग : अग्र भाग का क्षेत्र धड़ के अगले भाग में नाभि से कंठ तक है। कुण्डलिनी योग के प्राथमिक अभ्यासों में जैसे—विशुद्धि-शुद्धि और अजपा-जप में इसका मुख्य उपयोग होता है।

श्वास-नली मार्ग : वास्तव में श्वास नली मार्ग अग्र भाग का ही विस्तार है। यह कंठ के मध्य से शुरू होकर मस्तक के एक अज्ञात बिन्दु पर आज्ञा चक्र से कुछ ऊपर कनपटियों के स्तर पर समाप्त हो जाता है।

आरोहण-अवरोहण मार्ग : यह मार्ग शरीर में बेडौल वृत्त की भाँति है जिसका आकार दबाव में पड़े अंडे से मिलता-जुलता है। अवरोहण का मार्ग बिन्दु चक्र से प्रारम्भ होकर सुषुम्ना द्वारा मूलाधार तक आकर समाप्त होता है। आरोहण मार्ग मूलाधार में प्रारम्भ होकर जघन अस्थि (प्यूबिक बोन) से होता हुआ निम्न उदर के मोड़ तक और वहाँ से नाभि तक जाता है। वहाँ यह अग्र भाग से मिल जाता है। फलत: यह उसके साथ कंठ के मध्य तक पहुँच जाता है। फिर सीधे खोपड़ी के भीतर बिन्दु चक्र तक पहुँच जाता है।

एकान्तर आरोहण मार्ग : इस मार्ग की चर्चा तंत्र शास्त्र में कुंडलिनी योग के अभ्यास में की गयी है। परम्परागत वर्णन के अनुसार यह मार्ग भी ऊपर वर्णित आरोहण मार्ग से होते हुए विशुद्धि तक जाता है। वहाँ से सीधे ललना चक्र में, टांसिल के समीप जाता है और वहाँ से थोड़ा

ऊपर जाकर सामने की ओर भ्रूमध्य (दोनों भौहों के मध्य) पर पहुँच कर खोपड़ी के मोड़ों में होता हुआ सहस्रार में पहुँचता है। फिर नीचे सुषुम्ना के साथ बिन्दु पर उतर आता है।

आज्ञा नलिका : यह भ्रूमध्य केन्द्र से चलकर आज्ञाचक्र से होती हुई सीधे मस्तक के पीछे चली जाती है।

शांकव मार्ग : ये मार्ग भौतिक शरीर के बाहर अवस्थित हैं। ये भ्रूमध्य बिन्दु के पीछे से शुरू होकर नासिका छिद्रों से निकलते हुए शरीर के बाहर कुछ दूरी पर समाप्त हो जाते हैं। नासिकाग्र से आगे इनकी दूरी का निर्धारण श्वास की शक्ति और स्थूलता द्वारा होता है।

अमृत मार्ग : यह मार्ग विशुद्धि चक्र से प्रारम्भ होकर सीधे ऊपर की ओर तालू के मूल में ललना चक्र तक जाकर समाप्त हो जाता है।

इस तरह शरीर के साथ इन सूक्ष्म चक्रों एवं नाड़ियों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। आप नहीं कह सकते कि शरीर को काटेंगे तो ये चक्र कहाँ मिलेंगे? उत्तर यह होगा कि जिस प्रकार मस्तिष्क का ऑपरेशन करने से विचार नहीं मिल सकते, उसी प्रकार रीढ़ की हड्डी को काटने से चक्र, उनके रंग, तत्व, देवी-देवता कुछ भी नहीं दीख सकते। जिस प्रकार दर्शन क्रिया सूक्ष्म है लेकिन उसका आधार (आँखें) स्थूल है, उसी प्रकार सूक्ष्म चक्रों का आधार शरीर में नाड़ियाँ और ग्रंथियाँ हैं।

इस प्रकार हमने देखा कि चक्रों पर ध्यान योग-साधना का एक प्रमुख अंग है, क्योंकि इनका संबंध मनुष्य के भीतर के शक्ति केन्द्रों और उच्च चेतना के क्षेत्रों से है।

पंचम अध्याय

मन का पुनर्संयोजन

मानव मस्तिष्क एक सर्वाधिक विलक्षण चीज है, जो कम्प्यूटर यंत्र के सदृश है। यह एक ऐसा यंत्र है जिसकी बनावट और पेचीदगी कल्पना से परे है। आधुनिक वैज्ञानिकों के मतानुसार इसमें दस से तेरह अरब अणु हैं जो बाह्य जगत एवं शरीर से प्राप्त संवादों-संवेगों का संचालन, विश्लेषण, तुलनात्मक अध्ययन व प्रसारण करते हैं। प्रति क्षण ये ज्ञानेन्द्रियों द्वारा करोड़ों संवादों को प्राप्त कर उन पर कार्य करने में सक्षम हैं। याद रखें शरीर के प्रत्येक बाल का सम्बन्ध मस्तिष्क से है। शरीर के प्रत्येक वर्ग इंच का सम्बन्ध मस्तिष्क के बहुसंख्यक सूत्रों से है।

इसके बावजूद अवचेतन मन के क्षेत्र में असंख्य क्रियाएँ होती रहती हैं जिनसे हम अनभिज्ञ हैं। यदि हमें इन सबकी जानकारी होती तो हम सूचनाओं की बाढ़ में डूब जाते। इस परिस्थिति में यह आवश्यक है कि हमारी चेतना शरीर और इन्द्रिय संवेदनाओं की क्रियाओं से मुक्त होकर दूसरे कार्यों के लिये समय पा सके।

मस्तिष्क का यंत्र कैसे कार्य कर रहा है, यह जानना आवश्यक है। हमारा मस्तिष्क विद्युत द्वारा परिचालित आधुनिक कम्प्यूटर यंत्र की भाँति है। यदि कम्प्यूटर का संचालक किसी प्रश्न को हल करना चाहता है तो उसका उत्तर पाने में वह ज्यादा उत्सुक रहता है, न कि प्रश्न हल करने की क्रियाविधिओं में। लेकिन यंत्र बिगड़ जाने पर यंत्र-चालक उसकी गति-विधियों के प्रति भी उन्मुख होता है। जब मशीन में ही गड़बड़ी रहती है तो सही उत्तर पाने की कैसे आशा की जा सकती है? गड़बड़ी या तो संचालक में होती है या यंत्र में। इस अध्याय का यही मुख्य विषय है।

हममें से अधिकांश जिस कम्प्यूटर रूपी मस्तिष्क को लेकर चल रहे हैं उससे भ्रामक उत्तर ही प्राप्त होते हैं। वास्तव में कुछ अपवादों को छोड़कर मस्तिष्क में गड़बड़ी नहीं है, गड़बड़ी है उसके संयोजन में। गलत मानसिक संयोजन की आदत हमने जन्म से ही डाल ली है जिसके फलस्वरूप हम आनन्दविहीनता की स्थिति झेल रहे हैं। यदि हम अपने जीवन को सार्थक बनाना चाहते हैं तो मन को पुनः संयोजित करें। तब हम एक ऐसे जीवन की देहरी पर पदार्पण करेंगे जिसकी एक नयी उल्लास भरी सार्थकता होगी। भली प्रकार से संयोजित किया हुआ मन इस संसार को सच्चा स्वर्ग बना देगा। यदि मन की स्थिति विपरीत हुई तो जीवन नारकीय बन जायेगा।

हमारा मानसिक संयोजक ही हमारे दुखों का कारण है। हम अपने अहं को पुष्ट करके आनन्द की खोज करते हैं। इस तरह से सुख खोजने का यह परिणाम होता है कि हमें ऐसे अनेक लोगों का सहारा लेना पड़ता है जो स्वयं अपने आप से असंतुष्ट हैं। हमें धन की प्राप्ति में, खान-पान, मान-मर्यादा में, प्रभुता स्थापित करने में सुख की प्राप्ति दिखाई देती है। इसी तरह की अनेकानेक उपलब्धियों में भी सुख दिखाई पड़ता है जो क्षणिक हैं। सुख-प्राप्ति के हमारे प्रयास हमें विपरीत फल ही देते हैं जिसके फलस्वरूप घृणा, ईर्ष्या, चिन्ता, तनाव और भय आदि से वातावरण दूषित हो जाता है। आनन्द की खोज के इस तरीके का परिणाम विपरीत ही होता है। इसी कारण हमारे मन में कई तरह के मानसिक तनाव पैदा हो जाते हैं। इसके बावजूद हम इन चीजों के पीछे क्यों भाग रहे हैं? इसका उत्तर यही है कि हमारे मन का संयोजन ही ऐसा है कि हम इन क्षणिक चीजों में सुख खोजने लगते हैं। आजकल जैसे कम्प्यूटर यंत्र बिगड़ जाने पर उसे नये ढंग से सुधार सकते हैं, उसी प्रकार हम अपने मन को सुधारने के लिये उसका पुनर्संयोजन कर सकते हैं। आवश्यक प्रयास करने से यह संभव हो सकता है। इस नये संयोजन के परिणामस्वरूप हम अपने वातावरण के प्रति नवीन प्रतिक्रियायें व्यक्त करेंगे और तब हमारा आनन्द अहं पर निर्भर नहीं रहेगा। तब हमारा आनन्द अनन्त होगा जिसकी प्राप्ति के लिए हम जीवनपर्यन्त भटकते रहते हैं।

यदि हम अपने आसपास के जीवन में संघर्षरत रहें तो ध्यान सर्वथा असंभव है। अगर हम जीवन में संघर्षरत रहने की अपेक्षा जीवन-धारा में बह चलें तो ध्यान स्वतः लगा करेगा। इससे हमारी चेतना विस्तृत होगी। आनन्द इसी उन्मुक्त चेतना की देन है। संसार को खींच-तान कर अपनी इच्छा के अनुरूप बनाने से आनन्द नहीं मिलेगा। आनन्द अपने मन के ऊपर निर्भर करता है, न कि संसार को अपनी इच्छाओं के अनुरूप बनाने पर। अपने मन के विचारों को नये ढंग से संयोजित करने से हम चिरस्थायी आनन्द पा सकते हैं जो हमारी आत्मा के अंदर स्वयं विद्यमान है।

वर्तमान जीवन की हमारी मान्यताएँ और धारणाएँ, रुचि-अरुचि, रह-रह कर उठने वाली ईर्ष्या आदि के द्वारा संसार की जो व्याख्या की जाती है, वह बिल्कुल विकृत और निराधार है। हमारा मन उन्हीं सूचनाओं और संवेदनाओं को ग्रहण करता है जो उसकी पूर्व-निश्चित धारणाओं और संयोजन के अनुरूप हुआ करते हैं। दूसरे शब्दों में, यदि हम ऐसा अनुभव करें कि संसार में हर कोई हमसे घृणा का भाव रखता है तब हमारा मन उसी प्रकार की सूचनाओं को तेजी से ग्रहण करेगा जो घृणा को बढ़ाने वाली होंगी। तब मन दूसरे प्रकार के अनुभवों को दबा देगा। यदि हम समझें कि संसार में हर कोई हमें प्यार करता है तो हमारा मन बाह्य जगत की सारी घटनाओं को प्रेम के ही रंग में रंगा हुआ देखेगा। ऐसे अनेक उदाहरणों से हम देख सकते हैं कि मन बाह्य घटनाओं को उन्हें अपने संयोजन के अनुरूप सिद्ध करने में बहुत पटु है। हम भ्रम के जाल में अधिकाधिक उलझते चले जाते हैं। बाहरी दुनिया कैसी है, यह हम इसी मन के कारण, अपनी कामनाओं के कारण नहीं देख पाते।

याद रखें, हमारे कहने का तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि कामनायें बुरी होती है। परन्तु आध्यात्मिकता के विकास और ध्यान के अनुभवों की प्राप्ति में वे बाधक अवश्य हैं।

अवर्णनीय आनन्द और उच्चतर चेतना हमारी प्रतीक्षा कर रही है। हमें सिर्फ मन का पुनर्संयोजन करना है और ध्यान में रत हो जाना है।

ध्यान देने योग्य बातें

इस सन्दर्भ में सबसे पहली बात यह है कि हम अपने जीवन की शैली बदलने की चेष्टा न करें। सिर्फ बाह्य जगत के साथ अपने सम्बन्धों को सुधारते हुये अपने मन का पुनर्संयोजन करें।

दूसरी बात यह है कि आप इस बात का स्वयं अनुभव करें कि संसार में आनन्द (सच्चा सुख) पाने के पीछे दौड़ना व्यर्थ है। अगर इतनी भाग-दौड़, इतनी निराशाओं के बाद भी हम यह बात समझ न पाये तो कब समझेंगे? आप अपने मन को बदलने में तभी सफल होंगे जब आप समझ लेंगे कि बाह्य जगत में सुख एवं शान्ति मिलने वाली नहीं है। जिन लोगों ने अपना सारा जीवन सांसारिक सुख पाने के लिए भाग-दौड़ में बिता दिया है, वे भी अपनी इच्छित वस्तु नहीं पा सके। अन्ततः उन्हें एक सनक सी हो जाती है और वे विश्वास करने लग जाते हैं कि स्थायी आनन्द और शान्ति केवल कपोल-कल्पित है।

तीसरी बात याद करने योग्य यह है कि मन का एक नया कार्यक्रम बनाना चाहिये। एक कहावत है कि– जैसा हम सोचते हैं, वैसा ही हम बनते हैं। हमारे वर्तमान मन की स्थिति हमारे पुराने विचारों पर आधारित होती है। मन मोम की तरह है; जिस प्रकार का ठप्पा इसके ऊपर लगाते हैं, यह वैसा ही बन जाता है। अगर हम इसे नये साँचे के अनुसार ढालने की कोशिश करें, नये ढंग से सोचना प्रारम्भ करें तो निश्चित ही हमारा मन अपने को पुनर्संयोजित कर लेगा। इसको एक उदाहरण द्वारा समझें कि किस प्रकार मन संयोजित होता है और व्यक्ति किस प्रकार उसकी बात मानने के लिए विवश होता है। मान लीजिये, एक परिवार का अभिभावक क्रूर प्रकृति का है। वह वही करता है जो उसकी इच्छा होती है। सभी को अपने शासन में दबा कर रखता है। उस परिवार का एक बच्चा बाहर जाकर अपने मित्रों के साथ खेलना चाहता है पर उसका पिता उसे रोकता है। उस बच्चे का मन अपने को संयोजित करता है। उसकी धारणा बन जाती है कि संसार में शक्ति और प्रभुत्व ही सब कुछ है। वह इसी के अनुसार सुख प्राप्त करने में प्रयत्नशील रहता है। हमारी सभी बाह्य इच्छाओं के मूल में ऐसी ही बातें रहा करती हैं। लेकिन इसके साथ ही हममें यह भी क्षमता रहती है कि हम

पुराने संयोजनों को हटाकर मन को पुनर्संयोजित करें जिससे हमारे सम्मुख समस्वरता पूर्ण जीवन पथ प्रशस्त हो जाये और हमारी चेतना विकसित हो सके। तब हम अपने इस परिवर्तित मन से एक ऐसे रचनात्मक भविष्य का निर्माण कर सकते हैं जिसमें हमारी चेतना जागृत और विस्तृत होगी और हम अपने अन्दर छिपे हुए सत्य और सौन्दर्य के मणिकोष की अनुभूति प्राप्त कर सकेंगे।

आत्मसुझाव

सभी व्यक्तियों में किसी न किसी रूप में भय, कुण्ठायें और संवेगात्मक तनाव रहते हैं, भले ही वे चेतन-अचेतन रूप से उनके बारे में सजग न हों। ये सब चीजें मन को शान्त नहीं होने देतीं तथा ध्यान में बाधा पहुँचाया करती हैं। यह सूत्र वाक्य सदैव स्मरण रखने योग्य है कि हम जैसा सोचते हैं, वैसा ही बनते हैं। यह वाक्य हमारे मानसिक अवरोधों को हटाने में मार्गदर्शक बनेगा। आत्मसुझाव में बहुत बड़ी शक्ति है। यदि हम जीवन में निषेधात्मक दृष्टिकोण रखेंगे तो हमारा जीवन निराशावादी हो जायेगा। यदि हम जीवन का दृष्टि-कोण रचनात्मक रखेंगे तो हमारा जीवन आशावादी बनेगा। यदि हम सचमुच में इस बात पर विश्वास कर लें कि हमें कैंसर हो गया है तो सचमुच में कैंसर रोग का कष्ट हमें भोगना पड़ेगा। आत्मसुझाव में ऐसी प्रबल शक्ति है।

वास्तव में ये सारी चीजें सिर्फ मन से ही नहीं, बाहर से भी आती हैं। हमारा मन बाहरी घटनाओं से लगातार प्रभावित होता रहता है। ये प्रभाव हमारे ऊपर हमेशा ही पड़ा करते हैं। जब हम कोई पुस्तक पढ़ते हैं तो हम इससे सुझाव प्राप्त करते हैं और हमारा आचरण वैसा ही बनता है। हम किसी से बातें करते हैं तो भी सुझाव प्राप्त करते जाते हैं। जो कुछ हमारे मन में आता है, सुझाव के रूप में ही आता हैं। लोगों की बातों, हाव-भावों से भी हमें सुझाव प्राप्त होते हैं।

सुझाव की इस शक्ति को आत्मसुझाव के रूप में व्यवहृत करने से हम अपनी मानसिक तनाव की स्थिति को सरलतम रूप से दूर कर

सकते हैं। साथ ही मन के ऊपर पड़ने वाले निषेधात्मक प्रभावों को भी हम दूर कर सकते हैं जो हमारे अन्दर अवरोध पैदा करते हैं। ध्यानाभ्यास के पूर्व की तैयारी में भी आत्मसुझाव का उपयोग आवश्यक है।

आत्मसुझाव प्रारम्भ करने से पूर्व अपने अन्दर परिवर्तन की आवश्यकता का अनुभव करना होगा। बिना तीव्र इच्छा और आवश्यकता के इसके उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी। यदि किसी में आधे मन से ही परिवर्तन करने की इच्छा है तो वह बार-बार इस विषय का चिन्तन-मनन करके परिवर्तन करने की उत्कट इच्छा जगा सकता है।

पाठक इस बात को अच्छी तरह समझें कि आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होने के साथ ही अनेक मानसिक बाधायें आ उपस्थित होती हैं। जितनी अधिक प्रगति इस पथ में होगी, उतनी ही अधिक बाधायें चेतना के क्षेत्र में उभर कर राह रोकेंगी। अतएव जैसे ही वे दीख पड़ें, उनके प्रति निषेधात्मक रुख अपनाना होगा। विपरीत वस्तुओं को उनके स्थान पर (जैसे क्रोध की जगह क्षमा, दंड की जगह दया आदि) बैठाना होगा; आत्मसुझाव देना होगा कि वे उतनी महत्वपूर्ण नहीं हैं जितनी दिखाई पड़ती हैं।

इस क्रिया में कोई नियमबद्ध पद्धति नहीं बन सकती। पाठक अनुभव के आधार पर व्यक्तिगत रूप से स्वयं अपने लिये उपाय निश्चित करें। उदाहरणार्थ– किसी व्यक्ति को अन्धकार का भय हो, तो उसे ही अपने लिए यह आत्मसुझाव तैयार करना होगा कि अन्धकार तो प्रकाश का ही एक दूसरा पक्ष है। मन को मजबूत बनाने के लिए उसे अपना ज्यादा समय अन्धकार में ही बिताना चाहिये क्योंकि उससे दूर हटने से ही वह चीज उसके मन में अशान्ति और भय पैदा करेगी। जाने या अनजाने उसके मन में तनाव पैदा होता रहेगा। उसके मन में स्थित भय को दूर करने का एकमात्र उपाय है कि वह यह बात समझे कि अन्धकार के प्रति भय नितान्त हास्यास्पद है। संसार में बहुत लोग अँधेरे में रहते हैं और काम करते हैं। उन्हें उससे भय नहीं होता, तो मुझे क्यों डरना चाहिये। इसी तरह के आत्मसुझाव बारम्बार देने

से मन का भय दूर हो जायेगा। इस प्रकार का आत्मसुझाव जब विश्रामपूर्ण स्थिति में दिया जाता है तो ज्यादा प्रभावशाली होता है। यदि पूरे मन से कोई अपने अन्दर स्थित कमजोरी और दुर्भावना को हटाने के लिए प्रयत्नशील हो और अपने को आत्मसुझाव दे तो यह बहुत ही शक्तिशाली उपचार होगा, जिसके कारण भय आदि की कितनी ही भ्रांतियाँ मिट जायेंगी। ऊपर के उदाहरण में अन्धकार के प्रति उदासीन भाव रखने से अवचेतन मन में स्थित भय की भावना समाप्त हो जायेगी। सभी प्रकार की कुण्ठायें, भय और अंतर्विरोध आत्मसुझाव से समाप्त किये जा सकते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि अपनी समस्याओं को दूर करने के लिए हम में दृढ़ संकल्प हो।

अब यह प्रश्न उठता है कि गहरी बैठी समस्याओं को (जो तनाव और दुख का कारण बनती हैं और हमारे जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं) कैसे ढूंढ निकाला जाये। योग और ध्यान के अभ्यास द्वारा जब साधक की चेतना का विस्तार होता है, अन्तर्जागृति बढ़ती है, तो अंदर छिपे हुए भय, कुण्ठायें, मानसिक और संवेगात्मक प्रभावों के संस्कार स्वत: सामने आने लगते हैं। इन्हें समाप्त करने के लिए ध्यान की एक प्रक्रिया है, अन्तर्मौन। इसमें आन्तरिक समस्यायों को लिखित या मानसिक रूप से नोट कर लेना चाहिये।

मानसिक और संवेगात्मक समस्याओं को हटाने की चेष्टा में दूसरी आवश्यक बात यह है कि बाहरी घटनाओं और संकटों को मन से बाहर रोक रखने का अभ्यास करना चाहिये क्योंकि ये मन पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। दूसरे शब्दों में, हमारा मन इतना मजबूत होना चाहिये कि बाह्य घटनाओं का प्रभाव ही हमारे ऊपर न पड़े। इसके लिये सभी व्यक्तियों और वस्तुओं के प्रति धीरे-धीरे वैराग्य भाव पैदा करना होगा। इसका अर्थ यह नहीं कि हम उद्भिज (शाक-सब्जी) की तरह व्यक्तिगत सम्बन्धों से विलग होकर जीवन के उतार-चढ़ाव में भाग न लें। इसका तात्पर्य यह है कि सांसारिक व्यवहार तथा बाह्य क्रिया-कलापों में प्रेम, घृणा, आदि का प्रदर्शन करते समय आपके अंतर्मन को ये चीजें प्रभावित न कर सकें। संवेगात्मक भाव आपके व्यक्तित्व को अवश्य स्पर्श करें लेकिन चेतना की गहराइयों में उनकी कोई छाप न पड़े। हम अपने को

शरीर या मन समझेंगे तब सुख-दुख, इच्छा-अनिच्छा, प्रतिकूल और अनुकूल भावनाओं की लहरों से उद्वेलित होंगे ही। इसके विपरीत अगर हम मन-शरीर से तादात्म्य स्थापित नहीं करेंगे तो मानसिक-शारीरिक व्याधियाँ हमें कम ही छू पायेंगी अर्थात् सुख-दुख का थोड़ा ही असर होगा। हम संसार की बाह्य उत्तेजनाओं की तुलना तालाब में उठने वाली जल की तरंगों से कर सकते हैं। लहरें जल की ऊपरी सतह को ही आन्दोलित करती हैं, आंतरिक तल को नहीं। हमें भी बाह्य प्रभावों से ऐसा ही हल्का सम्बन्ध रखना चाहिये।

आध्यात्मिक जिज्ञासु साधक की अंतरात्मा की शांति को मन-शरीर के निषेधात्मक प्रकम्पों एवं बीमारियों से किंचित भी प्रभावित नहीं होना चाहिये। ऐसा करने की अपेक्षा कहना आसान है। परन्तु स्वयं के प्रति सजग होने के अनवरत अभ्यास से इस स्थिति की प्राप्ति हो सकती है जिसमें व्यक्ति संसार की तुमुल कोलाहलपूर्ण घटनाओं कें बीच शान्त एवं अप्रभावित रह सकता है।

आत्मसुझाव का दूसरा महत्वपूर्ण उपयोग है शारीरिक रोगों की चिकित्सा और रोकथाम। बहुत तरह के असाध्य रोग जैसे—कैंसर, ल्युकीमिया आदि रोगों से ग्रसित व्यक्ति भी अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति और संकल्प शक्ति के बल पर स्वस्थ होते देखे गये हैं। अपनी रुग्ण अवस्था में भी उन व्यक्तियों ने अपने को संतुलित रखा तथा शरीर को स्वस्थ बनाने के लिए लगातार आत्मसुझाव देते गये। इस प्रकार अपनी इच्छाशक्ति और दृढ़ आत्म-विश्वास के बल पर वे शीघ्र ही स्वस्थ हो गये।

ध्यान के अभ्यास के पश्चात् का समय आत्मसुझाव के लिए सबसे उत्तम है। प्रातःकाल सोकर उठने के बाद या रात में सोने के पूर्व का समय भी उपयुक्त है। इन समयों में हमारा मस्तिष्क सुझावों के प्रति ग्रहणशील रहता है। ऐसे समयों में दृढ़ संकल्प और विश्वास के साथ कुछ मिनटों तक आत्मसुझावों को दुहराया जाय। उस समय हमेशा विश्वास रखें कि इच्छित परिवर्तन होगा ही और अपने अभीष्ट की प्राप्ति अवश्य होगी। लेकिन आधे मन से दिये हुए आत्मसुझाव पूरे नहीं होंगे। उनकी सफलता में सन्देह है।

यह बतलाने का आशय है– हम अपने और अपने परिवेश के बीच सामंजस्य रखें । हमारे अधिकांश दुखों का यही कारण है कि हम अपने शरीर, मन , कार्यकलापों और अपनी भूमिकाओं के प्रति एकात्म-भाव पैदा कर लेते हैं। अपने अन्तर्तम में छिपे हुये महान, अपरिवर्तनशील एवं चिरस्थायी आत्म-सत्ता को भूलकर हम इस संसार की नश्वर क्षणिक वस्तुओं के साथ तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं । संसार में अपने कर्तव्यों को निभाते हुये जब हम अपने को अपने शरीर-मन से अलग रख सकें और उन्हें अपनी आत्म-शक्ति के अभिव्यक्तिकरण का एक अंग समझें तो हमारा ध्यान एक सहज-सतत प्रक्रिया बन जायेगी । अपने शरीर एवं मन के प्रति थोड़ा भी वैराग्य (तटस्थता) का अभ्यास हमें शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक उपद्रवों से बहुत हद तक मुक्ति और ध्यान के अवरोधों से छुटकारा दिला सकता है। जब हमारे शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक तनाव, विक्षेप तथा बन्धन समाप्त हो जायेंगे तब हमारे मन में शांति, स्थिरता, आत्मविश्वास तथा विश्रांति की स्थिति उत्पन्न होगी।

यह एक विचित्र बात है, जब-जब किसी से पूछा जाता है कि वह कौन है तो प्राय: यही उत्तर मिलता है कि मैं डॉक्टर हूँ, मैं मिस्त्री हूँ, मैं खिलाड़ी हूँ, मैं माँ हूँ, मैं टाइपिस्ट हूँ। ये तरह-तरह के उत्तर उनके जीवन-कार्य का परिचय हैं, स्वयं उनके नहीं । यहाँ हम एक कार्य-तादात्म्य का उदाहरण ले सकते हैं जिसमें कार्य के साथ तादात्म्य हो जाने से (आसक्ति के कारण) अनेक दुख हुआ करते हैं। हम एक अभिनेता का उदाहरण लें । एक अत्यन्त सुन्दर,सुडौल शरीर वाला अभिनेता है । अपने शारीरिक गठन और सौन्दर्य को बनाये रखने के लिए वह इसके प्रति बहुत जागरूक रहता है तथापि उम्र ढलने के साथ-साथ उसके शरीर से तरुणाई का लोप हो जाता है । प्रतिदिन घंटों उसके सार-सँभाल में समय व्यतीत करने पर भी उसकी सुन्दरता कम होने लगती है । वह निराश और दुखी होने लगता है क्योंकि अपने आप के बारे मे जो धारणा उसने बना ली थी, वह टूटने लग जाती है । संसार की क्षणिक वस्तुओं से जो तादात्म्य स्थापित किया हुआ रहता है, वह आधारहीन मालूम पड़ने लगता है । ऐसी स्थिति में बहुतों के जीवन में विशेष कर उच्च महत्वा-

कांक्षी लोगों के लिए भावनात्मक आत्महत्या जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

माँ के साथ भी यही होता है। उसका अपने बच्चे के साथ एकात्म होना ही उसे उसके वियोग से उत्पन्न दुख झेलने के लिये विवश करता है। यही बात किसी डाक्टर, वकील, लिपिक, कलाकार या गृहणी पर भी लागू होती है। जीवन के कार्यों के साथ इनका गहरा तादात्म्य होता है जो स्थायी नहीं है। इनके साथ एकात्म भावना रखने के कारण ही उनकी अनुपस्थिति में दुख और संवेगात्मक असंतुलन होने लगता है।

शरीर, मन और संवेगों के साथ हमारा तादात्म्य इतना प्रचलित एवं विस्तृत है कि हम इसे सहज रूप में सत्य मान लेते हैं। जब कोई कहता है कि मैं प्यासा हूँ तो यह बात बिना इसके वास्तविक अर्थ पर ध्यान दिए हुए कही जाती है। इसमें यह नहीं सोचा जाता कि "मैं" से तात्पर्य आत्मा के साथ तादात्म्य स्थापित करने से है। "मैं" का अर्थ क्षणिक शरीर ही समझा जाता है। कहना यह चाहिए कि "मेरा शरीर प्यासा है"। इस तरह यह अर्थ स्पष्ट हो जायेगा कि यह शरीर हमारी आत्मा की अभिव्यक्ति मात्र है।

यही स्थिति हमारे विचारों और भावनाओं के साथ भी है। हम कहते हैं–"हम थके हैं"। परन्तु यह तो हमारे मस्तिष्क के संवेगात्मक पक्ष की एक क्रिया मात्र है। ये सब अस्थायी स्थितियाँ हैं जो क्षण-क्षण रंग बदलती हैं, एवं मिटती-बनती रहती हैं। अभी किसी के साथ मित्रता की भावना है, तो दूसरे ही क्षण शत्रुता की भावना पैदा हो जायेगी। यद्यपि ये अस्थायी चीजें नहीं हैं तथापि हम अपनी आदत के अनुसार इनके साथ तादात्म्य की भावना स्थापित करते हैं। हम कहा करते हैं – "मैं सोचता हूँ कि आसमान का रंग नीला है" या "मैं सोचता हूँ कि एक और एक मिल कर दो होता है"। वस्तुतः सोचने वाला "मैं" नहीं होता, मन होता है, जो नित्य-प्रति बदलता रहता है। एक दिन हमारा मन कुछ सोचता है, तो दूसरे दिन कुछ और। हम कैसे उसके साथ तादात्म्य स्थापित कर सकते हैं? इस स्थिति में यही कहना उपयुक्त होगा कि "मेरा मन यह सोचता है" या "मेरा मन यह अनुभव करता है"।

हम लोगों में अपने मन और शरीर की क्रियाओं को देखने की क्षमता है। जिन चीजों को हम अलग वस्तु मान कर देख सकते हैं वह कैसे हमारी असली पहचान हो सकती है? कोई ऐसी चीज अवश्य है जो हमारे शरीर और मन की सभी क्रियाओं को द्रष्टा और साक्षी की तरह देखा करती है। अतएव यह शरीर और मन हमारे प्रत्यक्ष ज्ञान, क्रिया और विचारों का यंत्र मात्र है, उससे अधिक कुछ नहीं।

हमारा वास्तविक परिचय हमारी आत्मा है जो चेतना का केन्द्र है। हम अपने जीवन में जो कुछ भी करते हैं उन सब को यह आत्मा ही उद्भासित करती है। यद्यपि यही हमारे व्यक्तित्व का केन्द्र है, हमारी सत्ता का बीज है, सार है तथापि बहुत कम लोग इस तत्व को समझ पाते हैं अथवा उससे प्रेरित होकर व्यवहार करते हैं। जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है अधिकांश व्यक्ति शरीर और मन से तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं। यदि हम आत्मा से परिचालित हों, उसे ही अपना वास्तविक स्वरूप समझें तो हम शरीर और मन का समुचित सदुपयोग करने में समर्थ हो सकेंगे; सम्पूर्ण क्षमता के साथ हम उन्हें काम में ला सकेंगे। हम स्वस्थ रह सकेंगे क्योंकि शरीर और मन के संचालन में हमारी भ्रान्तियाँ और हमारे दुराग्रह बाधा नहीं पहुँचा सकते। इस दृष्टि से ध्यान एक स्वाभाविक-सहज क्रिया होगी।

परन्तु आत्म-चेतना के केन्द्र से, वास्तविक "मैं" के केन्द्र से जीवन संचालन किस प्रकार शुरू किया जाये? यही आध्यात्मिक पथ का मुख्य उद्देश्य है। यह एक लम्बा और कठिन मार्ग है तथापि इस पर अग्रसर हो जाना अपने आप में एक सफलता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि आत्मा के साथ किंचित मात्र तादात्म्य स्थापित हो जाये और मन-शरीर के साथ उसी मात्रा में विलगाव हो जाये तो इससे ध्यानाभूति में बड़ा सहयोग मिलेगा। ध्यान अपने आप में एक शक्तिशाली साधन है जो हमें केन्द्रस्थ आत्मा तक पहुँचाने में सहायक होता है।

सर्वप्रथम आपको यह जान लेना है कि जीवन की सभी क्रियाएँ मात्र भूमिका निर्वाह करने के समान हैं। ये न तो हमारी सत्ता का प्रतिनिधित्व करती हैं, न हमारा सच्चा परिचय ही देती हैं। ये मात्र अभिव्यक्तियाँ हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि काम करना व्यर्थ है। इसका अर्थ है कि हमें

कार्य करते जाना है केवल एक अभिनेता की तरह। अपनी भूमिका निभाते हुए अपने को देखते जाना है। इस तरह अभ्यास करते हुए हम देखेंगे कि हमारी आत्मा दर्शक की तरह सब कुछ देख रही है और शरीर तथा मन अभिनेताओं की तरह अपने कर्तव्यों की भूमिका निभा रहे हैं।

दूसरी चीज हमको यह अनुभव कर लेनी है कि "मैं शरीर नहीं हूँ, इन्द्रियों की संवेदनायें नहीं हूँ, मन के भाव या संवेग नहीं हूँ, मैं मन नहीं हूँ, बुद्धि नहीं हूँ"। प्रारम्भ में इन सब चीजों को हमें बौद्धिक स्तर पर ग्रहण करना होगा। अभ्यास करने से इनसे तादात्म्य समाप्त होता जायेगा। इसके बाद आप अपनी आत्मा के सत्य स्वरूप को समझ सकेंगे जो परमात्मा का एक अंश है।

ध्यान का अनुभव

ध्यान में निश्चिन्तता की अनुभूति होती है। अपना व्यक्तिगत स्वार्थ हट जाता है और सभी के लिए समान भाव आ जाता है। विरोधी विचारों और धारणाओं से जीवन खण्डित नहीं होता। एक पूर्णता में प्रत्येक वस्तु विलीन होती दीखती है। बाह्य संसार की घटनायें बिना बाधा के सम्पन्न होती जाती हैं। जीवन की सबसे बड़ी बाधा 'भय' का अन्त हो जाता है। यहाँ तक कि 'मृत्यु-भय' भी छिछला, सत्ताहीन और महत्वहीन मालूम होता है। जीवन के उतार-चढ़ाव, आशा-निराशा–सभी आनन्द की एक सतत प्रवाहित उच्च अनुभूति में बदल जाते हैं। विरोधी दृष्टिगोचर होने वाली धार्मिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक मान्यताओं में सामञ्जस्य स्थापित होने लगता है। भूत और भविष्य का महत्व नहीं रह जाता। अनन्त वर्तमान महत्वपूर्ण बन जाता है। पूर्णतः वर्तमान में रहना ही एक मात्र मुख्य उद्देश्य बन जाता है। वर्तमान इतना महत्वपूर्ण हो जाता है कि मन पूर्णतया अपने कार्य में केन्द्रित हो जाता है। अपने कार्यों के प्रति दक्षता और पूर्णता स्वाभाविक बन जाती है। दक्षता के बाधक तत्व— चिन्ता और क्रोध— मस्तिष्क की तल्लीनता को खण्डित नहीं कर पाते। इस स्थिति में कार्य और क्रीड़ा के बीच कोई अन्तर नहीं रह जाता। जीवन इतना आनन्दपूर्ण बन जाता है कि किसी महत्वाकांक्षा, किसी औचित्य या तर्क की आवश्यकता नहीं रह जाती। अपना अस्तित्व

ही पर्याप्त मालूम देता है। यह याद रखना चाहिये कि नैराश्य, असंतोष और दुख के कारण ही हम जीवन का कारण ढूँढने लगते हैं अथवा जीवन की उन गतिविधियों का अनुसरण करने लगते हैं जो हमारी सत्ता के विपरीत हैं।

ध्यान से न तो उत्साह भंग होता है, न संसार के प्रति कर्म करने की रुचि में कमी आती है। हाँ, चिन्ता समाप्त हो जाती है। ऊपरी तौर पर चिन्ता भले ही दिखे पर अन्तर्मन में पूर्णतः शान्ति रहती है। ध्यान के लिए की गई प्राथमिक तैयारियाँ अब महत्त्वपूर्ण नहीं रहतीं। दूसरे शब्दों में यम, नियम आदि ('राजयोग' अध्याय में देखें) के अन्तर्गत त्याग, वैराग्य और इसी तरह की अन्य बातों का कोई महत्व नहीं रह जाता। ध्यान के अनुभव इन नियमों से ऊपर हैं। ये नियम मानसिक अशान्ति को दूर करने के लिए बने हैं। अब व्यक्ति उत्तेजक, क्रोध-पूर्ण, आनन्दपूर्ण— सब तरह के कार्य कर सकता है। उसके अन्तःप्रदेश पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह साक्षीभाव से जीवन में क्रिया-शील रहता है। इन्द्रिय-जनित आनन्द कम नहीं होते, अपितु बढ़ जाते हैं। व्यक्तित्व पर पड़ने वाले बाह्य जगत के प्रभावों में उसे एक विशेष आनन्द की अनुभूति होती है।

प्रत्येक वस्तु एक इकाई बन जाती है। सूक्ष्म-अन्तर्ज्ञान ही ज्ञान का माध्यम बनता है। वस्तुओं का गूढ़ एवं सार अर्थ दिखाई पड़ने लगता है। संसार की प्रत्येक वस्तु के प्रति अपनत्व एवं मित्रता का भाव उत्पन्न हो जाता है। विरोधी स्थितियाँ समाप्त हो जाती हैं। प्रत्येक अणु जीवन्त होकर चमकने लगता है। समय और दूरी के रूढ़ार्थ समाप्त हो जाते हैं। ये चीजें ईश्वरीय-सत्ता की अभिव्यक्ति मात्र बन कर रह जाती हैं। समय रुकता-सा दीखता है और अंतरिक्ष विस्तारहीन हो जाता है। तारे हमारी पहुँच के बाहर नहीं रह जाते। अनन्तता और नित्यता स्पृश्य जाते हैं। प्रत्येक वस्तु में सृष्टि का शाश्वत रूप दीखता है। व्यक्ति अपने आप को हर चीज से अन्तरंग रूप से जुड़ा हुआ पाता है। उसे अपने अहं की स्थिति दिखती ही नहीं अथवा नगण्य-सी दीखती है।

सम्पूर्ण सृष्टि में उसका अस्तित्त्व एक बिन्दु-सा दीखता है—पहिये में दाँते की तरह अथवा अनन्त काल के एक क्षुद्र अंश के समान। जीवन में

कभी-कभी ऐसा लगने लगता है कि व्यक्ति सृष्टि के अन्य भागों से विच्छिन्न हो गया है। लगता है कि इस एकाकी और मरणशील जीवन से छुटकारा नहीं होगा। अधिकांश लोग इसे नियति समझ कर हार मान लेते हैं। ध्यान से इस स्थिति में परिवर्तन आ जाता है। ध्यान द्वारा मनुष्य यह समझने लगता है कि मनुष्य सृष्टि का एक आवश्यक, आत्मीय और महत्वपूर्ण अंश है। सृष्टि की प्रत्येक वस्तु के साथ उसका सम्बन्ध है। इसकी सत्ता अलग नहीं है। वह सृष्टि ही बन जाता है।

यह ध्यान की रहस्यपूर्ण स्थिति है। ध्यान की गहराई और ऊँचाई के अनुरूप अनुभवों के विवरण में भिन्नता होती है। साथ ही, इस अकथनीय अनुभव को अभिव्यक्त करने की कोशिश में प्रत्येक व्यक्ति अपनी भाषा, अपने धार्मिक शब्द तथा प्रतीकों एवं स्वानुभूति का उपयोग करता है।

ध्यान की उच्चतम स्थिति का अनुभव अचानक नहीं होता है। इन आध्यात्मिक अनुभवों का तीव्रीकरण क्रमिक रूप से होता है। प्रारंभ में छोटी-छोटी बातों में इसका अनुभव होता है, यह अनेक मूर्त्त-अमूर्त्त रूपों में दृष्टिगोचर होता है। इनमें से अधिकांश रूप तो दैनिक जीवन के साथ असम्बद्ध होने की वजह से बड़े विचित्र लगते हैं। हमें आश्चर्य होने लगता है कि किस प्रकार ऐसी चीजें हमारे अन्दर से घटित हो रही हैं। हम भगवान बुद्ध की जगमगाती प्रतिभा तथा बहुरंगी अन्त:शक्ति के नमूने देख सकते हैं। अनुभूतियों और संवेगों की तीव्रता भी घ्यान में संभव हो जाती है। व्यक्तित्व की गहराई से उठने वाले नाद भी सुने जा सकते हैं।

अन्त में हम एक लोकोत्तर अनुभव को विलियम जेम्स की 'द वैराइटीज ऑफ रिलीजस एक्सपीरियंस' नामक पुस्तक से उद्धृत करते हैं—

"एकाएक मैंने अपने को अग्नि की लपटों में लिपटा पाया। एक क्षण के लिए मैंने सोचा कि कहीं आसपास आग लग गई है, पर दूसरे ही क्षण मैंने जान लिया कि यह अग्नि मेरे अन्दर ही है। इसके तुरन्त बाद उल्लास तथा अपरिमित आनन्द के साथ बौद्धिक उद्‌बोधन की अवर्णनीय बाढ़-सी आ गयी। मैंने मात्र विश्वास कर लिया हो, ऐसी बात नहीं है। मैंने देखा कि यह विश्व जड़ पदार्थों से बना हुआ नहीं है, बल्कि हर चीज एक जीवन्त सत्ता है। मैं अपने शाश्वत जीवन के प्रति

सजग हो उठा, सचेतन रूप में। मैंने देखा कि सारे मनुष्य अमर हैं। इस विश्व-व्यवस्था में हर चीज एक-दूसरे के हितार्थ ही कार्य करती है। इस संसार का तथा सम्पूर्ण विश्व का मूल सिद्धान्त प्रेम तथा परोपकार है। यह दृश्य कुछ क्षण तक ही रहा लेकिन उसकी याद आज तक बनी है यद्यपि इस घटना को हुए लगभग २५ वर्ष बीत चुके हैं। मैं जान गया कि इस दृश्य के द्वारा जो कुछ मुझे दिखा वह सत्य है। वह चेतना गहरे अवसाद के क्षणों में भी नष्ट नहीं हुई है।"

आध्यात्मिक प्रगति और आध्यात्मिक अनुभव भाषा के परे हैं। आज तक जितने भी धर्मग्रन्थ, शास्त्र आदि लिखे गये, वे सब प्रतीकात्मक हैं। ये सब बातें उन्हीं की समझ में आयेंगी, जिन्हें इस तरह के अनुभव होने शुरू हो गये हों। उदाहरण के लिए श्रीराम कथा या श्रीकृष्ण की जीवनी पर आधारित रामायण तथा श्रीमद्भगवद्गीता का उदाहरण लें। इसके अलावा दांतें की 'डिवाइन कॉमेडी', गोथे का 'फाउस्ट' आदि पुस्तकें भी ध्यान देने योग्य हैं जो बौद्धिक मन से भी गहरे स्तर पर हृदय को छूती हैं।

विचार की इसी शृंखला के क्रम में पाठकों से कहा जाता है कि ध्यान को अपने लिए अनुकूल विधि से प्रारम्भ करें। दूसरों के अनुभवों, आध्यात्मिक पथों से वे प्रभावित न हों।

षष्ठम अध्याय

योग दर्शन

योग में सिद्धांत की अपेक्षा अभ्यास या क्रिया पर ज्यादा बल दिया जाता है तथापि दार्शनिक पक्षों का मूलभूत ज्ञान रहने पर साधक यह जान सकेगा कि योग के द्वारा वह किस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सचेष्ट है; ध्यान की अवस्थाएँ कैसे उसे प्राप्त होंगी। यद्यपि योग दर्शन में अन्तर्दृष्टि की बहुत बातें भरी पड़ी हैं परन्तु अन्ततः सबका उद्देश्य है कि साधक किस प्रकार आत्मदर्शन की ओर अग्रसर होता है। अनेक दर्शन विशेषकर पाश्चात्य दर्शन अपने ही शब्दों की भूल-भुलैया में खो जाते हैं। वास्तविकता का एक सुन्दर शब्द-चित्र प्रस्तुत करने के लिए अपनी ही धारणाओं को अपने आस-पास की वस्तु-स्थिति के अनुरूप ढालने की उनकी प्रवृत्ति होती है। दार्शनिक अपने ही शब्दों में इतने लीन हो जाते हैं कि उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगता है कि उनके द्वारा प्रस्तुत की गई तस्वीर सत्य का वास्तविक प्रतिबिम्ब है। वे यह नहीं समझते कि उनकी धारणा एक नमूना मात्र है। मकान का नक्शा मकान नहीं हो सकता। पूर्वी दर्शन में योग, जेन (Zen) आदि मत इसकी पुष्टि करते हैं कि साधक अपने ही प्रयासों से सत्य तक पहुँच सकता है। मौखिक या लिखित शब्दों-चित्रों से सत्य का उद्घाटन न तो हुआ है और न होने की सम्भावना दीखती है। योग दर्शन की विचारधारा सब के ऊपर लागू होती है। यह एक व्यावहारिक ज्ञान है।

उपयोगी दर्शन को सबसे पहली आवश्यकता है कि उसका सम्बन्ध मानव जीवन से हो। वह यह बता सके कि मानवता को दुखों और कष्टों से किस प्रकार ऊपर उठाया जा सकता है।

महात्मा बुद्ध ने इस आवश्यकता को समझा था। फलतः ईश्वर की सत्ता से सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर देना उन्होंने अस्वीकार किया—

इसलिये नहीं कि उन्हें उनका कोई ज्ञान नहीं था, वरन इसलिये कि मनुष्य-जीवन का कोई सम्बन्ध इन प्रश्नों से नहीं था। वे उनका उत्तर ' ईश्वर है या नहीं है" में दे सकते थे परन्तु इन दोनों उत्तरों से मानवता को कुछ उपलब्धि नहीं होती। उसके लिए ये उत्तर शब्द मात्र होते। इस प्रश्नोत्तर से मानव-अस्तित्व या जीवन की खुशी में कोई अन्तर नहीं आता। बुद्ध का मुख्य उद्देश्य था– मनुष्यों को दुखों से ऊपर उठाना। जब वे अपनी वर्त्तमान स्थिति से अपने को ऊपर उठा लेते तो उन्हें अपने इच्छित प्रश्नों के उत्तर स्वतः मिल जाते। उन्हें प्रश्नोत्तर की आवश्यकता ही नहीं रहती। योग का यह भी उद्देश्य है कि मनुष्य अपने कष्टों का उन्मूलन करे ताकि उसके सामने आध्यात्मिकता का स्वरूप प्रगट हो और वह अपने को देख सके।

मनुष्य के दुखों एवं कष्टों के कारणों का उल्लेख योग में है। वे पाँच प्रकार के होते हैं जिन्हें पंच-क्लेश कहा जाता है। ये क्लेश दुर्बोध सिद्धान्तों पर नहीं, अपितु मनुष्य के जीवन और कार्यों के अध्ययन पर आधारित हैं। इन पंच-क्लेशों की अभिधारणा उन ऋषियों ने की जिन्होंने स्वयं इन्हें अनुभव किया और उनका अतिक्रमण कर उनसे मुक्ति पायी। हममें से अधिकांश अपने दुखों में इस तरह लिपटे हैं कि उनके कारणों को पहचान नहीं पाते। इन क्लेशों के कारण ये हैं :

(क) अज्ञान या वास्तविकता की अनभिज्ञता
(ख) अहं या अहंकार
(ग) सांसारिक वस्तुओं के प्रति आकर्षण
(घ) सांसारिक वस्तुओं के प्रति अरुचि
(ङ) मृत्यु-भय

वास्तव में ये क्लेश अलग-अलग नहीं हैं। एक से दूसरे क्लेश की उत्पत्ति होती है। सत्य या वास्तविकता के प्रति अज्ञान ही इनका मूल कारण है। प्रत्येक व्यक्ति अपने ही विषय में सोचता है। वह अपने अहं से एकात्म होकर अन्य व्यक्तियों और वस्तुओं से अपने को अलग देखने लगता है। वह अपने अहं से प्रेरित होकर इधर-उधर घूमता और कार्यों को करता है। अपने आनन्द और आराम के साधन जुटाने में वह सभी वस्तुओं को किसी न किसी रूप में अपना सेवक समझता है। इसी तरह

उसके मन में पसन्द-नापसन्द की बात उठती है। ऐसे पदार्थों और ऐसे लोगों की तरफ वह आकर्षित होता है जो उसे आनन्द देते हैं, उसके अहं को पोषित करते हैं। जिन चीजों से उसे अप्रसन्नता या असुविधा होती है, वे उसकी घृणा का विषय बन जाती हैं।

इस तरह वह चेतना शक्ति जो हमारे मन को प्रकाश देती है, इच्छा-पूर्ति की इस भाग-दौड़ में शामिल होने को विवश हो जाती है। सभी इच्छायें एक साथ पूरी नहीं होतीं, इसलिये उपयुक्त अवसर पाते ही अपने को प्रगट कर देती हैं।

इन इच्छाओं का कारण क्या है? कारण वे क्लेश हैं जिनकी चर्चा हम ऊपर कर आये हैं। अगर क्लेश न हों तो इच्छायें भी न होंगी। वस्तुओं के प्रति आकर्षण, विकर्षण, अहंभाव, जीवन के प्रति आसक्ति और सत्य की अनभिज्ञता ही इच्छाओं को जन्म देते हैं।

ये इच्छायें किस प्रकार हमारे ध्यानाभ्यास पर विपरीत प्रभाव डालती हैं? ये इच्छायें अपनी तृप्ति के लिए हमारे मन को किसी न किसी बाह्य पदार्थ पर टिकाये रखती हैं। फलतः भटकता हुआ मन एकाग्र नहीं हो पाता। एकाग्रता के अभाव में ध्यान भी नहीं लग पाता।

बिना आत्मज्ञान के क्लेशों का निवारण बिल्कुल संभव नहीं। अधिक से अधिक हम यही कर सकते हैं कि उन्हें क्रमशः कम कर सकते हैं। यह क्रिया कई विधियों से की जा सकती है। कुछ प्रभावशाली विधियाँ इस पुस्तक में दी जा रही हैं। सर्वप्रथम हमें क्लेशों की उत्पत्ति पर विचार करके उन्हें समझना होगा कि वास्तव में ये क्लेश और कष्टों के वाहक हैं। भली प्रकार विचार करने पर हम समझ जायेंगे कि ये क्लेश किस प्रकार दुखों एवं कष्टों का सृजन करते हैं। यद्यपि इस विषय में यहाँ पर कुछ विचार विमर्श किया गया है तथापि व्यक्तिगत रूप से अनुभव कर लेना अच्छा है।

स्वानुभव के बाद व्यक्ति अपनी रुचि-अरुचि तथा अहं को दूर करने के लिए अपने मन का पुनर्संयोजन कर सकता है।

इसी तरह "आत्म-सुझाव" शीर्षक वाले अध्याय में दिये गये सुझावों के अनुसार शरीर एवं मन के साथ तादात्म्य-भाव को दूर किया जा सकता है। इससे अहं भाव कम होगा और व्यक्ति शाश्वत सत्य और

आत्मा से सम्बन्ध स्थापित कर सकेगा। इसी के साथ 'राजयोग' शीर्षक अध्याय में वर्णित यम और नियम का अभ्यास क्लेशों का निवारण करने में सहायक होगा। इस पुस्तक में वर्णित कर्मयोग और भक्तियोग जीवन के क्लेशों को दूर करने के सफल उपाय हैं।

आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होने के साथ ही क्लेशों का प्रभाव स्वभावतः कम होने लगता है। पाठक यह कह सकते हैं कि क्लेशों की अनुपस्थिति में जीवन का आनन्द ही समाप्त हो जायेगा; जीवन का कोई अर्थ ही नहीं रह जायेगा। इच्छा और अनिच्छा ही जीवन को विशिष्टता प्रदान करने वाले तत्व हैं। उनके अभाव में जीवन सूना हो जायेगा। इन बातों से पता लगता है कि हम जीवन के प्रति कितना आसक्त हैं। जिस जीवन को हम देख रहे हैं वह तो अपने सबसे स्थूल स्वरूप में है। जैसे-जैसे मनुष्य आध्यात्मिक पथ पर प्रगति करता जाता है, वह सत्य के निकट आता जाता है। उसे स्पष्ट रूप से समझ में आने लगता है कि उसको चेतना की वर्त्तमान स्थिति में जो जीवन अभी दीख रहा है वह शनैः शनैः दिखाई पड़ने वाले सूक्ष्मतर जीवन तत्त्व के सम्मुख कुछ भी नहीं है। दोनों प्रकार के जीवन में बड़ा अन्तर है। हमें यह भी स्पष्ट होने लगेगा कि जीवन के वर्त्तमान स्वरूप से जितनी आसक्ति हमने पाल रखी है, उस योग्य यह जीवन नहीं है। इस तरह हम स्वतः ही क्लेशों के प्रभाव से मुक्त होने लगेंगे।

सप्तम अध्याय

राजयोग की पद्धति

ध्यान का सबसे सुव्यवस्थित पथ राजयोग ही है। सभी यौगिक मार्गों (चाहे भक्ति हो, कर्म हो या ज्ञान) का लक्ष्य एक ही है–ध्यान के अनुभवों द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति। वस्तुत: ये मार्ग या पद्धतियाँ एक दूसरे का विरोध नहीं करतीं। अन्य पद्धतियाँ भी हैं, जिनका वर्णन आठवें अध्याय में किया गया हैं।

राजयोग के प्रणेता महर्षि पातंजलि थे। उन्होंने अपनी पुस्तक, 'योग-सूत्र' में राजयोग का वर्णन किया है। महर्षि पातंजलि द्वारा बतलाये गये राजयोग की पद्धति पर विचार-विमर्श करना उचित ही है, क्योंकि यह उन बाधाओं पर प्रकाश डालता है जिसका निवारण सफल ध्यान के लिए अनिवार्य है।

राजयोग की प्रारंभिक क्रियाओं का ध्यान से कोई सीधा सम्बन्ध ही नहीं है। परन्तु उनका महत्व इसलिए है कि वे साधक के शरीर और मन को उच्चतर योग की अवस्था के लिए तैयार करती हैं। प्रथम पाँच क्रियाओं का अभ्यास किये बिना शायद ही किसी को ध्यान में सफलता प्राप्त हो। कुछ ऐसे भाग्यशाली व्यक्ति हो सकते हैं जिनके शरीर और मन में कोई विकार न हो तथा जो जन्म से ही आध्यात्मिकता की तरफ उन्मुख हों और अन्तर्दर्शन के मार्ग में विकास करने की प्रबल कामना रखते हों। ऐसे लोग बाह्य जगत की क्रियाओं एवं प्रभावों से मुक्त रहकर कभी भी ध्यान की क्रिया में रत हो सकते हैं। राजयोग सबके लिए है, हर प्रकृति के व्यक्ति इससे लाभान्वित हो सकते हैं। इसके अन्तर्गत उच्च आध्यात्मिक उन्नति के लिए आवश्यक तत्वों की अनिवार्यता पर बल दिया गया है। यह चारित्रिक तत्वों का निर्माण करते हुए साधक को आध्यात्मिकता के पथ पर आगे बढ़ाता है।

पातंजलि ऋषि ने राजयोग को आठ भागों में बाँटा है, जिसे अष्टांग योग भी कहा जाता है। यह चारित्रिक गठन के मूल नियमों से प्रारंभ होकर समाधि की पूर्ण अवस्था तक मार्ग-निर्देशन करता है। समाधि को चार भागों में विभक्त किया गया है। समाधि का चरमोत्कर्ष है आत्म-साक्षात्कार। राजयोग के आठ अंग इस प्रकार हैं :

प्रारम्भिक तैयारी के अभ्यास–

१. यम–(आत्म-नियन्त्रण के अभ्यास)
२. नियम–(जीवन के विकास के लिए आवश्यक नियम)
३. आसन–(विशेष प्रकार की शारीरिक स्थितियाँ)
४. प्राणायाम–(प्राण शक्ति का नियंत्रण)
५. प्रत्याहार–(इन्द्रियों और मन की वृत्ति को अन्तर्मुख करना)

उच्च अवस्था के अभ्यास–

६. धारणा–(ध्येय वस्तु के ऊपर चित्त एकाग्र करना)
७. ध्यान–(ध्येय वस्तु में मन को लगाना, दत्तचित होना)
८. समाधि–(मन की गहराइयों में उतरने तथा आत्मा के साथ एकता स्थापित करने की प्रक्रिया)

इसमें प्रारम्भिक पाँच साधन बहिरंग हैं और शेष साधन अन्तरंग हैं। जब बहिरंग साधनों का अभ्यास पक्का हो जाता है तो उच्च स्तर की अन्तरंग साधना आसान हो जाती है। इसका कारण यह है कि हममें से अधिकांश का मन अनेकानेक विचारों में उलझा रहता है जिससे एकाग्रता और ध्यान की स्थिति पाना दुष्कर हो जाता है। शान्त मन वाला व्यक्ति ही ध्यान कर सकता है। ध्यान और चित्त की एकाग्रता में जो बाधायें उपस्थित होती हैं उन पर अब हम दृष्टिपात करेंगे।

भावनात्मक बाधायें: ये मानसिक विचारों के आन्तरिक संघर्षों और नैतिक अपूर्णताओं के कारण होने वाली संवेगात्मक बाधायें हैं जिनका 'यम' और 'नियम' के अभ्यास द्वारा निराकरण किया जाता है।

शारीरिक बाधायें : शारीरिक अस्वस्थता, दर्द आदि को आसनों के द्वारा दूर किया जाता है।

प्राणशक्ति का गलत ढंग से प्रवाहित होना : हमारे शरीर में एक शक्ति है जिसे 'प्राण-शक्ति' कहते हैं। शरीर के किसी भाग में गलत ढंग, अनियमित ढंग या असंतुलित ढंग से प्राणशक्ति के प्रवाहित होने से शारीरिक, मानसिक तथा स्नायविक बीमारियाँ होती है। इस तरह की बाधाओं को प्राणायाम के अभ्यास से दूर किया जा सकता है।

बाह्य विक्षेप : बाह्य विक्षेपों से भी मानसिक बाधायें उत्पन्न होती हैं। यदि बाह्य कोलाहल हमें निरन्तर घेरे रहा तब हम अपने मन को कैसे अन्दर की ओर मोड़ सकते हैं ? प्रत्याहार का कार्य-क्षेत्र यहीं पर है। इसके द्वारा हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ विषयों से अलग कर दी जाती हैं। इस प्रकार बाह्य घटनाओं का संवाद मस्तिष्क तक नहीं पहुँच पाता है। अगर ये संवाद मस्तिष्क में पहुँच भी जायें तो मस्तिष्क को उनका बोध नहीं होता।

यहाँ पाठकों को यह बात स्पष्ट समझ में आ गयी होगी कि पातंजलि द्वारा वर्णित ये सीढ़ियाँ कितनी महत्वपूर्ण हैं। बिना इनका अभ्यास किये उच्चतर स्थितियों तक पहुँचना प्राय: असम्भव है। अतः इन पाँचों अवस्थाओं के अभ्यास पर हम लोग संक्षेप में विचार करेंगे।

यम

इनकी संख्या पाँच है। इन्हें पढ़कर पाठकों को लगेगा कि समाजशास्त्र की इन बातों से योग का क्या सम्बन्ध है ? परन्तु वास्तव में योग की उच्चतर अवस्था से इनका गहरा सम्बन्ध है और इन नियमों से व्यक्ति के सारे भावनात्मक तनाव और मानसिक बीमारियाँ समाप्त हो जाती हैं।

पातंजलि वास्तव में आदर्शवादी थे। उन्होंने राजयोग का पथ उन व्यक्तियों के लिए निश्चित किया था जो आध्यात्मिक सिद्धि एवं आत्म-दर्शन के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन लगा सकते थे। सम्भवत: उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वे पूरे समाज से सम्बन्ध-विच्छेद कर सकते थे। यह बात उस समय बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है जब वे अपने एक सूत्र में कहते हैं कि ये नियम अलंघ्य हैं। इनका पालन जीवन की बाजी लगाकर

भी करना चाहिये । वस्तुत: आज के युग में ये नियम व्यावहारिक नहीं हैं क्योंकि यौन सम्बन्ध, काम-वासना आधुनिक जीवन के स्वाभाविक अंग हैं। समय-समय पर परिस्थितिवश झूठ भी बोलना पड़ता है । इन सब बातों को देखते हुए हम पाठकों को सलाह देते हैं कि वे इनका पालन अपनी सामयिक सूझ-बूझ का उपयोग करते हुए यथाशक्ति करें । हम इस बात पर बल देना चाहते हैं कि व्यक्तिगत क्षमता और परिस्थिति के अनुसार यथासम्भव यमों का पालन करने से मानसिक शान्ति और स्थिरता प्राप्त होती है । और यह तभी सम्भव है जब हमारे विवेक और विचारों में कोई विरोध न हो।

यम के पाँच भेदों का वर्णन नीचे किया जाता है :

अहिंसा :

अहिंसा अर्थात् हिंसा मत करो । इसका पालन यथासम्भव किया जाना चाहिये । इसका संबंध केवल शरीर से ही नहीं, बल्कि विचारों और वाणी से भी है । अगर आपको कोई कष्ट दे और आपको संघर्ष करना आवश्यक हो गया हो तो आप ऐसा अवश्य करें परन्तु मन में घृणा और द्वेष को न आने दें । वस्तुत: जब व्यक्ति ध्यान की उच्चतर भूमिका में प्रवेश करता है तो उसे किसी को कष्ट देने की इच्छा नहीं होती । वह सबके प्रति संवेदनाशील हो जाता है तथापि सिद्ध पुरुषों को स्वधर्म पालनार्थ ऐसे कार्य करने पड़ते हैं जिससे सम्भव है किसी की हानि हो जाये ।

सत्य :

सत्य का पालन दूसरी अनिवार्यता है । व्यक्ति को जहाँ तक संभव हो, सत्य का पालन करना चाहिये । असत्य ही मानसिक तनाव को जन्म देता है । असत्य का कथन करने वाले, जाने-अनजाने इस भय से ग्रसित रहते हैं कि कहीं उनके झूठ का भंडा-फोड़ न हो जाये । किसी भी तरह का ढोंग झूठ ही है ।

एक बात और भी है । ध्यान का उद्देश्य है सत्य की खोज । व्यावहारिक जीवन में बिना सत्यवादी बने, यह कैसे संभव हो सकेगा ?

अस्तेय :

अस्तेय यानी चोरी नहीं करना और ईमानदारी से रहना। इसके विषय में थोड़ा विचार करना आवश्यक है। अस्तेय की अनिवार्यता से कौन परिचित नहीं है? कपट और बेईमानी से मानसिक तनाव होता है। विशेष कर जो योग पथ पर अग्रसर होना चाहते हैं उन्हें इससे उत्पन्न बाधाओं का अनुभव होगा ही।

ब्रह्मचर्य :

ब्रह्मचर्य को आधुनिक युग में अस्वाभाविक माना जाता है। अत्यधिक स्वच्छन्द प्रकृति के लोग इस नियम को गंभीरता से नहीं लेते। कामक्रिया (मैथुन) से प्राणशक्ति का अपव्यय होता है। यदि ध्यान के अभ्यास में सफलता प्राप्त करनी है तो इस क्रिया में व्यय हो रही शक्ति का संचय करना होगा। यह तो सभी जानते हैं कि किसी भी शक्ति को भिन्न दिशा में मोड़ा जा सकता है। यौन-शक्ति भी इसका अपवाद नहीं है। यदि इस शक्ति का उपयोग आध्यात्मिक लाभ के लिए किया जाये तो ध्यान के उच्च अनुभवों का विकास होगा। साधक को स्वयं इसका अनुभव और परीक्षण करना होगा।

अपरिग्रह :

आवश्यकता से अधिक संग्रह नहीं करना अपरिग्रह का उद्देश्य है। व्यक्ति के पास वैभव हो पर वह उनसे लिपटा न रहे। आप कीमती वस्तुओं के खोने का भय और उनके दुखों को याद करें। आप देखेंगे कि मन इस बात को लेकर सदा ही तनावग्रस्त रहता है। इससे मुक्ति पाने के लिए अपरिग्रह की प्रवृत्ति विकसित करनी होगी। तब आपको स्वतः अनेक बोझों एव दुखों से मुक्ति मिल जायेगी।

नियम

यम की तरह नियमों की संख्या भी पाँच है। इनका सम्बन्ध साधक के व्यक्तिगत अनुशासन से है। इनका उद्देश्य है आध्यात्मिक जिज्ञासु

को योग के कठिन पथ के लिए तैयार करना। यम के समान नियमों का भी पालन करना उचित है। इनका पालन करने से मनुष्य के मानसिक और भावनात्मक विरोध समाप्त हो जाते हैं तथा ध्यान और एकाग्रता के लिए मन तैयार होता है। इन पांच नियमों के बारे में नीचे वर्णन किया जाता है :

शौच (पवित्रता) :

इससे शरीर तथा मन पवित्र होते हैं। नियमित स्नान और शुद्ध सात्विक अन्न इसमें सहायक होंगे। यदि ऐसा नहीं है तो बाह्य और आन्तरिक रोग घर कर लेते हैं, जो ध्यान के लिए सबसे बड़ी बाधा हैं। शरीर की पीड़ा यदि मन को बरबस घेरे रहे तो कोई कैसे अपने मन को अन्तर्मुख कर सकता है? एक दूसरी बात यह भी है, व्यक्ति की ध्यान करने की क्षमता उसके भोजन से अधिक सम्बन्धित है। अशुद्ध और तामसिक अन्न खाने से ध्यान की सूक्ष्म अनुभूति एवं तरंगों के प्रति मन की ग्रहणशीलता कम हो जाती है। ध्यान की सूक्ष्म स्थितियाँ अपने प्रकटीकरण के लिये शुद्ध मन का आधार चाहती हैं। उत्तेजक विचारों से मन को त्राण दिलाने के लिए भी शौच का नियम आवश्यक रूप से लागू होता है।

संतोष :

संतोष से हर स्थिति का सामना करने की क्षमता प्राप्त होती है। जीवन के उतार-चढ़ाव पर अपना मनोभाव बदलने की आदत अधिकांश लोगों में होती है। क्षण में रुष्ट और क्षण में तुष्ट रहने वाला मन ध्यान के लिए उपयुक्त नहीं है। यहाँ बाह्य नहीं, आन्तरिक संतोष की बात कही गयी है। यम और नियम के विकास के लिए संतोष का आविर्भाव होना जरूरी है।

तप :

तपस्या से इच्छाशक्ति बलवान होती है। उपवास, मौनादि छोटे-मोटे तपों द्वारा भी मन को अनुशासित किया ज़ा सकता है। परन्तु इसमें मन को मारने की बात नहीं होनी चाहिये क्योंकि उससे तो कुप्रभाव ही उत्पन्न होगा। योग में इच्छाशक्ति का बड़ा महत्व है। मन चंचल

बालक की तरह इधर-उधर भागता रहता है। आप जो नहीं करना चाहेंगे, मन वही करना चाहेगा। इस तरह मन में और अधिक बाधायें उत्पन्न होंगी जो ध्यान के अभ्यास में बाधक होंगी। इच्छाशक्ति से इसे वश में किया जा सकता है।

स्वाध्याय :

स्वाध्याय शब्द की अनेक व्याख्यायें हैं। अपने मन के क्रिया-कलापों को सतर्कता से देखते जाना प्रथम कोटि का स्वाध्याय है। एक परिस्थिति में खुश, दूसरी में दुखी हो उठना—इस स्थिति पर जरा गौर करें। अपने क्रोध का कारण स्वयं से पूछें। किसी वस्तु के प्रति अपनी अत्यधिक आसक्ति का कारण अपने से ही जानें। आत्मविश्लेषण की पद्धति द्वारा ही यह संभव है। इसके द्वारा हम उन चीजों का भी परिचय पायेंगे जो हमारे मन को उकसाती रहती हैं। स्वाध्याय के द्वारा ध्यान की गहराइयों तक पहुंचना संभव हो सकता है। इससे साधक अपने आप को अधिक से अधिक समझने लगता है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि ध्यान में दिखाई पड़ने वाले बिम्बों को आप दमित न करें। उनसे आपको अवचेतन मन में छिपी बहुत सी चीजों का पता चलेगा तथा आपको अपनी समस्याओं की जड़ें दिखाई देंगी। हम में से अनेक ऐसे हैं जो अनजाने ही अपने मन को मानसिक तनाव में डाले हुए हैं। बिम्बों की जानकारी हो जाने पर ही आप तनावों को दूर कर सकते हैं और उनके दूर होने पर ही आप गहरे ध्यान की अवस्था में पहुँच सकते हैं।

ईश्वर-प्रणिधान :

ईश्वर-प्रणिधान का अर्थ है अपने कर्मों के फल को परमेश्वर के निमित्त अर्पित कर देना। प्रत्येक चेष्टा और कर्म, ईश्वर के प्रति अर्पण-भाव से पूजा के रूप में हो। अपने अहं को मिटाकर, अपने अस्तित्व को उस परम चेतन स्वरूप आत्मा के प्रति समर्पित कर के हमें यह समझना होगा कि हमारा सारा कर्म उस परमेश्वरीय सत्ता की अभिव्यक्ति मात्र है।

हम हमेशा याद रखें कि यह अहं ही हमारी संवेगात्मक और मानसिक समस्याओं का कारण है। अहं से ही हम घृणा, संघर्ष, आसक्ति आदि के दलदल में फँसते हैं। ज्यों-ज्यों हम अपने अहंकार को घटाते

जायेंगे हमारा मन स्थिर और शान्त होता जायेगा। यद्यपि यह अत्यन्त कठिन है पर यदि हम अपना अहं पूरी तरह खो दें तो सहजरूपेण हम सत्य के अत्यधिक निकट पहुँच जायेंगे। कर्म और भक्ति योग इस दिशा में बड़े सहायक होते हैं।

यम और नियम—सारांश

प्रश्न उठता है कि मनुष्य प्रकृति से कपटी और असत्यवादी है। अत: यम और नियम का पालन उसकी मानसिक कुण्ठायें खोलने के बदले और अधिक उलझनें पैदा कर सकता है। अत: यम-नियम हमें कहाँ तक मदद करेंगे ? यह प्रश्न विवादास्पद है, फिर भी महान चिन्तकों एवं ऋषियों ने इस बात पर बल दिया है कि मनुष्य की मूल प्रकृति सात्विक है। वह आन्तरिक रूप से सच्चा, ईमानदार और सुन्दर होता है। उसकी अन्तरात्मा का स्वरूप सत्यमय है। अत: वह सत्यप्रिय है। वह जो कुछ इस मूल प्रकृति के विरुद्ध करता है, उसका कारण उसकी परि-स्थितियाँ हैं। इन परिस्थितियों में गरीबी और दुर्व्यवहार मुख्य हैं जो मनुष्य को तरह-तरह के कुकर्म करने को प्रेरित करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वह जो कुछ कर रहा है, वह उसकी प्रकृति से संचालित हो रहा है, परन्तु बात कुछ और होती है। उसके अवचेतन मन में संघर्ष उत्पन्न होते हैं जिसका कुप्रभाव उस के चेतन मन पर पड़ने लगता है। इससे जो मानसिक अस्तव्यस्तता होती है, उसका ठीक-ठीक कारण व्यक्ति नहीं समझ पाता। मनुष्य क्या करता है और वास्तव में क्या करना चाहता है, इसके बीच की खींचतान ही अधिकांशत: मानसिक असंतुलन का कारण बनती है। इसलिये बिना किसी भेद-भाव के यम-नियम का पालन करना अपेक्षित है। लोगों को ये यम-नियम कुछ अव्यावहारिक और बोझीले लगते हैं। लेकिन हमें यह याद रहे कि हमारा लक्ष्य असीम है, हमारा लक्ष्य पूर्णता की ओर उन्मुख होना है। यदि इस लक्ष्य-बोध से हम किंचित भी संचालित होते रहे, तो निश्चित रूप से हम सही दिशा में आगे बढ़ेंगे। इस मार्ग में हमारा छोटा-सा कदम भी सहायक सिद्ध होगा। हमें अपनी क्षमता से अधिक श्रम करने की आवश्यकता नहीं है। आध्यात्मिकता के मार्ग में धीर एवं सौम्य गति ही अपेक्षित है।

आसन

महर्षि पातंजलि द्वारा वर्णित राजयोग की परम्परा में आसन की परिभाषा देते हुए बतलाया गया है कि शरीर को सुखपूर्वक तथा स्थिरता से रखन को आसन कहते हैं। आसन में स्थिर होकर बैठने से व्यक्ति को बिना शारीरिक बाधा के ध्यान लगेगा और चित्त को एकाग्रता को प्राप्ति होगी। शरीर और मन में निकट सम्बन्ध होने के कारण ध्यान लगाने के लिए यह एक आवश्यक बात है। शारीरिक असुविधायें ध्यान में बाधा पहुँचाती हैं। इसकी वजह से मन उन असुविधाओं से ही निपटने में व्यस्त हो जायेगा।

पाठक जानते हैं कि ऐसे अनेक आसन हैं जो ध्यान के लिये उपयुक्त नहीं हैं। ये ध्यान के आसन के विपरीत आसन हैं; इनका उपयोग विभिन्न शारीरिक रोगों के उपचार के दृष्टिकोण से किया जाता है। तथापि कुछ उपचारात्मक आसन जैसे शीर्षासन, हलासन आदि का अभ्यास साधकों को ध्यान में बहुत सहायता पहुँचाते हैं। यदि ये आसन प्रतिदिन नियमित रूप से कियें जायें तो शरीर और मन के रोगों का निवारण होता है तथा उनसे बचाव भी होता है। ये कड़ी मांसपेशियों को ढीली तथा स्नायु संस्थान को क्रियाशील बनाते हैं। मन शान्त हो जाता है। ये आसन ध्यान में बाधा पहुँचाने वाले तत्वों को दूर कर के सफल ध्यान करने में सहायक होते हैं। ये आसन दैनिक जीवन में क्रियाशीलता और नव-स्फूर्ति का संचार करके उत्साह भर देते हैं। इन आसनों की वृहद चर्चा "आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बन्ध" (बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रकाशित पुस्तक) में की गयी है। पाठक इसका अध्ययन करके अपना दैनिक कार्यक्रम निर्धारित करें, ऐसा सुझाव दिया जाता है।

प्राणायाम

योग में प्राण शब्द का प्रयोग बहुलता से किया गया है। पर इसका अर्थ लोगों को ठीक मालूम नहीं है। प्राण को इस तरह परिभाषित किया जा सकता है—यह ऊर्जा है जो जीवन धारण करने में सहायक है। इस ऊर्जा को ही प्राण कहा जाता है। इसका विशेष वर्णन इस पुस्तक के 'प्राणायाम' वाले अध्याय में दिया गया है। पाठक वहाँ इसका अध्ययन करेंगे।

प्राण पदार्थ और मन को चेतना से संयुक्त करने का माध्यम है। यह स्वयं जड़ तत्व है। प्राणशक्ति के बिना चेतना अपने को बाह्य जगत में प्रगट नहीं कर पाती। इसलिए यह बात तर्कसंगत प्रतीत होती है कि प्राणशक्ति के प्रवाह पर नियंत्रण करने से ध्यान के मार्ग में सहायता मिलती है। इसीलिये प्राणशक्ति को नियंत्रण करने के प्रयास में प्राणायाम की अनेक पद्धतियों का आविष्कार हुआ है।

बहुत से लोग समझते हैं कि प्राणायाम का मतलब होता है 'श्वास पर नियंत्रण'। परन्तु यह प्राणायाम का मुख्य लक्ष्य नहीं है। इसका उद्देश्य है प्राणशक्ति के प्रवाह पर नियंत्रण। यह प्राणशक्ति श्वास-प्रश्वास की क्रिया से सम्बन्धित है। इसी सम्बन्ध के कारण प्राण-प्रवाह नियंत्रण क्रम में श्वास नियंत्रण क्रिया स्वत: हो आती है।

प्राणायाम के बिना भी ध्यान किया जा सकता है लेकिन इसका नियमित अभ्यास ही ध्यान में सफलता प्रदान करेगा। उदाहरणार्थ राजयोग में ध्यान के पूर्व की स्थिति है 'धारणा' जिसका मोटा अर्थ है एकाग्रता। किसी वस्तु पर एकाग्र होने की क्षमता के बिना ध्यान संभव नहीं है। ध्यान की सामान्य पद्धति है आँखें बन्द करके किसी आन्तरिक वस्तु का दर्शन करना। यह क्रिया अपने आप में कठिन है क्योंकि मन पर पड़ने वाला प्रतिबिम्ब धुँधला हो जाता है या मिट ही जाता है। प्राणायाम का अभ्यास उस मानसिक प्रतिबिम्ब को बनाये रखने में सहायक होता है। शरीर में समुचित प्राण-प्रवाह द्वारा ही यह सम्भव होता है। इस प्रवाह पर प्राणायाम से नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है।

प्रत्याहार

इन्द्रियों को अन्तर्मुखी करने की कला का नाम प्रत्याहार है। हममें से अधिकांश व्यक्तियों की चेतना बहिर्मुखी रहती है। दूसरे शब्दों में हमारा मन शरीर के बाहर की घटनाओं में ही मुख्यत: लगा रहता है। ध्यान में सफलता प्राप्ति के लिये अपने मन को बाह्य सम्पर्कों से विलग करना होगा। हमें अपने परिवेश को भूलना पड़ेगा। हमारे मन की जन्मजात आदत है– बहिर्मुखी रहना, बाह्य जगत का दर्शन करना। इस

आदत से पीछा छुड़ाना आसान नहीं है। अधिकांश लोगों के लिए क्षणभर भी बाह्य जगत को भूल जाना दु:साध्य सा लगता है। ध्यान में साधक को आँखें मूँद कर अभ्यास करने का निर्देश दिया जाता है। उन्हें कहा जाता है कि आँखें खोलने का लोभ संवरण करते हुए वे स्वयं से प्रश्न करें—"बाहर क्या है, जिसमें मेरी दिलचस्पी होगी ? मैं एक कमरे में हूँ और बाहर निश्चित रूप में कुछ भी नहीं घट रहा है।" वस्तुगत चेतना से चुम्बकवत् सम्बद्ध रहने की हम सब की आदत सी पड़ गयी है।

सबसे बड़ी समस्या यह है कि हमारा मन बाह्य जगत से ज्ञानेन्द्रियों द्वारा निरंतर सूचनायें ग्रहण करता रहता है। हमारा मन बाह्य जगत से तब तक संबंध-विच्छेद नही कर सकता, जब तक उसे ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त संवेदनाओं से उत्तेजन और उद्दीपन मिलते रहेंगे। जब तक वह इन उत्तेजनाओं को अन्दर से अस्वीकार नहीं करेगा, तब तक बाहर के संसार से उसका संबंध-विच्छेद नहीं होगा। हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ जितनी सूचनायें मस्तिष्क में पहुँचाती हैं, हमारा मस्तिष्क उन सभी चीजों पर ध्यान नहीं देता; वह उनमें से आवश्यकता या तीव्रता के अनुसार उनका चयन कर लेता है। अगर ऐसा न हो तो मस्तिष्क की स्थिति उस कमरे की तरह हो जायेगी, जहाँ एक साथ पचास रेडियो बज रहे हों और सब में भिन्न-भिन्न कार्यक्रम प्रसारित हो रहे हों। इस परिस्थिति में कोई भी आवाज स्पष्ट सुनाई नहीं पड़ेगी। इस तरह मस्तिष्क में सूचनाओं को चयन करने का कार्य तो पहले से ही चल रहा है।

अब करना यह है कि यह कार्य घटते-घटते शून्य तक पहुँच जाय। हम लोग कभी-कभी इस स्थिति में होते हैं। जब हम कोई पुस्तक पढ़ते रहते हैं तो आस-पास की सुधि नहीं रह जाती; घड़ी की टिक-टिक की आवाज भी नहीं सुन पड़ती; बगल के कमरे में बैठे लोग बातें करते हैं, तो उनकी आवाज भी नहीं सुनाई पड़ती। कभी-कभी आस-पास में यदि पटाखा भी छूट जाये तो उसे भी हम नहीं सुन पाते। प्रत्याहार में वातावरण के प्रति इसी प्रकार की शून्यता होती है, पर उसमें पुस्तक पढ़ने जैसा कोई उत्तेजक सहारा नहीं होता जिसमें मन की बौद्धिक क्षमता ही लीन हो जाये। मन में तल्लीनता-एकाग्रता आनी चाहिए पर उसे बौद्धिकता से युक्त नहीं होना चाहिये।

मस्तिष्क का स्वभाव एक ऐसे चंचल, नटखट बालक की तरह है जो मना करने पर भी वही काम करता है जो वह चाहता है। इसलिए जब आप इन्द्रिय-जन्य प्रत्यक्ष ज्ञान की अनुभूति को हटाना चाहते हैं तो वह आप की अवहेलना कर उन अनुभूतियों को तीव्र कर देता है। ठीक इसके प्रतिकूल, अगर आप अपने मस्तिष्क को बाह्य पदार्थों की ओर लगाने का प्रयास करें तो कुछ ही समय के बाद यह उनसे विमुख होने लगेगा और इन्द्रियानुभूति से अपना सम्पर्क हटा लेगा। मस्तिष्क की यही स्थिति, जो प्रत्याहार है, ध्यान के लिए भी आवश्यक है। मस्तिष्क की इसी विशिष्टता का उपयोग अन्तर्मौन के अभ्यास में होता है, जो प्रत्याहार और ध्यान की तैयारी के लिए प्रारंभिक परंतु अद्भुत सूत्र है।

एक आसन में अभ्यास की अवधि भर बैठ पाने की क्षमता पर प्रत्याहार का अभ्यास बहुत हद तक निर्भर करता है। जिन्हें एक आसन में बैठने में कठिनाई होती है उनका ध्यान बार-बार आसन बदलने में ही लगा रहता है।

इस पुस्तक में बताये गये तरीकों से व्यक्ति में अपने शरीर के विभिन्न अंगों एवं उनकी क्रियाओं के प्रति जागरूकता विकसित होगी। तब वह मस्तिष्क को एकाग्र करने में और उसे आंतरिक चीजों की ओर अभिमुख करने में सफल होगा। फलतः वह वातावरण से विमुख होकर प्रत्याहार की स्थिति में पहुँच जायेगा। इससे मस्तिष्क की भटकने वाली प्रवृत्ति को तुष्टि मिलेगी परन्तु एक नियंत्रित रूप में। इस प्रकार के प्रशिक्षण के बिना मस्तिष्क ऊपर से लादे गये नियंत्रणों के प्रति विद्रोह करता है और सारी प्रगति ठप पड़ जाती है।

धारणा

धारणा की स्थिति में आने के पूर्व मस्तिष्क की सारी बाधायें शांत हो जानी चाहिए। फिर भी मस्तिष्क विचारों के कोलाहल से घिरा रहता है। चूंकि बाहर की उत्तेजनाओं को प्रत्याहार की साधना द्वारा बन्द कर दिया जाता है अतः वर्तमान के विचार भले ही न हों पर दूसरे प्रकार के अनुभव तो मस्तिष्क में होंगे ही। इन्हें दो भागों में बाँटा जा

सकता है– भूतकाल की स्मृतियाँ और भविष्य की घटनाओं की कल्पना। मस्तिष्क की इस क्रिया को धारणा के अभ्यास द्वारा रोक सकते हैं।

इस संदर्भ में धारणा का अर्थ है मस्तिष्क को सभी चीजों से हटाकर किसी एक चीज पर केन्द्रित करना। जब यह स्थिति आ जाती है तो मन स्वत: स्थिर हो जाता है। बन्द आँखों के आगे रखे गये किसी आन्तरिक बिम्ब पर या बाह्य पदार्थ पर ही चित्त एकाग्र हो जाता है। यद्यपि बाह्य वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने से मस्तिष्क के इधर-उधर भटकने का भय है, परन्तु जो आंतरिक्ष बिम्ब्र देख पाने में असमर्थ हैं, उनके लिए यह उपयोगी विधि है। यदि किसी बाह्य वस्तु पर ही प्रतिदिन लम्बे समय तक एकाग्र होने का अभ्यास किया जाये, तो बन्द आँखों से उसका बिम्ब देखना सम्भव हो जाता है। सभी विचारों को परे हटाकर किसी एक पर एकाग्र होने की क्रिया कठिन है। इसके लिये एकाग्रता की समर्थ क्षमता की आवश्यकता होती है।

वास्तव में यौगिक एकाग्रता में मस्तिष्क जड़ नहीं हो जाता। उस समय मस्तिष्क की प्रगति भी नहीं रुकती। मस्तिष्क एक वस्तु पर टिक जाता है। उसकी गतिशीलता बनी रहती है। इस स्थिति में व्यक्ति उस वस्तु के उन पहलुओं का दर्शन करता है जिन्हें चंचल मस्तिष्क द्वारा देख पाना सम्भव नहीं था। किसी कला-प्रदर्शनी में एक व्यक्ति अगर उड़ती दृष्टि से सभी चित्रों को देख जाये, तो वह उनकी बारीकियाँ नहीं परख सकेगा, परन्तु एक-एक चित्र पर उसकी एकाग्र-दृष्टि पड़े, तो उसके सामने चित्र के सूक्ष्म कला पक्ष भी उद्‌भासित हो जायेंगे।

जो लोग सोचते हैं कि उन्होंने एकाग्रता शक्ति विकसित कर ली हैं, उनके लिये भी एक वस्तु पर एकाग्र हो पाना कठिन हो जाता है। किसी विचार-शृंखला पर एकाग्र होने की अपेक्षा किसी पदार्थ पर ध्यान टिका पाना कठिन है परन्तु यह क्रिया उतनी ही लाभकारी भी है क्योंकि जिस पदार्थ पर मन एकाग्र किया जाता है उसकी गहराई तक पहुँचा जा सकता है।

किसी एक वस्तु पर एकाग्रता असंभव नहीं है। यदि राजयोग की प्रारंभिक पाँच अवस्थाओं का अनवरत अभ्यास किया जाये, तो सभी मानसिक बाधाओं का शमन हो जायेगा। जब मस्तिष्क इन मूल अभ्यासों

के द्वारा शुद्ध हो जायेगा, तब एकाग्रता स्वत: आ जायेगी। उसके लिये कोई विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ेगा।

ध्यान

ध्यान धारणा शक्ति का प्रसार है। पातंजलि ने इसे एक वस्तु पर एकाग्रता का निर्बाध रूप से प्रवाहित होना बतलाया है। दोनों के बीच एक सूक्ष्म अन्तर है। धारणा में मन ध्यातव्य वस्तु से भागने की चेष्टा में रहता है और साधक उसे खींच लाने की कोशिश करता है। ध्यान की अवस्था में मन ध्यातव्य वस्तु में पूर्णत: तल्लीन हो जाता है। ध्यान की स्थिति में वस्तु के सूक्ष्म स्वरूप की अनुभूति होती है। धारणा की अपेक्षा ध्यान में एकाग्रता की गहराई बहुत ज्यादा होती है, जो व्यावहारिक जीवन के लिए भी आवश्यक है।

समाधि

समाधि ध्यान का पूर्णत: प्रस्फुटित रूप है। यह ध्यान की चरम परिणति है। इसकी वस्तुत: चार अवस्थायें हैं। योग में पूर्ण सिद्धि प्राप्त करने के पूर्व समाधि की चारों अवस्थाओं को अच्छी तरह पार कर लेना आवश्यक है। समाधि का दूसरा परिणाम है आत्मज्ञान की प्राप्ति अथवा आत्मसाक्षात्कार। समाधि की विभिन्न अवस्थाओं की चर्चा इस पुस्तक में नहीं की जायेगी क्योंकि उनके अनुभवों का वर्णन शब्दों की सीमा से परे है।

महर्षि पातंजलि ऋषि का कहना है कि समाधि ध्यान की वह अवस्था है जिसमें ध्यातव्य वस्तु के अतिरिक्त अन्य कोई समवर्ती चेतना कार्य नहीं करती। ध्यान की प्रारम्भिक अवस्थाओं में ध्येय विषय (इष्ट देव) के सूक्ष्म तत्व धीरे-धीरे प्रगट होते हैं। तब भी उस समय असली तत्व (सार तत्व) प्रगट नहीं होता। कोई चीज इसे रोके रहती है। यह रुकावट या बाधा है– साधक का अपना मन। यह ध्येय और चेतना के बीच एक पर्दा खड़ा कर देता है। मन .ा ज़ो अहं तत्व है वह चैतन्य स्वरूप

आत्मा के असली तत्व को छिपा देता है। एक गायक का उदाहरण लें। जब वह आत्म-विस्मृत होकर गाता है तब उस स्थिति में उसका गायन अच्छा होता है। जब वह श्रोताओं की ओर उन्मुख होकर गाता है (अर्थात् उसके गाने के साथ आत्मख्याति की अभीप्सा और अहं रहते हैं) तो उसका संगीत तल्लीनतापूर्ण नहीं होता। संसार के महापुरुषों के जीवन तथा कार्यों से हम शिक्षा ले सकते हैं। जब उन्होंने तल्लीनता की स्थिति में अपने अहं को विस्मृत कर दिया, तभी वे महान कार्य कर सके।

जब मन अपनी बाधायें दूर कर लेता है, तब उच्चतर प्रेरणायें स्वतः उद्भासित हो जाती हैं। ध्यान की उच्च अवस्था में यही होता है। समाधि में मन की स्वयं की चेतना लुप्त हो जाती है। ध्यातव्य और ध्यानार्थी के बीच भेद समाप्त हो जाता है; दोनों एक हो जाते हैं। इसी स्थिति में ध्यातव्य का चरम सत्य प्रगट होता है, क्योंकि जब ध्याता-ध्येय में कोई अन्तर नहीं रह जाता तो एक के विषय में दूसरा अवश्य जानेगा। ज्ञान का विषय, ज्ञान करने वाला और ज्ञान की प्रक्रिया– तीनों मिलकर एक हो जाते हैं। इस स्थिति को शब्दों में वर्णन करना अत्यन्त कठिन है, क्योंकि यह अनुभव इन्द्रियातीत तथा सामान्य अनुभव से परे है। एक उदाहरण लें– एक व्यक्ति दूर से किसी भीड़ को देखता है। जब वह भीड़ में शामिल हो जाता है, तब भीड़ के हल्ला-गुल्ला की स्पष्ट जानकारी उसको हो जाती है। इसी प्रकार समाधि में दृष्टा, दृश्य और देखने की प्रक्रिया– तीनों एक हो जाते हैं।

वास्तव में समाधि की अवस्था में प्राप्त अनुभव अवर्णनीय हैं। हमारे दैनिक अनुभवों की पहुँच वहाँ तक नहीं है। समाधिस्थ व्यक्ति को देखकर यह नहीं जाना जा सकता कि उस अवस्था में वह क्या अनुभव कर रहा है। देखने वाले को यह भी लग सकता है कि वह मात्र सो रहा है या सोच रहा है। समाधि में जाने वाला व्यक्ति भी अपने अनुभवों की ऊँचाई के प्रति सजग नहीं होता। समाधि टूटने पर जब व्यक्ति सामान्य चेतना में लौटता है, तो उसकी क्रियाओं पर विवेक और शांति की एक स्वस्थ आभा प्रकट होती है। एक बार भी समाधि का अनुभव पा लेने वाले व्यक्ति के विचार-व्यवहार में बहुत अन्तर आ जाता है। वह हर वस्तु को एक नये दृष्टिकोण से देखने लगता है।

धारणा से लेकर समाधि तक की स्थितियों को उपलब्धि की मात्रा के अनुसार अलग-अलग नाम दिया गया है । एक स्थिति में पूर्णता प्राप्त होने पर दूसरी स्थिति स्वत: आ जाती है । ये आसन, प्राणायाम जैसी प्रारम्भिक स्थितियों की तरह बिल्कुल अलग-अलग स्थितियाँ नहीं हैं। एक स्थिति से दूसरी स्थिति में अचानक नहीं जाया जाता। इन में साधक की प्रगति स्वाभाविक एवं सहज होती है । इन्हीं परिस्थितियों में गुरु की आवश्यकता होती है क्योंकि तब साधक की चेतना पूर्णत: अनुभवों से भरी होती है, तथा गुरु का ही मार्गदर्शन उसे लक्ष्य की ओर निर्बाध गति से आगे ले जा सकता है ।

अष्टम अध्याय

योग के अन्य मार्ग और ध्यान

यह पहले ही कहा जा चुका है कि सभी प्रकार के योग-मार्गों का एक ही लक्ष्य है– "ध्यान की प्राप्ति"। पाठक यह न समझें कि किसी एक योग-मार्ग का अनुसरण करने से अन्य मार्गों से अपने को विमुख करना पड़ेगा। यद्यपि योग के इन विभिन्न रूपों को योग के भिन्न-भिन्न मार्ग कहा गया है तथापि यहाँ पर यह कहना उचित है कि योग एक प्रधान मार्ग है और उसके विभिन्न रूप गलियाँ हैं जो चारों तरफ से आकर प्रधान मार्ग में मिलती हैं। इसकी तुलना रस्सी से भी की जा सकती है। जिस प्रकार कई लड़ियों को संग्रहीत करने से रस्सी बन जाती है, उसी प्रकार एक-दूसरे के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए योग की विभिन्न लड़ियों का अभ्यास करने से ध्यान की उपलब्धि होती है।

भक्ति योग

भक्ति योग का सम्बन्ध भाव और भक्ति के साथ है। इसमें परम सत्ता के किसी रूप के प्रति आत्म-समर्पण होता है। भक्त अपनी भावना का आधार कृष्ण, राम, बुद्ध, ईसा, महावीर, मुहम्मद आदि दिव्य विभूतियों को बनाता है। गुरु या किसी पूज्य व्यक्ति के प्रति भी भक्ति का भाव उमड़ सकता है। मुख्य बात यह है कि अपने इष्ट के प्रति भक्त का इतना भावनात्मक लगाव होता है कि वह अपनी सारी भावनात्मक शक्तियों को, अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को, परम चेतना के वैयक्तिक रूप की सेवा में लगा देता है। राजयोग या ज्ञानयोग की तरह वह उसके अवैयक्तिक रूप में अपना ध्यान नहीं लगाता है। यहाँ भक्त का प्रेम मूर्त्त आधार पर टिका हुआ होता है।

प्राय: सभी में कम या ज्यादा भाव और भक्ति की मात्रा अवश्य रहती है। यह मानव प्रकृति का एक विशेष गुण है। बहुत लोग इस भावना को दबा देते हैं; फलत: यह बीमारियों के रूप में प्रकट होती है। कुछ लोगों का प्रेम और भक्ति अनेक दिशाओं में प्रकट होती है और चारों तरफ बिखर जाती है जिसके कारण उनका प्रेम प्रभावहीन हो जाता है। इससे मानसिक असन्तुलन भी उत्पन्न हो जाता है क्योंकि बहुतेरी चीजें एक साथ उनकी भावनात्मक ऊर्जा का आधार नहीं बन सकतीं। इसी तरह से व्यक्ति अपनी भावना का वह आधार ढूंढने में लगा रहता है, जिसके लिये वह अपनी सुध-बुध खो दे, जिसके प्रति वह अपनी सम्पूर्ण भावनाओं को आत्म-समर्पित कर सके। यह खोज साधक की आयु-पर्यन्त चल सकती है। एक बार भक्ति के योग्य आधार प्राप्त हो जाये तो भावनात्मक समस्यायें समाप्त हो जाती हैं और हम एक पूर्ण जीवन बिताना शुरू कर देते हैं।

हम अपनी भक्ति का मुख्य आधार किस प्रकार ढूंढें ? वास्तव में भक्ति का आधार हमें खोजना नहीं पड़ता; यह स्वत: प्रकट हो जाता है। व्यक्ति सहज रूप से इस मार्ग पर अग्रसर होता है। यद्यपि भक्ति-भावना सबमें होती है पर यह कुछ कारणों से दबी रह सकती है। भक्ति का मार्ग सभी मार्गों से अनुपम है। इसे प्रयत्न से विकसित नहीं किया जा सकता। शक्तिशाली और व्याकुल करने वाली यह भक्ति किसी-किसी के हृदय में स्वत: उमड़ने लगती है। ऐसा बचपन के संस्कारों के कारण भी हो सकता है। किन्तु एक बात निश्चित है कि जैसे-जैसे हम योग के आधार पर जीवन-यापन शुरू करते हैं, मानसिक विक्षेप कम होने लगते हैं और हमारी चेतना जीवन का एक सही दृष्टिकोण देखने लग जाती है। उस समय हमारे अन्दर स्वत: आराध्य देव का दर्शन होने लगता है।

भक्ति योग में ध्यान की सहज स्थिति पा लेना संभव है क्योंकि भक्त की चेतना सदैव अपने इष्ट देव के प्रति सहजरूपेण उन्मुख रहती है। चित्त की एकाग्रता उसकी भक्ति-भावना की तीव्रता के ऊपर निर्भर करती है। जो व्यक्ति जो सदा ही अपने इष्ट के चिन्तन में लगा रहता है, उसका मन अत्यन्त एकाग्र होता है। जीवन के उतार-चढ़ाव उसके मन को कम ही छू पाते हैं। आराध्य के प्रति मन को तल्लीन रखने वाले व्यक्ति का

अहं समाप्त होने लगता है। लम्बे काल तक इस स्थिति में रहने के फलस्वरूप वह अपने आपको भूल जाता है। इस तरह उसके क्लेश और कामनाओं का अन्त होने लगता है। ध्यान के लिए यह आवश्यक भी है। भक्ति मार्ग द्वारा इस अवस्था को प्राप्त कर लेने के बाद ही सुख-शांति एवं परमानन्द की प्राप्ति की जा सकती है।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि ध्यान और भक्ति का आधार चंचलता पैदा करने वाला न हो। आदर्श भक्ति ध्यान की उच्च स्थिति और आत्मसाक्षात्कार तक की योग्यता स्वतः प्राप्त कराने के लिए पर्याप्त होती है। साधक में पूर्ण एवं अखण्ड भक्ति हो तो उसके लिए राजयोग, कर्मयोग आदि के अभ्यास अनावश्यक हो जाते हैं। परन्तु बहुधा कम ही व्यक्ति इस सीमा तक पहुँच पाते हैं। हममें से बहुत लोग तो कुछ ही समय के लिए भक्ति-भाव में लीन रह सकते हैं। उनकी आस्था भी समाप्त होने लगती है। तब ध्यान की स्थिति उनसे बहुत दूर हो जाती है। ऐसा होने पर अन्य पूरक योग मार्गों का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है।

वास्तव में भक्ति योग एक शक्तिशाली साधन है जिसमें साधक का मन अपने इष्ट की आराधना में लगा रहता है और इस तल्लीनता में उसका अहं भी समाप्त हो जाता है। भक्ति का उपास्यदेव, साधारणतः किसी परम्परा से प्राप्त ईश्वर का कोई स्वरूप, कोई विशिष्ट व्यक्ति या गुरु हो सकता है। यदि भक्ति सहज हो तो भक्ति योग सर्वाधिक सुगम मार्ग है। तथापि, भक्ति को तीव्र करने के लिये कुछ उपाय बतलाये गये हैं।

श्रवण: इसका सम्बन्ध बाइबिल, कुरान, श्रीमद्भागवत आदि शास्त्रों का अध्ययन एवं ईश्वर की महिमा-गान करने वाली कहानियों का श्रवण करने से है।

नाम संकीर्तन : इसमें परमेश्वर के पवित्र नाम का गायन होता है।

स्मरण : जप के द्वारा ईश्वर का निरन्तर स्मरण किया जाता है।

वन्दना : भगवद् प्रार्थना का नाम वन्दना है।

अर्चना : इसमें उपास्य देव की पूजा विधि-विधान (अनुष्ठान) से की जाती है। यह सभी धर्मों में किसी न किसी रूप में प्रचलित है।

भक्ति की उच्च अवस्था में भक्त अपने को भगवान का सेवक मानता है और उनकी इच्छा के प्रति अपने आपको समर्पित कर देता है। फिर भी यह प्रेम अहं का स्वरूप है। भक्त का अनुराग उसके प्रेम करने की इच्छा से संचालित होता है। यह इच्छा मानवीय प्रेम की इच्छा से भिन्न नहीं है। भक्ति में भी दो कें बीच सम्बन्ध स्थापित किया जाता है तथा उपासक और उपास्य के प्रति भेद रहता है। यदि भक्त को आत्मज्ञान प्राप्त करना हो तो उसे यह भेद मिटा देना होगा।

आत्म-ज्ञान हो जाने पर भक्त "अहं ब्रह्मास्मि" (मैं ब्रह्म हूँ) की अनुभूति करने योग्य हो जाता है। वह ईसामसीह की तरह—"मैं और मेरे पिता एक ही हैं" कह सकने की स्थिति में आ जाता है। भक्ति के माध्यम से भक्त चरम लक्ष्य की देहरी तक पहुँच जाता है। अपने अन्तिम लक्ष्य को पाने के लिए उसे यह देहरी भी लाँघनी पड़ती है। इस स्थिति में भक्त अपने प्रेम का विस्तार इतना अधिक कर लेता है, कि उसमें द्वैत नहीं रह जाता। इस आत्मीयता में वह स्वयं प्रेममय ही बन जाता है। इस प्रकार एक राजयोगी या ज्ञानयोगी की भांति ही वह परम दिव्यतापूर्ण स्थिति को प्राप्त करता है। प्रेम का यह पथ उसे परम ज्ञान तक पहुँचा देता है। जिन आध्यात्मिक जिज्ञासुओं का उद्देश्य ध्यान के अनुभवों को प्राप्त करना है, वे समझ लें कि भक्ति इसका सबसे सशक्त साधन है। भक्ति मन को वह शक्ति प्रदान करती है जिससे ध्यान स्वत: प्रतिष्ठित हो जाता है। जिन्हें अपने इष्ट की जानकारी नहीं है वे योग करते हुये तब तक प्रतीक्षा करें जब तक वह स्वत: प्रकट नहीं हो जाता क्योंकि वह एक दिन अवश्य प्रकट होगा, शायद तब जब आपको उसके प्रकटीकरण की तनिक भी आशा न हो।

कर्मयोग

कर्मयोग सिर्फ कर्म करना ही नहीं है। यह है फल की आशा से रहित, पूर्ण चेतना-युक्त कर्म-सम्पादन। अच्छी तरह से सम्पन्न किया गया कार्य ही कार्य की पूर्णता है, न कि अन्त में मिलने वाला पारिश्रमिक या पुरस्कार। यह निष्काम कर्म है। इसमें व्यक्ति अपना अहं त्याग कर

कार्य करता है और कार्य का माध्यम,एक उपकरण मात्र बनकर रहता है। प्रारंभ में कर्मयोगी सिर्फ कर्म ही करता है। यद्यपि यह बात ठीक है कि व्यक्ति अपने अहं को पोषित करने के लिये चेतन या अचेतन रूप से अपने कार्य के लिए और कुछ नहीं तो कम से कम प्रशंसा के दो शब्द तो सुनना ही चाहता है; परन्तु निरन्तर अपने को कार्य में तल्लीन रखकर मानसिक प्रयत्नों द्वारा धीरे-धीरे अपनी चेतना को अहं से मुक्त किया जा सकता है।

प्रारम्भ में कर्मयोग का साधक अपने को परम चेतना का एक सुन्दर उपकरण बनाना चाहता है। इस पूर्णता में साधक के व्यक्तिगत मनमौजी स्वभाव और अहं बाधा पहुँचाते हैं। जब व्यक्ति अपने को कर्त्ता न मान कर उपकरण मानता है, उसी समय कार्य का स्तर ऊँचा उठ जाता है। उसके कार्य सुन्दर और दक्षतापूर्ण ढंग से सम्पन्न होने लगते हैं। जब व्यक्ति उपकरण मात्र है तो उसे क्रोधित होने या निराश होने की आवश्यकता क्या है? इच्छा और अहं के कारण ही व्यक्ति दूसरे के प्रति दुर्व्यवहार करता है। महात्मा गांधी आदर्श कर्मयोगी थे। उन्होंने अपने जीवन में कर्मयोग को साकार किया। उन्होंने कर्मों को इच्छा-अनिच्छा,रुचि-अरुचि से अप्रभावित रहकर किया। सभी कर्मों को उन्होंने परम चेतना की इच्छा के अनुसार संचालित ब्रह्माण्ड की दैवी प्रक्रिया का एक अंग माना। वह अपने को मात्र उपकरण मानते रहे और द्रष्टा या साक्षी भाव से ही अपने कर्मों में संलग्न रहे। उन्होंने अपने समस्त कर्मों का फल ईश्वर या मानवता की सेवा में अर्पित कर दिया।

कर्मयोग का ध्यान के साथ क्या सम्बन्ध है? कर्मयोग अहं से पीछा छुड़ाने का सबसे बड़ा और सशक्त साधन है। इच्छा-अनिच्छा, रुचि-अरुचि व मानसिक तनाव अपने आप समाप्त होने लगते हैं। ये सब ध्यान की बाधायें ही तो हैं। इनका कम हो जाना ध्यान की उच्च स्थिति तक पहुँचने में सहायक होता है।

बेकार बैठने से या एकान्तवास करने से मानसिक समस्यायें नहीं सुलझतीं। वे मन के एक कोने में दबी रह जाती हैं। कर्मयोग की क्रियाशीलता आन्तरिक द्वन्द्वों को उभार देती है। तब कर्मयोगी उन्हें आत्म-सुझाव तथा अन्तर्मुखी सजगता द्वारा समाप्त करने की चेष्टा करता है।

कर्मयोग का निरंतर अभ्यास एकाग्रता की क्षमता को बढ़ाता है। सभी योग मार्गों में एकाग्रता ही पहली शर्त है। अतः कर्मयोग में एकाग्रता का विकास स्वभावतः ध्यान की ओर ले जाता है। राजयोग और कुण्डलिनी योग में भी एकाग्रता को बहुत महत्व दिया गया है।

कर्मयोग की उच्च अवस्था ध्यान का रूप ले लेती है। कर्त्ता, कार्य और कार्य से प्रभावित होने वाले व्यक्ति या पदार्थ तीनों एक हो जाते हैं। इस स्थिति में कर्मयोगी सचमुच ध्यानस्थ हो जाता है।

कर्मयोग में इच्छाशक्ति का विकास होता है। इसको महत्व नहीं देने की भूल बहुत लोग कर बैठते हैं। सामान्यतः इच्छाशक्ति व्यक्ति की क्षमताओं और कर्मों को एक निश्चित लक्ष्य तक पहुँचाने में सहायक होती है। कर्मयोग में व्यक्ति पूरी दक्षता से काम करना चाहता है। इससे उसकी इच्छाशक्ति बलवती होती है। इच्छाशक्ति के द्वारा ही व्यक्ति अपने वास्तविक स्वभाव का परिचय पाता और देता है। अपनी इच्छाशक्ति को अभिव्यक्त करने की क्षमता ही उसके व्यक्तिगत अस्तित्व का प्रमाण है। जितना ही उसकी इच्छाशक्ति उसकी प्रकृति के साथ समस्वर होती जायेगी, उतना ही वह अपनी आत्मा के निकट होता जायेगा। कर्मयोग के बारे में गीता में कहा है—

संसार के लोग अपने ही कर्मों से आबद्ध रहते हैं, जब तुम प्रत्येक कर्म ईश्वरार्पित भाव से और फल के प्रति आसक्ति से अपने को मुक्त करके करते हो तब तुम्हें कर्म नहीं बाँधते।

कुण्डलिनी योग

कुण्डलिनी योग में चक्रों के जागरण की विधि बतलायी गई है। इन चक्रों के कार्यों को समझने के पूर्व पाठकों को याद रखना होगा कि मनुष्य का मन अत्यन्त सूक्ष्म स्तरों का बना हुआ है। इन स्तरों की ऊँचाई जैसे-जैसे बढ़ती जाती है, चेतना सत्य के अत्यधिक निकट आती जाती है। मन का प्रत्येक स्तर एक चक्र से सम्बन्धित है। चक्र मनुष्य के आन्तरिक अतीन्द्रिय शरीर में स्थित हैं। कुछ का सम्बन्ध सामान्य मन से है और कुछ का उस उच्चतर मन से है जो ज्यादा चैतन्य

है। कुछ ऐसे भी चक्र हैं जो मनुष्य की पाशविक चेतना से सम्बन्धित हैं। पर कुछ ऐसे चक्र हैं जो हमारी चेतना को सांसारिक स्तर से ऊपर ले जाने में सहायक होते हैं। कुण्डलिनी योग का सम्बन्ध उन चक्रों से है जो चेतना को उच्च स्तरों की तरफ ले जाने में सहायता पहुँचाते हैं।

कुण्डलिनी योग का मुख्य उद्देश्य है साधक की सजगता को मन के इन उच्चतर केन्द्रों (चक्रों) पर ले जाना और छिपी हुई उन सूक्ष्म शक्तियों को जागृत करना, जो उन चक्रों से सम्बन्धित हैं। इन चक्रों का जागरण अस्वाभाविक बात नहीं है। हम इन चक्रों के प्रभाव में स्वाभाविक रूप से रहते हैं। हममें से अधिकांश अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अन्य व्यक्तियों की सेवा लेने में अपना समय लगा देते हैं। यह बात कुछ लोगों में बहुत ज्यादा, कुछ में न्यून और कुछ में बिल्कुल नहीं पायी जाती है। ऐसा इसलिये होता है कि उन पर उनके नाभि केन्द्र के मणिपुर चक्र का ज्यादा प्रभाव रहता है। कुछ लोग मानव-प्रेम से भर उठते हैं, कुछ लोगों में यह प्रेम-भाव यदाकदा ही पाया जाता है। ये भाव हृदय-केन्द्र के अनाहत चक्र से नियंत्रित होते हैं। जब हम 'बहुजन हिताय' के भाव से भरे हों तो समझना चाहिये कि हमारा अनाहत चक्र कार्यरत है तथा मन पर उसका पूरा प्रभाव पड़ रहा है। कुण्डलिनी योग का लक्ष्य है उच्चतर चक्रों की क्रिया को इस प्रकार नियंत्रित करना कि वे उत्तेजित हों और व्यक्ति मन के उच्चतर स्तरों का अनुभव प्राप्त कर सके।

कुण्डलिनी योग में चक्रों को जगाने की मूल विधि है– उन चक्रों पर चित्त एकाग्र करना। आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बंध और मंत्र-जप की विधियों से इन चक्रों को जगाने में सहायता मिलती है। वास्तव में योग की सभी विधियों द्वारा अन्तःचक्रों का जागरण ही होता है। साधक का मन जब उच्चतर चेतना के क्षेत्रों में आरोहण करता है, तो ये चक्र स्वतः जागृत होने लगते हैं। योग के अन्य मार्गों में धीरे-धीरे प्रगति होती है और मन के मैल धुलते जाते हैं। कुण्डलिनी योग में चक्रों के अपरिपक्व जागरण से जो अवांछनीय अनुभव होते हैं (और जो गुरु के मार्ग-निर्देशन के अभाव में हानिकारक सिद्ध होते हैं) वे इन मार्गों में नहीं हुआ करते।

हठयोग

हठयोग का सम्बन्ध मुख्यत: शरीर-शुद्धि से है। इससे मन शान्त होता है और शरीर नियंत्रित होता है। हठयोग में परम्परागत छ: विधियाँ प्रचलित हैं, जिन्हें षट्कर्म की संज्ञा दी गयी हैं। ये इस प्रकार हैं–

१. नेति– नाक की सफाई का तरीका।

२. धौति– मुख, आँतों और मलद्वार की सफाई का तरीका।

३. नौलि– पेट की मांस-पेशियों की मालिश का तरीका।

४. बस्ति– आँतों की सफाई का तरीका।

५. कपालभाति– ललाट के अग्र भाग की सफाई का तरीका।

६. त्राटक– एकाग्रता शक्ति के विकास का तरीका।

तकनीकी तौर पर आसन, प्राणायाम, मुद्रा और बन्ध भी एक दृष्टि से हठयोग के अन्तर्गत आते हैं। शास्त्रों में उनकी चर्चा भी है। राजयोग के आसनों की तुलना में हठयोग के आसनों की संख्या बहुत अधिक है। इनमें ऐसे बहुतेरे आसन हैं जो संपूर्ण मन और शरीर-संस्थान पर प्रभाव डालते हैं। शरीर की विभिन्न व्यवस्थाओं को नियंत्रित करते हुए चेतना की उच्च स्थिति में मन को स्थापित कर देना ही हठयोग का उद्देश्य है। स्नायु संस्थान के तनिक भी उत्तेजित होने पर उसका प्रभाव मन पर पड़ता है, क्योंकि शरीर की सभी नाड़ियों का सम्बन्ध प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मस्तिष्क से है। हठयोग के अभ्यास से हमारे शरीर में सिम्पेथेटिक और पैरासिम्पेथेटिक नर्वस सिस्टम के बीच संतुलन स्थापित होता है। इसका प्रभाव लगभग शरीर के सभी अंगों पर पड़ता है। ये दोनों संस्थान शरीर के विभिन्न अंगों जैसे– फेफड़े, हृदय तथा पाचनक्रिया के अंगों से सम्बन्धित हैं तथा एक-दूसरे के विपरीत कार्य करते हैं। अत: शरीर के विभिन्न अंगों के कार्य इन दोनों के आपसी समझौते से ही हो सकते हैं। एक ओर सिम्पेथेटिक नर्वस सिस्टम शरीर को बाह्य क्रियाओं के लिए तैयार करता है, तो दूसरी ओर पैरा-सिम्पेथेटिक नर्वस सिस्टम व्यक्ति को अन्तर्मुखी चिन्तन की ओर ले जाता है। इन दोनों का आधिक्य ध्यान में बाधक है। अधिक सोचने वाले व्यक्ति के लिए ध्यान संभव नहीं है। यदि किसी व्यक्ति की चेतना केवल

बहिर्मुखी है, तो उसके लिए भी ध्यान असम्भव है । आदर्श स्थिति है– दोनों का संतुलन । हठयोग से यह संतुलन संभव है ।

हठ शब्द में 'ह' का अर्थ 'इड़ा नाड़ी' या चंद्रमा और 'ठ' का अर्थ है 'पिंगला नाड़ी' या सूर्य । दाहिनी नासिका सूर्य मार्ग है और बायीं नासिका है चन्द्र मार्ग । प्राणिक शरीर में भौतिक शरीर की अपेक्षा सूक्ष्मतर प्राणशक्ति होती है । इसमें अनेकानेक अतीन्द्रिय मार्ग या नाड़ियाँ हैं जिनके द्वारा प्राणशक्ति का प्रवाह निश्चित मार्गों से होता रहता है । यह क्रिया रक्त-प्रवाह से मिलती-जुलती है । ये दोनों नाड़ियाँ– इड़ा और पिंगला– मूलाधार से आज्ञा चक्र तक जुड़ी हुई हैं और बीच के हर चक्र के अगल-बगल से होती हुई और एक-दूसरे को काटती हुई ऊपर की ओर बढ़ती हैं । मूलाधार से आज्ञा चक्र तक सीधी जाने वाली सुषुम्ना नाड़ी सबसे महत्वपूर्ण है । जब कुण्डलिनी शक्ति का जागरण होता है तो उसका प्रवाह इसी मार्ग से होता है । यह देखा जाता है कि जब इड़ा और पिंगला नाड़ी समान रूप से प्रवाहित होने लगती हैं तब कुण्डलिनी शक्ति स्वत: जाग उठती है । तब चक्र उद्दीप्त होकर ध्यान को सहज बनाते हैं ।

हठयोग के बहुत से ऐसे अभ्यास हैं जो विभिन्न चक्रों को उत्तेजित करते हैं और जिनका प्रभाव मन के सूक्ष्म केन्द्रों पर पड़ता है । भिन्न-भिन्न चक्र शरीर के विभिन्न अंगों से सम्बन्धित हैं । हठयोग के अभ्यास से उन अंगों की शुद्धि होती है तथा उनकी शक्तियाँ जागृत और विकसित होती हैं । फलत: उन अंगों से सम्बन्धित चक्र स्वत: जगने लगते हैं । उदाहरणार्थ– कपालभाति और नेति क्रिया से मस्तिष्क तथा नासिका के मार्ग शुद्ध होते हैं । इस प्रकार इनसे आज्ञा चक्र प्रभावित होता है । नौलि क्रिया से मणिपुर प्रभावित होता है । ये चक्र मन के सूक्ष्म केन्द्रों से सम्बन्धित हैं अत: ध्यान पर इसका प्रभाव सुनिश्चित है ।

हठयोग की अंतिम और सबसे महत्वपूर्ण क्रिया 'त्राटक' है । इसके सम्बन्ध में इसी पुस्तक में विस्तार से आगे बतलायेंगे । त्राटक हठयोग की अन्य क्रियाओं से भिन्न है । अन्य सभी क्रियाओं के अभ्यास में किसी न किसी रूप में शरीर कार्य करता है पर त्राटक में किसी बाह्य या आंतरिक वस्तु पर दृष्टि टिकाकर एकाग्रता की शक्ति को उत्तरोत्तर बढ़ाना

होता है। राजयोग की उच्चतर स्थिति को प्राप्त करने के लिए यदि हठयोग को प्रारंभिक अनिवार्यता मानें तो इसके अन्तर्गत त्राटक को स्थान देने का औचित्य अपने आप सिद्ध हो जाता है। कुण्डलिनी योग के लिए हठयोग एक आधार है क्योंकि चक्रों को उत्तेजित तथा जागृत करने में इससे बहुत मदद मिलती है। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि हठयोग साधक को योग के अन्य मार्गों द्वारा ध्यान की उच्चतर स्थिति में ले जाने के लिए तैयार करता है।

मन्त्र योग

मंत्र योग में कुछ रहस्यात्मक ध्वनि-संयोजनों का जप या मौन पाठ किया जाता है। ये मात्र ध्वनियाँ ही नहीं हैं। इन्हें प्राचीनकाल के ऋषि-महर्षियों ने ध्यान की गहरी अवस्था में अनुभव किया था। इन्हें ही 'मंत्र' कहा गया। ये परम्परागत रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त हुये।

योगाभ्यास की प्रारम्भिक अवस्था में साधकों को अपने गुरु द्वारा प्राप्त मंत्र का पूर्ण सतर्कता और एकाग्रता के साथ अभ्यास करना चाहिये। मंत्र अभ्यास में यह सतर्कता और एकाग्रता दूसरे अन्य विचारों को रोकती है। जब मंत्र योग का अभ्यास साधक के द्वारा समर्पण भाव से होता है तो उसका जप सहज ही बिना किसी प्रयत्न के अपने आप होने लगता है। इस तरह समर्पण-भाव से किये गये जप में प्रयास की आवश्यकता नहीं होती। मंत्र मन में गूँजने लगता है और व्यक्ति की सत्ता में अपना स्थान बना लेता है। यह श्वास के साथ सहज ही उच्चारित होने लगता है।

ध्यान की अवस्था प्राप्त करने के लिए यह एक शक्तिशाली उपाय है क्योंकि इसमें मानसिक शांति के साथ-साथ चित्त की एकाग्रता बढ़ती है। सामान्य लौकिक चेतना और अधि-चेतना के बीच मंत्र एक मार्ग बन जाता है। एकाक्षरी मंत्र ॐ सर्वविदित ही है। इसे आदि ध्वनि कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि सभी शब्द इसी से प्रसूत हुए हैं। ईसाई और इस्लाम धर्मों में 'आमेन' और 'आमीन' इसी से निकले

हैं। मिश्र में परमेश्वर के लिये 'आमोन' शब्द आया है। हिन्दू धर्म में राम, ओम् नमः शिवाय, ओम् शान्ति आदि महत्त्वपूर्ण मंत्र हैं जिनका एकाग्रता तथा भक्तिभाव से जप करने से अनुभवातीतत्व की स्थिति प्राप्त होती है।

तन्त्र योग

तंत्र एक प्राचीन विद्या है। योग के साथ इसका निकट का सम्बन्ध है बल्कि योग को तन्त्र की ही एक प्रशाखा माना गया है। प्राचीन तन्त्र-शास्त्रों में आसन, प्राणायाम, त्राटक, योगनिद्रा और क्रियायोग आदि विषयों का वर्णन है। ये तन्त्र शास्त्र उपनिषदों और योग सूत्रों से कई शताब्दी पूर्व के हैं। योग और तन्त्र का व्यावहारिक उद्देश्य एक ही है। वह उद्देश्य यह है कि जिस संसार में हम रहते हैं उससे परे जाना है। दोनों ही में साधक ध्यान के अनुभव प्राप्त करता है। फिर भी इनकी पद्धतियाँ एक-दूसरे से भिन्न दिखाई देती हैं।

बहुत से वेदान्तिक सिद्धान्तों पर आधारित योग के सिद्धान्त इस बात पर जोर देते हैं कि कामशक्ति का उदात्तीकरण आध्यात्मिक शक्ति में हो जाना चाहिए। योग शास्त्रों में कामशक्ति का दमन करने की बात नहीं कही गई। अपनी कामशक्ति को अधिकाधिक नियंत्रण में रखना चाहिए। फ्रायड ने बतलाया कि मनुष्य के लिए दो चीजें समस्त क्रियाओं की प्रेरणा स्रोत हैं– काम भावना और आत्म-सुरक्षा की भावना। ये बातें सरल ढंग से कही गई हैं। परन्तु इससे पता चलता है कि हम लोग अपना कितना समय काम-चिन्तन या काम-क्रिया में खर्च करते हैं। योगी लोग कहा करते हैं कि इस समय को आध्यात्मिक अनुभवों को प्राप्त करने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। यौगिक दृष्टिकोण यह है कि कामक्रिया एक अनुभवातीत अनुभव है यद्यपि यह अनुभव ध्यान के उच्चतर अनुभवों की बराबरी नहीं कर सकता। यदि आप काम-क्रिया को छोड़ देते हैं तो आप अपेक्षाकृत अत्यन्त उच्चस्तरीय आध्यात्मिक अनुभव तथा परमानन्द की प्राप्ति कर सकते हैं। सांसारिक दृष्टिकोण से काम एक आवश्यक अंग माना गया है परन्तु आध्यात्मिक विकास के साथ इसका विरोध है।

तन्त्र शास्त्र के अनुसार संभोग के अनुभवों को आध्यात्मिक सजगता के हेतु उपयोग में लाना चाहिए। क्या इसका अर्थ यह हुआ कि हम गलत धारणा का समर्थन कर रहे हैं ? नहीं। इसका अर्थ यह है कि हम समस्या का समाधान भिन्न तरीके से करना चाहते हैं। तंत्र का लाभ वे लोग भी उठा सकते हैं जो स्वभाववश या पारिवारिक लोभवश यौन-जीवन को त्याग नहीं सकते। तंत्र का कहना है कि– यदि आप अपनी काम भावना को नहीं रोक सकते, तो न रोकें। अनुभवातीत स्थितियों में जाने के लिए उसका उपयोग करें। स्त्री सहवास को केवल आनन्द का साधन न बनायें। इसे आध्यात्मिक पथ पर आरोहण करने की सीढ़ी बना लें। तांत्रिक संभोग और तांत्रिक अनुभवों द्वारा संसार के प्रति साधक की रुचि समाप्त हो जायेगी।

ऐसा नहीं समझना चाहिए कि तंत्र में अविवेकपूर्ण यौन क्रियाओं को प्रोत्साहित किया गया है। इसमें यौन क्रिया के विशेष नियम बताये गए हैं, जिनसे काम ऊर्जा का अधिक से अधिक सदुपयोग किया जा सके। उदाहरणार्थ-- तांत्रिक मैथुन में बिना कामोत्ताप के संभोग करने की बात की गई है। इसके लिए सबसे दृढ़ इच्छाशक्ति और स्नायविक नियन्त्रण की आवश्यकता है। इस प्रकार की तंत्र साधना करने वाले साधक को किसी अनुभवी गुरु के निर्देशन में साधना करनी चाहिए।

सारांश

वैसे तो योग के अनेक प्रकार हैं परन्तु वे योग की विभिन्न शाखाओं के ही रूप हैं। उदाहरणार्थ ज्ञान योग के क्षेत्र में ज्ञान द्वारा ही समाधि प्राप्त की जाती है। यहाँ ज्ञान का विशेष अर्थ में प्रयोग हुआ है। ज्ञान अर्थात्– सत्य और असत्य का नीर-क्षीर विवेक। वास्तव में यह राजयोग के बहुत निकट है। अन्तर सिर्फ यह है कि इसमें राजयोग के यम, नियम, आसन, प्राणायाम की प्रारम्भिक क्रियाओं को साधना का आधार नहीं बनाया जाता। राजयोग में इन विधियों का प्रयोग मन को शान्त करने करने के लिए किया जाता है। ज्ञानयोग में विवेक से मन को शान्त किया जाता है।

प्रायः प्रत्येक धर्म का उद्देश्य ध्यान द्वारा अनुभवातीत अनुभवों को प्राप्त करना है। ईसाई, इस्लाम और यहूदी धर्म मूलतः भक्ति और उपासनामूलक विश्वासों पर आधारित हैं। बौद्ध धर्म में राजयोग तथा ज्ञान-योग की बातें हैं। इसमें एकाग्रता पर बल दिया गया है तथा प्रत्येक कार्य और विचार को साक्षी रूप में देखने की बात कही गयी है। योग को दार्शनिक पृष्ठभूमि प्रदान करने वाले सांख्य में भी यही बात कही गई है। हमारे अधिकतर कार्य सहज होते हैं। हमें केवल उनके प्रति सचेत रहना है। लगातार उन्हीं के प्रति सजग रहना है। तब हमारी चेतना नयी सम्भावनाओं के क्षेत्र में प्रवेश करेगी। तब अपनी समस्याओं की तरफ हमारा ध्यान कम जायेगा। तब वे स्वतः समाप्त हो जायेंगी या उनकी भूमिका नगण्य हो जायेगी। तब हम प्रत्येक क्षण ध्यान की स्थिति में रह सकेंगे।

हिन्दू धर्म ने सभी धर्मों को आत्मसात कर लिया है। यह सभी धर्मों का सार-संग्रह है। हम कह सकते हैं कि सभी धर्मों का मुख्य उद्देश्य है ध्यानस्थ होना और ध्यान की चरम परिणति है आत्मसाक्षात्कार।

द्वितीय खण्ड

ध्यान की तैयारियाँ

नवम अध्याय

सामान्य निर्देश एवं सुझाव

ध्यान की स्थिति प्राप्त करने के लिए उसकी तैयारी का महत्व कम नहीं है। बहुत कम लोग ऐसे हैं जिनको बैठते ही ध्यान लग जाता है और इने-गिने ही लोग होंगे जो हर स्थिति में ध्यानस्थ रहते हैं। बहुत से ऐसे लोग हैं जिनको ध्यान करने के लिए कुछ तैयारियाँ करनी पड़ती हैं। प्रारम्भिक तैयारियों के बिना ध्यान शुरू करने से अनेक बाधाएं उपस्थित हो जाती हैं। इसलिये यहाँ साधकों को आवश्यक तैयारी के कुछ निर्देश दिये जा रहे हैं। जैसे-जैसे वे प्रगति करते जायेंगे, आगे के लिए आवश्यक तैयारियाँ वे स्वत: कर लेंगे। निम्नलिखित निर्देश प्राय: सभी लोगों का मार्गदर्शन करेंगे–

एकाग्रता की कमी

कभी तो बैठते ही मन ध्यानस्थ हो जाता है परन्तु अधिकतर वह जंगली हाथी की तरह मतवाला होकर डोलने लगता है। ऐसी स्थिति में आत्मसुझाव भी काम नहीं करते। ऐसी भटकने वाली प्रवृत्ति से मन को उबारने के लिये अति उत्तम उपाय है– 'ॐ' मंत्र का उच्चारण। यह मन्त्रोच्चारण हृदय से होना चाहिये, न कि केवल मुँह से। इसके साथ तीव्र अनुभूति भी होनी चाहिये। अपने अहं को मन्त्र की इस अनुभूति में विलीन कर दें। शरीर और मन में इसका प्रकंपन महसूस करें। ॐ का उच्चारण मन को शान्त करने के लिए ब्रह्मास्त्र के समान है।

आशावादिता

ध्यान में प्रथम बार बैठते ही अनुभूतियाँ होंगी, ऐसी आशा न करें। आप धैर्य के साथ अभ्यास करते जाइये। कभी-कभी तो ऐसा लगेगा

कि ध्यान नहीं हो रहा, बल्कि समय की बरबादी हो रही है। पर निराश होने की आवश्यकता नहीं है। अपने आपको पूर्णतः समर्पित कर दें। समय आने पर परम शक्ति की कृपा और आनन्द की उच्च अनुभूति का प्रवाह उमड़ेगा। इसके बाद ध्यान की प्राप्ति अपने आप सहज रूप में हो जायेगी और सम्पूर्ण जीवन ही ध्यानानुभूतियों से भरपूर हो जायेगा। यह स्थिति धैर्य के साथ नित्य अभ्यास करने के फलस्वरूप प्राप्त होती है।

ध्यान के लिए उपयुक्त स्थान

जब आप ध्यान करने के लिए निश्चित स्थान का चुनाव कर लें तो प्रतिदिन उसी स्थान पर ध्यान का नियमित अभ्यास करें। यह स्थान शांत और स्वच्छ होना चाहिए। कमरा हवादार हो, पर तेज हवा का झोंका अच्छा नहीं होता। खूब तेजी से घूमने वाले पंखे के नीचे न बैठें। ज्यादा नमी भी नहीं होनी चाहिए। सूखा स्थान अच्छा है। जमीन पर कम्बल या कोई आसनी बिछा लें। आस-पास ज्यादा फर्नीचर या इस तरह के सामान आदि नहीं हों। ध्यान की अवधि में बाहर की उत्तेजनायें ज्यादा प्रभावित न करें, ऐसी कोशिश होनी चाहिए। जहाँ बैठें हों, वहाँ बाहर के दृश्य न दिखाई दें तो अच्छा है।

समय

ध्यान का सबसे उत्तम समय है प्रातःकाल और संध्याकाल, बिस्तर में जाने के पूर्व और ब्राह्ममूहूर्त की बेला। ध्यान का अभ्यास नाश्ते के एक-डेढ़ घंटा पहले और भोजन के चार घंटे बाद ही किया जाना चाहिए। यह नियम इसलिए है कि भोजन के बाद भारी पेट होने से समूचा ध्यान पेट और पाचन क्रिया की तरफ ही चला जाता है। इसलिए उचित मात्रा में भोजन करें। आवश्यकता से अधिक भोजन न करें। ध्यान के अभ्यास में नियमितता का होना आवश्यक है। प्रातः ४ से ६ बजे और सायंकाल ८ से १० बजे तक का समय ध्यान के लिए उपयुक्त है। आप सुविधानुसार अपने लिए समय निश्चित कर लें और फिर इसे बदलें नहीं। आधे घटे के ध्यान के अभ्यास से आप शुरुआत कर सकते हैं। इस अवधि को धीरे-धीरे बढ़ाते जायें।

निद्रा

जिन्हें प्रातः सबेरे जागने की आदत नहीं है, उन्हें ऐसा लगता है कि ध्यान में सो जायेंगे। ऐसी आदत होने पर सबेरे जगकर अपना समय बरबाद नहीं करना चाहिए। नींद भगाने के अनेक उपाय हैं। एक तरीका है– जल्दी सो जाना, दूसरा– ध्यान के पूर्व अच्छी तरह स्नान कर लेना, तीसरा– अभ्यास करने के पूर्व बार-बार आत्मसुझाव देना कि मैं नहीं सोऊँगा। यह संकल्प साधक दिन में कई बार दुहरा सकते हैं ताकि यह विचार अवचेतन की गहराई में उतर जाये।

यदि आपको लगे कि ध्यान करने के बाद आप ज्यादा थक गये हैं तो ऐसा समझना चाहिए कि आप ध्यान नहीं, मन से संघर्ष कर रहे हैं। ध्यान आनन्द का स्रोत है। आनन्द देने वाली वस्तु से हम थकान का अनुभव कैसे कर सकते हैं ? जो वस्तुएँ हमारी प्रकृति से भिन्न हैं, उन्हीं से हमें क्लेश और क्लान्ति की प्राप्ति होती है। इसलिए ध्यान के बाद यदि थकावट हो, तो अपनी ध्यान-विधि की जाँच कर लें।

शिथिलीकरण

ध्यान में सबसे बड़ी बाधा है तनाव। यदि शरीर में किसी प्रकार का तनाव या कष्ट है तो चेतना उसी ओर उन्मुख रहेगी। ऐसी स्थिति में शरीर से परे जाकर ध्यान का अनुभव प्राप्त करना कठिन होगा। अतः शरीर को शिथिल करें। इसे शिथिल करने का एक सरल किन्तु अद्भूत उपाय है– पहले शरीर में अधिकाधिक तनाव भरकर एकाएक उसे ढीला छोड़ देना। इसमें विरोधाभास सा दिखता है। लेकिन पाठक ऐसा करके देखें तो उन्हें शिथिलता का स्पष्ट अनुभव होगा। यदि आप किसी रबर को खूब तानें और फिर उसे वापस छोड़ दें तो पहले की अवस्था की अपेक्षा वह अधिक मात्रा में सिकुड़ जायेगा। ठीक यही बात हमारी माँसपेशियों के साथ भी है। थोड़े समय के लिए उनमें खूब तनाव पैदा कीजिये। इससे वे शिथिल होंगी। शरीर के प्रत्येक अंग के साथ बारी बारी से यह क्रिया की जा सकती है। पीठ के बल लेट जाइए और शिथिलीकरण की क्रिया पैर से प्रारंभ कीजिये। प्रत्येक अंग को बीस-बीस सेकेण्ड समय दीजिये। अन्त में सम्पूर्ण शरीर एवं मन को शिथिल करने

के बाद ध्यान का अभ्यास शुरू करना चाहिये। शरीर और मन की संतुलित अवस्था पर ही ध्यान सम्भव है।

सामान्य बाधाएँ

ध्यान की बाधाओं को हम दो भागों में बाँट सकते हैं– शारीरिक और मानसिक। बहुत से शारीरिक रोगों को तो आसन द्वारा ठीक किया जा सकता है। (आसनों की विस्तृत जानकारी के लिये बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रकाशित पुस्तक "आसन प्राणायाम मुद्रा बन्ध" देखें)।

मानसिक बाधायें ईर्ष्या, घृणा, घमण्ड, स्वार्थ, क्रोध आदि के रूप में आती हैं। इन सबको दूर करने के अनेक तरीके हैं। यम-नियम तथा आत्मसुझाव की विधियाँ अत्यन्त उपयोगी हैं। मानसिक समस्याओं को दूर करने के लिए पांचवें अध्याय में बताया गया है कि साधक को अपने निज की पहचान को मन और शरीर से असम्बद्ध करके चेतना के केन्द्र-बिन्दु से सम्बद्ध कर देना चाहिये। इस तरह उस पर घटनाओं और शारीरिक व मानसिक बाधाओं का प्रभाव उसी मात्रा में पड़ेगा जितनी मन-शरीर से उसकी सम्बद्धता शेष रह गई है।

ध्यान के मार्ग में निराशा एक बहुत बड़ी बाधा है। यह भी ऊपर बतायी गयी विधि के अनुसार दूर की जा सकती है। दूसरी सरल एवं प्रभावशाली विधि है– "ॐकार" उच्चारण। आप ॐकार का उच्चारण मानसिक रूप से या जोर से अपनी सुविधानुसार आधा घंटा या उससे भी अधिक समय तक कर सकते हैं। पहाड़ों पर या गांवों में प्रकृति के साथ आप रहें, तो भी इस बाधा से बचाव हो सकता है।

ध्यान में दूसरी बाधा है क्रोध। इसका मूल कारण है अहंकार। यह भी आत्मसुझाव द्वारा या ईश्वरीय सत्ता में समर्पण का भाव रखने से समाप्त हो जाती है।

कभी-कभी साधकों की ध्यान पर से आस्था समाप्त होने लगती है। अनेक प्रकार के संदेह उन्हें घेर लेते हैं। परन्तु इन संदेहों की चिन्ता न करके योगी-महात्माओं की उन पुस्तकों का अध्ययन किया जा सकता है जिनमें उनके आध्यात्मिक अनुभवों का वर्णन रहता है।

अक्सर हम ऐसी बाधाओं का अनुभव करते हैं जिनका कारण हमें ज्ञात नहीं रहता। अचेतन द्वन्द्व, भ्रान्ति, भय आदि के कारण ही ऐसा होता है। ध्यान द्वारा इन्हें पहचान कर दूर किया जा सकता है। पर इन गहरी कठिनाइयों के कारण ध्यान करना कठिन-सा लगता है। साधक को चाहिए कि चेतना के क्षेत्र में अपने मन की गहराइयों की अभिव्यक्ति-प्रक्रिया को समझने की चेष्टा करें। इनमें से अधिकांश अभिव्यक्तियाँ किसी न किसी गहरे दबे द्वन्द्व का परिचय देंगी। एक बार यदि वे पहचान में आ जाएँ तो उनका निवारण आत्मसुझाव द्वारा हो जायेगा। तब ध्यान की क्रिया सरल हो जायेगी। जब ध्यान की गहराइयों तक पहुँच हो जायेगी तब मन की ग्रंथियाँ नष्ट हो जायेंगी। तब अनुभवातीत आनन्द का अनुभव होगा।

विचार

ध्यान का प्रारम्भिक लक्ष्य है– तर्कयुक्त विचारों को देखते जाना और धीरे-धीरे उनसे परे पहुँच जाना। नियमित अभ्यास द्वारा मन पर नियंत्रण हो जाने से सतही बौद्धिक विचारों से दूर मन की गहराई तक पहुँचा जा सकता है। बहुत कम लोग विचारों को केवल द्रष्टा भाव से देखने में सफल होते हैं। केवल अन्तर्मौन के अभ्यास में तर्कयुक्त विचारों का सहारा लिया जाता है परन्तु इसमें भी अंततः बुद्धि से परे जाना पड़ता है।

एकाग्रता के लिए प्रतीक का चुनाव

स्वयं अपनी पृष्ठभूमि को समझते हुए और अपने इष्ट पर ध्यान लगाते हुए कोई मार्ग चुनें। यह आवश्यक नहीं है कि ध्यान का विषय कोई अवतार ही हो। जिससे स्वतः तादात्म्य हो जाये वही ठीक है। किसी भी प्रतीक जैसे– फूल, चाँद आदि पर ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है। हम पुनः इस बात पर बल देते हैं कि ध्यान में प्रयास से अधिक सहजता होनी चाहिए।

अक्सर लोगों की रुचि किसी विशेष पदार्थ पर नहीं टिकती। फिर भी ध्यान की तैयारी में कोई वस्तु बिम्ब रूप में अपने आपको प्रकट करती

हुई दिखती है। यह वस्तु मन की गहराइयों से चेतना के क्षेत्र में आती है। ऐसे प्रतीकों का प्रकट होना गहरा अर्थ रखता है। इन्हें एकाग्रता का विषय बनाने में कोई बाधा नहीं है। हालाँकि कभी-कभी यह देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है कि प्रकट होने वाले बिम्ब साधक की संस्कृति एवं प्रकृति के लिए सर्वथा नये हैं। सूक्ष्म दर्शन में आये इन बिम्बों का उपयोग त्राटक के लिए किया जा सकता है।

प्रारम्भ में मन को निश्चित वस्तु पर टिकाना कठिन होता है। पर अभ्यास से यह आसान होता जायेगा। सिर्फ धैर्य और अध्यवसाय की आवश्यक होती है। मन धीरे-धीरे ध्यातव्य पर टिकने लगेगा। यद्यपि ध्यान के लिए एक दृश्य वस्तु अधिक उपयोगी है, पर उदात्त विचारों पर भी मन को एकाग्र किया जा सकता है, जैसे प्रेम करना, असीमता, अनन्तता, चेतना, अस्तित्व आदि।

दशम अध्याय

ध्यान के आसन

ध्यान के सभी आसनों का उद्देश्य है इच्छित समय तक शरीर को पूर्णतः स्थिर रखने की क्षमता प्रदान करना। ध्यानावस्था के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति कुछ घण्टों तक बिना शारीरिक कष्ट के बैठ सके। निश्चल शरीर में ही ध्यान लगाता है। ध्यान के आसन मेरुदंड को सीधा रखते हैं। उनमें शरीर में सहज ही ऐसा बंध लग जाता है कि बिना किसी विशेष प्रयत्न के शरीर स्थिर हो जाता है।

ध्यान के प्रारंभिक अभ्यासी शुरू में सुखासन में बैठ सकते हैं, परन्तु धीरे-धीरे बाद में उन्हें ध्यान के उपयुक्त आसनों जैसे पद्मासन, सिद्धासन (पुरुषों के लिए), सिद्धयोनि आसन (स्त्रियों के लिए) में बैठने का अभ्यास करना चाहिए। ऐसे अभ्यासी जिनकी पैर और जाँघ की मांसपेशियाँ बहुत कड़ी हैं तथा दुर्बल रोगी कुर्सी पर भी ध्यान का अभ्यास कर सकते हैं। परन्तु उनकी रीढ़ की हड्डी सीधी रहनी चाहिए।

किसी भी आसन में बैठ जायें और कल्पना करें कि आपका शरीर चट्टान की तरह दृढ़ और स्थिर है। जितना ही आप अपने आसन में स्थिर होंगे उतनी ही आपकी एकाग्रता एवं दत्तचित्तता बढ़ेगी।

एक वर्ष के नियमित अभ्यास से आप अवश्य तीन घण्टे लगातार एक आसन में बैठ सकेंगे। जिनका शरीर कड़ा है ऐसे लोग भी अभ्यास और अध्यवसाय द्वारा पद्मासन में बैठने लगते हैं। ऐसे लोगों को 'आसन प्राणायाम मुद्रा और बंध पुस्तक में वर्णित कुछ विशेष आसनों (पवन-मुक्तासन, शक्तिबंध एवं ध्यान की तैयारी के आसन) का अभ्यास करना चाहिए। उन्हें प्रतिदिन एक-एक मिनट बढ़ाते हुए एक ही आसन में अधिक देर तक बैठने का अभ्यास करना चाहिए। पद्मासन में बैठने की पूर्ण योग्यता केवल शरीर को लचीला बना लेने से ही नहीं आती। यह

मन:स्थिति पर भी निर्भर करती है। यदि साधक का अपने मन पर नियंत्रण है,तब निश्चित ही मन शरीर को पद्मासन लगाने में मदद देगा।

ध्यान के शास्त्रीय आसन हैं-- पद्मासन, सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन और स्वस्तिकासन। प्रारम्भिक अभ्यास करने वाले साधकों के लिए सुखासन और अर्धपद्मासन सरल हैं। ध्यानाभ्यास में मदद पहुँचाने वाले अन्य पूरक आसन हैं– वज्रासन, भद्रासन और शवासन। हमने इसमें विपरीतकरणी आसन और नादानुसंधान को भी जोड़ दिया है (हालाँकि ये ध्यान की मूल विधियों के उपयुक्त नहीं हैं) क्योंकि ध्यान के कुछ अभ्यास इन्हीं आसनों में किये जाते हैं।

शास्त्रीय आसनों का अभ्यास सामान्यत: ज्ञान मुद्रा और चिन्मुद्रा के साथ किया जाता है।

सावधानियाँ

किसी भी आसन में बैठने की कोशिश में शरीर पर अनावश्यक जोर नहीं पड़ना चाहिए। यदि ध्यान के किसी आसन में बैठने के बाद पैरों में पीड़ा होने लगे तो उन्हें सीधा कर के मालिश कर देनी चाहिए। शास्त्रीय या सरल आसनों का भी अभ्यास साइटिका के रोगियों एवं निम्न मेरुदण्ड और कटिप्रदेश की व्याधियों से पीड़ित व्यक्तियों को नहीं करना चाहिए। ये लोग सिर्फ वज्रासन, भद्रासन और शवासन कर सकते हैं।

पद्मासन

विधि

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये।

एक पैर को मोड़िये और उसके पंजे को दूसरी जाँघ पर इस प्रकार रखिये कि एड़ी जघन-अस्थि (प्यूबिक बोन) का स्पर्श करे।

पैर का तलवा ऊपर की ओर रहे।

अपना दूसरा पैर मोड़िये और उसका पंजा दूसरी जाँघ पर रखिये।

टिप्पणी

पद्मासन का अभ्यास ज्ञानमुद्रा अथवा चिन्मुद्रा में किया जा सकता है। पद्मासन के अभ्यास में रीढ़ की हड्डी बिल्कुल सीधी और स्थिर रहे। प्रारंभ में अभ्यास की सुविधा के लिए गद्दी या तकिये पर बैठ सकते हैं।

लाभ

पद्मासन पर अधिकार प्राप्त हो जाने पर अभ्यासी अपने शरीर को लम्बे समय तक स्थिर रख सकता है। शरीर और मन एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं। शरीर स्थिर होने से मन भी स्थिर हो जाता है।

यह आसन प्राणशक्ति को मूलाधार चक्र से सहस्रार चक्र तक उचित रूप में प्रवाहित करता है।

अनेक शारीरिक, स्नायविक एवं भावनात्मक समस्याओं से मुक्ति दिलाने में पद्मासन सहायक है।

सिद्धासन

विधि

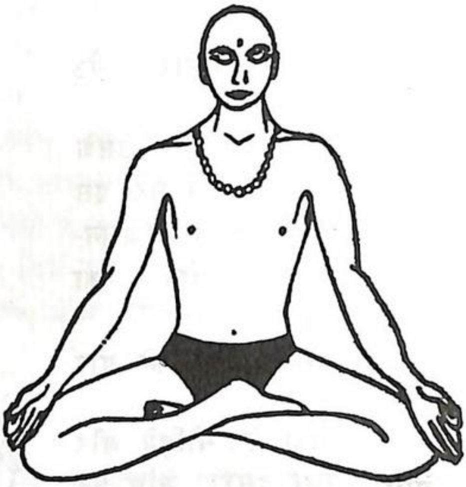

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइए ।

दाएँ पैर को मोड़िये और उसके तलवे को दायीं जाँघ से इस प्रकार सटा दीजिए कि एड़ी का दबाव मूलाधार (अंड-कोश तथा गुदामार्ग के बीच की जगह) पर पड़े ।

बायें पैर को मोड़िये और उसके पंजे को दाहिनी पिंडली के ऊपर रखिये ।

मूत्रेन्द्रिय के ऊपर श्रोणि-अस्थि पर अपनी बायीं एड़ी का दबाव रखें । बायें पैर की उंगलियों तथा पंजे के बाहरी भाग को दायीं पिण्डली और जाँघ की मांसपेशियों के बीच में फँसाइये ।

दायें पैर को उंगलियों को ऊपर या नीचे से पकड़कर बायीं पिंडली एवं जाँघ के बीच घुसाइये ।

घुटने जमीन पर तथा बायीं एड़ी ठीक दायीं एड़ी के ऊपर रखिये । अब आपके पैर एक प्रकार से बँध जायेंगे। रीढ़ को सीधी तथा स्थिर रखिये ।

टिप्पणी

सिद्धासन का अभ्यास केवल पुरुष ही कर सकते हैं । किसी भी पैर को ऊपर रखा जा सकता है ।

हाथों को ज्ञान मुद्रा या चिन्मुद्रा में रखें । प्रारंभिक अभ्यासों में गद्दी या तकिये के सहारे आसन लगाना सुविधाजनक होगा ।

लाभ

सिद्धयोनि आसन में इसके भी लाभ बताए गए हैं ।

सिद्धयोनि आसन

विधि

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइए।

दायें पैर को मोड़िये और उसके तलवे को बायीं जाँघ से इस प्रकार सटाइये कि एड़ी का दबाव योनि-मुख पर पड़े।

बायें पैर को मोड़िये और उसके पंजे की दाहिनी पिंडली और जाँघ के ऊपर रखिये।

दायें पैर की उँगलियों को बायीं पिंडली और जाँघ के बीच के स्थान में ऊपर को खीचिये।

रीढ़ सीधी और स्थिर हो मानो उसे जमीन पर रोप दिया गया हो।

टिप्पणी

सिद्धयोनि आसन का अभ्यास सिर्फ महिलाओं द्वारा ही किया जा सकता है। इसके अभ्यास में दाहिना या बायाँ कोई भी पैर ऊपर रह सकता है। अधोवस्त्र नहीं पहने रहने पर इसका अभ्यास सही ढंग से किया जा सकता है।

इसका अभ्यास ज्ञानमुद्रा या चिन्मुद्रा के साथ करना चाहिए।

प्रारंभिक अभ्यासी अपने नितम्बों को गद्दी के सहारे कुछ ऊपर उठा सकते हैं। इस प्रकार इस का अभ्यास सुगम हो जाता हैं।

लाभ

सिद्धासन और सिद्धयोनि आसन ध्यान के लिए लम्बे समय तक स्थिर रह पाने की दृष्टि से श्रेष्ठ आसन हैं। इस आसन में मूलबंध और वज्रोली मुद्रा स्वत: क्रियाशील होकर स्नायविक यौन संवेगों को मेरुदण्ड से होकर मस्तिष्क में वापस भेज देते हैं। इससे काम-भावना पर नियंत्रण प्राप्त होता है।

सिद्धासन एवं सिद्धयोनि आसन समस्त स्नायविक संस्थान को शांत एवं संतुलित रखते हैं तथा उसे बल प्रदान करते हैं।

स्वस्तिकासन

विधि

अपने पैरों को सामने की तरफ फैलाकर बैठ जाइये।

बायें पैर को मोड़िये और उसे दायीं जाँघ की माँसपेशियों के पास रखिये।

इसी प्रकार दाएँ पैर को मोड़िये और पैर की उंगलियों को बायीं जाँघ और पिंडलियों के बीच फँसाइये।

दोनों पैर की उँगलियाँ दोनों जाँघों के बीच रहनी चाहिये।

ज्ञानमुद्रा या चिन्मुद्रा में हाथों को घुटनों पर रखिये या उन्हें गोद में रखिये।

टिप्पणी

प्राचीन परम्परागत ध्यान के आसनों में से यह सबसे सरल आसन है। बाह्य तौर पर यह सिद्धासन की तरह ही है; अंतर केवल इतना ही है कि इसमें मूलाधार क्षेत्र पर एड़ी का दबाव नहीं पड़ता।

लाभ

इससे सिद्धासन एवं सिद्धयोनि आसन के लाभ सीमित मात्रा में मिलते हैं क्योंकि मूलाधार या योनिमुख पर दबाव न पड़ने के कारण अभ्यास करते समय मूलबंध और वज्रोली मुद्रा नहीं लग पाती।

सुखासन

विधि

पैरों को अपने शरीर के सामने फैलाकर बैठ जाइये ।
दायें पैर को मोड़कर पंजे को बायीं जाँघ के नीचे रखिये ।
बायें पैर को मोड़कर पंजे को दायीं जाँघ के नीचे रखिये ।
हाथों को घुटनों पर रखिये ।
सिर, गर्दन और पीठ को सीधा रखिये ।

टिप्पणी

जब ध्यान के अन्य आसनों का अभ्यास हो जाये, तो इसका अभ्यास नहीं करना चाहिये ।

लाभ

जो लोग ध्यान के अन्य आसनों में नहीं बैठ सकते, उनके लिए यह एक आदर्श आसन है ।

अर्धपद्मासन

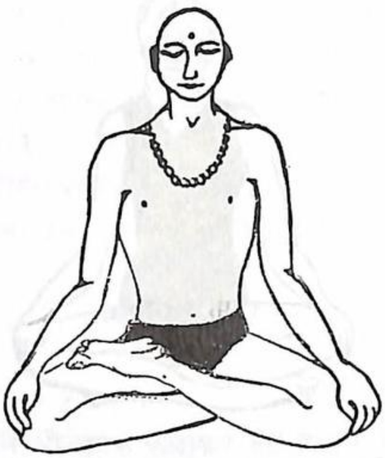

विधि

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये ।
दायें पैर को मोड़कर पंजे को बायीं जाँघ के नीचे रखिये ।
बायें पैर को मोड़कर पंजे को दाहिनी जाँघ के ऊपर रखिये ।
पीठ, गर्दन और सिर को सीधा रखिये ।

टिप्पणी

ध्यान का यह आसन उन लोगों के लिए है जो थोड़ा-बहुत पद्मासन कर लेते हैं लेकिन उन्हें अन्तिम स्थिति तक पहुँचने में कठिनाई होती है सुखासन की अपेक्षा इस आसन का अभ्यास करना अच्छा है ।

लाभ

पद्मासन की तरह परन्तु उससे कुछ कम ।

वज्रासन

विधि

घुटनों के बल खड़े हो जाइये।
पंजों को पीछे फैलाकर एक पैर के अँगूठे को दूसरे अँगूठे पर रख दीजिये।
आपके घुटने पास-पास और एड़ियाँ अलग-अलग रहनी चाहिए।
अपने नितम्बों को फैली हुई एड़ियों के बीच के स्थान पर टिका दीजिये।
आपकी एड़ियाँ कूल्हों की तरफ रहेंगी।
हथेलियों को घुटनों पर रखिये।

टिप्पणी

मुसलमानों और जापानी बौद्धों के लिए यह प्रार्थना का आसन है।

लाभ

श्रोणीय (pelvic) तथा आन्त्रिक (visceral) क्षेत्रों में स्नायविक आवेगों तथा रक्त के प्रवाह को बदल देता है। साइटिका और सेक्रमी (sacral) संक्रमण से पीड़ित लोगों के लिए यह ध्यान का उपयोगी आसन है।

भद्रासन

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये।
घुटनों को जितना सम्भव हो सके, दूर-दूर कर लीजिये।
पैर की उँगलियों का सम्पर्क जमीन से बना रहे।
अब एड़ियों को इतना अलग करिये कि उनके बीच में आपके नितम्ब जमीन पर जम जायें।
बिना किसी तनाव के घुटनों को और अधिक दूर कीजिये।
हाथों को घुटनों पर रखिये।
हथेलियाँ नीचे की ओर रहें।

लाभ

इसके लाभ वज्रासन की ही तरह हैं।

शवासन

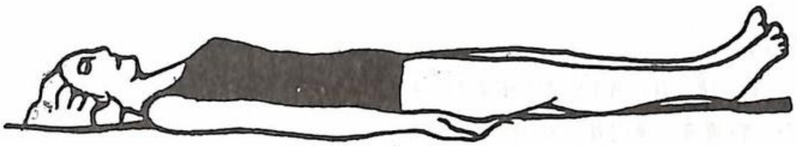

विधि

पीठ के बल लेट जाइये ।
भुजाएँ शरीर के बगल में रहें ।
हथेलियाँ ऊपर की तरफ खुली रहें ।
पैरों को आराम की स्थिति में थोड़ा दूर-दूर कर लीजिये ।
आँखें बन्द रहें ।
पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये ।
शरीर का कोई भी भाग नहीं हिलाइये ।
श्वास को सहज होने दीजिये ।
मन को अपने श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग रखिए ।

लाभ

यह आसन शरीर-मन को शिथिल करके उन्हें विश्राम देता है । पूर्ण शिथिलीकरण एवं योगनिद्रा के लिए यह आदर्श स्थिति है ।

नादानुसन्धान आसन

विधि

किसी गद्दी या लपेटे हुए कंबल पर इस तरह बैठ जाइये कि वह नितंबों के नीचे तथा दोनों पैरों के बीच आ जाये। गद्दी इतनी ऊँची हो कि बैठे-बैठे पीठ जकड़ने न लगे। कुहनियों को घुटनों पर रख लीजिये और उँगलियों को सिर पर।

अंगूठों या तर्जनी उँगलियों से दोनों कान के छिद्रों को हल्के से बन्द कर लीजिये।

अभ्यास प्रारम्भ करने से पूर्व यह सुनिश्चित कर लीजिये कि आप आरामदेह स्थिति में बैठे हैं।

लाभ

नादयोग के अभ्यास के लिए अति उत्तम आसन है।

विपरीतकरणी आसन

विधि

पीठ के बल सीधा लेट जाइये। पैर मिले हुए हों। हाथ बगल में हों। हथेलियाँ नीचे की ओर खुली हों। हाथों का सहारा लेकर पैरों को धीरे-धीरे ऊपर उठाइये। आप की पीठ फर्श से ४५ अंश का कोण बनायेगी। हाथों से नितम्बों को थामे रहिये।

अवधि

अधिक से अधिक ३० मिनट।

श्वास

धड़ को ऊपर उठाते और नीचे लाते समय श्वास को अन्दर रोकिये। जब तक धड़ ऊपर की ओर रहे, तब तक सामान्य ढंग से श्वास लेते रहिये।

टिप्पणी

बढ़ी हुई थायरॉइड ग्रंथि, जिगर, तिल्ली, उच्च रक्त चाप तथा हृदय के रोगी इस आसन का अभ्यास न करें।

विपरीतकरणी आसन, विपरीतकरणी मुद्रा का ही एक अंग है जो कुण्डलिनी योग को एक महत्वपूर्ण क्रिया है। इसका उपयोग विशुद्धि चक्र में अमृत प्रवाह जागृत करने के लिए किया जाता है।

एकादश अध्याय

मुद्रा तथा बन्ध

शरीर तथा चित्त के किसी विशेष भाव को मुद्रा कहते हैं। यौगिक अभ्यासों में मुद्राओं का बड़ा महत्व है। ये चित्त की सूक्ष्म स्थितियों तथा घटनाओं को नियन्त्रित करती हैं। मुद्राओं की विधियाँ अनेक हैं। हाथ की भंगिमा से लेकर सूक्ष्म एकाग्रता तक की स्थितियाँ इनके अन्तर्गत हैं।

बन्धों का अभ्यास अतीन्द्रिय ऊर्जा या प्राणशक्ति की तरंगों को शरीर के निश्चित स्थानों पर नियंत्रित करके इसकी दाबानुकूलित शक्ति से साधक को लाभ पहुँचाता है। साधक इस ऊर्जा पर नियंत्रण प्राप्त कर लेता है। फलतः वह अपने शरीर में इच्छित अंग पर उसे पहुँचाने की क्षमता अर्जित करता है। मुद्रा और बंध मिलकर ध्यान की विविध विधियों का आधार हैं। इन्हें जाने बिना साधक अपनी प्रगति में सीमित रह जाते हैं।

मुद्राओं तथा बंधों की संख्या अनेक हैं। इस अध्याय में हमने उन्हीं को शामिल किया है जो ध्यान करने के लिए आवश्यक हैं।

अधिकांश मुद्राओं का अभ्यास करने से वह शक्ति मिलती है जो प्रगति के लिए आवश्यक है। इनका अभ्यास अत्यन्त सावधानी से करना चाहिये ताकि साधक को शारीरिक या मानसिक हानि न पहुँचे। यदि इन अभ्यासों में किसी तरह की कठिनाई हो या अभ्यास के फलस्वरूप तनिक भी शारीरिक मानसिक असंतुलन दिखाई पड़े तो तुरंत अभ्यास रोक देना चाहिये।

ज्ञान मुद्रा

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठ जाइये ।

दोनों हाथों की तर्जनी को इस प्रकार मोड़िये कि उसका स्पर्श अंगूठे के मूल से हो ।

शेष तीन उंगलियों को एक-दूसरे से कुछ दूरी पर फैलाइये ।

हाथों को घुटनों पर रखिये ।

हथेलियाँ नीचे की ओर रहें ।

प्रकारान्तर

तर्जनी एवं अंगूठे के सिरे आपस में स्पर्श कर सकते हैं। यह अभ्यास भी ठीक है ।

चिन्मुद्रा

विधि

चिन्मुद्रा और ज्ञान मुद्रा में इतना ही अंतर है कि इस में दोनों हथेलियाँ ऊपर की ओर रहती हैं ।

दोनों मुद्राओं के लाभ

ये अत्यन्त सरल मुद्रायें है पर पद्मासन, सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन, सुखासन, वज्रासन आदि को पूर्णता प्रदान करती हैं। स्नायविक आवेग के प्रवाह को शरीर में ऊपर की ओर ले जाकर ये आसनों के प्रभाव को शक्तिशाली भी बनाती हैं ।

नासाग्र मुद्रा

नासाग्र का अर्थ है नाक का अग्रिम भाग। प्राणायाम करते समय इसका अभ्यास किया जाता है। इसका अभ्यास ध्यान के आसन में बैठ कर किया जाता है। इसका उद्देश्य प्राणायाम के नियमों के अनुसार एक नथुना बन्द कर के दूसरे से श्वास लेने या छोड़ने की क्रिया करने के लिए साधक को सक्षम बनाना है।

विधि

ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जाइये।

बायें हाथ को बायें घुटने पर ज्ञान मुद्रा या चिन्मुद्रा में रखिये।

दायें हाथ की मध्यमा और तर्जनी को मिलाकर दोनों भौहों के बीच रखिये।

इस अवस्था में अँगूठा दाहिनी नासिका की ओर तथा अनामिका बायीं नासिका की ओर रहेंगे तथा नासिका छिद्रों को बारी-बारी से बन्द करने की क्रिया करेंगे।

कनिष्ठका का उपयोग इस मुद्रा में नहीं होता है।

दाहिनी कोहनी छाती के सामने रहेगी, हाथ सीधा रहेगा।

कुछ साधक हाथ को सीधा रखने के लिए कपड़े की पट्टी का भी उपयोग करते हैं।

इस अभ्यास को बारी-बारी से (दोनों हाथों की स्थिति बदलते हुये) भी किया जा सकता है।

योनिमुद्रा

यह षन्मुखी मुद्रा के नाम से भी जानी जाती है। कुण्डलिनी योग के अभ्यास में इसका उपयोग किया जाता है। इससे शरीरस्थ द्वारों को बन्द कर दिया जाता है।

विधि

पद्मासन, सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में बैठ जाइये।
धीमी और गहरी श्वास लीजिये।
श्वास रोककर हाथों को चेहरे के समीप ले जाइये।
कानों को अँगूठों से, आँखों को तर्जनी से, नासिका रंध्रों को मध्यमा से और होंठों को अनामिका तथा कनिष्ठिका उँगलियों से बन्द कर लीजिये।
बिन्दु चक्र पर ध्यान लगाये हुये यथासम्भव श्वास रोके रखिये।
तब मध्यमा उँगलियों को हटाकर नाक खोल दीजिये और धीरे-धीरे श्वास लीजिये और छोड़िये।
इस मुद्रा में कुम्भक लगाया जाता है, अतः इसे सावधानी से कीजिये।

लाभ

यह मुद्रा प्रत्याहार के लिए अत्यन्त उपयोगी है।
यह मन को अन्तर्मुखी बनाकर आत्मदर्शन की ओर उन्मुख करती है।

खेचरी मुद्रा

खेचरी मुद्रा का शाब्दिक अर्थ है– "अन्तर्जगत में उड़ने की भंगिमा।" ध्यान की ऊँची क्रियाओं के अभ्यास के लिए यह एक महत्वपूर्ण तथा मौलिक अभ्यास है। जो लोग कुण्डलिनी योग का अभ्यास करना चाहते हैं, उनके लिये इसका अभ्यास एक पूर्वापेक्षा है। इस मुद्रा के दो स्वरूप हैं– पहला राजयोग की पद्धति पर आधारित, और दूसरा हठयोग की पद्धति पर। हठयोग की पद्धति का अभ्यास किसी अनुभवी गुरु के निर्देशन में हीं करना चाहिए। इस पुस्तक में जहाँ कहीं खेचरी मुद्रा का निर्देश दिया गया है, उसे राजयोग की खेचरी मुद्रा समझें।

हठयोग की पद्धति

इस प्रकार की खेचरी मुद्रा का अभ्यास योग के उच्च अभ्यासी साधकों को किसी अनुभवी गुरु के निर्देशन में करना चाहिए।

इसके लिए धैर्य-पूर्वक नियमित अभ्यास करने की आवश्यकता है। इसमें जिह्वा के नीचे की नसों को धीरे-धीरे प्रति सप्ताह काटा जाता है; इसके लिये शल्यविधि या तीव्र धारदार पत्थर का उपयोग किया जा सकता है। दूध दुहने की क्रिया के समान जिह्वा की मालिश की जाती है। इस क्रिया को सुगम बनाने के लिए मक्खन, तेल आदि चिकने और तरल पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। इस क्रिया का अभ्यास तब तक करना चाहिए जब तक जिह्वा के अग्रभाग का स्पर्श भ्रूमध्य से न होने लगे। जिह्वा को मोड़कर सावधानी से तालू के ऊपरी छिद्र से अधिक से अधिक ऊपर की ओर ले जाने की कोशिश होनी चाहिए। इस प्रकार श्वास मार्ग बन्द हो जायेगा और ललना चक्र जागृत होगा।

राजयोग की पद्धति

मुँह बन्द कर लीजिये।

जिह्वा को ऊपर मोड़कर उसके अग्रभाग से तालू का स्पर्श कीजिए।

अधिक जोर नहीं देते हुये जिह्वाग्र को अधिकाधिक पीछे की ओर लाइये।

वैकल्पिक रूप से इस अवस्था में उज्जायी प्राणायाम कर सकते हैं।

नये अभ्यासी थोड़ी ही देर में असुविधा का अनुभव करने लगेंगे। उन्हें कुछ क्षणों तक अपनी जिह्वा को उसकी मूल स्थिति में लाकर, फिर नियमित इसका अभ्यास करना चाहिये।

अभ्यास करने से जिह्वा तालू के ऊपरी छिद्र से ऊपर चली जायेगी।

इससे मस्तिष्क के नाड़ी-केन्द्र उत्तेजित होंगे।

श्वास

खेचरी मुद्रा के प्रारंभिक अभ्यासी श्वसन क्रिया को सामान्य रखें। कुछ हफ्तों और महीनों तक अभ्यास करते हुए श्वास की गति धीमी करते जायें। दो महीने या इससे अधिक की अवधि के बाद श्वास की गति प्रति मिनट पाँच से आठ तक होनी चाहिए।

गुरु के निर्देशन में अभ्यास करते हुये कुछ अभ्यास के बाद श्वसन क्रिया की गति में और अधिक न्यूनता लाई जा सकती है।

यदि अभ्यास करते समय कड़वे स्वाद का अनुभव हो तो यह हानिप्रद है, ऐसी अवस्था में तुरन्त अभ्यास बन्द कर दीजिये।

लाभ

इस क्रिया का असर मानव व्यक्तित्व पर सूक्ष्म रूप से पड़ता है।

तालू के पीछे के रन्ध्र में अनेक दबाव बिन्दु तथा ग्रन्थियाँ हैं। इनका शारीरिक क्रियाओं पर बहुत नियन्त्रण रहता है। मोड़ी हुई जिह्वा के कारण इसकी स्राव-क्रिया में वृद्धि हो जाती है। परिणामस्वरूप भूख-प्यास दूर होती है।

भूमि के नीचे अधिक समय तक रहने वाले योगी पूरे समय खेचरी मुद्रा लगाये रहते हैं। अत: वे बिना किसी तरह की हानि उठाये इच्छित अवधि तक श्वास रोकने में समर्थ होते हैं।

यह मुद्रा प्राणशक्ति का संचय एवं कुण्डलिनी शक्ति को जागृत करती है।

इस अभ्यास के पूर्ण हो जाने पर सूक्ष्म एवं स्थूल शरीर के मध्य सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता है। अर्थात् चेतना सूक्ष्म एवं स्थूल स्तरों के मध्य स्थित आकाश में अवस्थित हो जाती है।

प्राचीन योग शास्त्रों में इस मुद्रा को बहुत महत्वपूर्ण माना गया है।

शाम्भवी मुद्रा

शाम्भवी मुद्रा का शाब्दिक अर्थ है शिव भंगिमा। इसे भ्रूमध्य दृष्टि भी कहते हैं।

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठिये। पीठ सीधी रखिये। हाथ चिन्मुद्रा या ज्ञानमुद्रा में रहें।
सामने किसी बिन्दु पर दृष्टि एकाग्र कीजिये।
तत्पश्चात् सिर को स्थिर रखते हुए अधिक से अधिक ऊपर देखने का प्रयास कीजिये।
अब भ्रूमध्य पर दृष्टि जमाइये।
भ्रूमध्य पर चित्त एकाग्र कीजिये।

लाभ

आज्ञा चक्र को जागृत करने वाली शक्तिशाली क्रियाओं में इसका स्थान है। इस मुद्रा का अभ्यास शारीरिक स्वास्थ्य प्रदान कर आँखों के स्नायुओं को मजबूत बनाता है। इसके अभ्यास से मानसिक शान्ति मिलती है तथा तनाव और क्रोध समाप्त हो जाते हैं।

अगोचरी मुद्रा

अगोचरी मुद्रा का शाब्दिक अर्थ है अज्ञात भंगिमा। इसे नासिकाग्र दृष्टि भी कहते हैं।

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठ जाइये। मेरुदण्ड और सिर सीधा रखिये। नासिका के अन्तिम सिरे पर दोनों नेत्र-गोलकों को स्थिर कीजिये।

सावधानी

नेत्रों पर तनाव न पड़ने पाये।
धीरे-धीरे समय में वृद्धि कीजिये।

लाभ

शाम्भवी मुद्रा की तरह इससे भी एकाग्रता में वृद्धि होती है। यह मूलाधार चक्र को जागृत करती है। साधक को अन्तर्मुखी बनाकर उसे चेतना के इन्द्रियातीत तथा आध्यात्मिक स्तरों तक ले जाती है।

आकाशी मुद्रा

इसका शाब्दिक अर्थ है– आन्तरिक आकाश की भंगिमा। इस शक्तिशाली मुद्रा का अभ्यास धीरे-धीरे और पूरी सावधानी से करना चाहिये।

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठकर खेचरी मुद्रा और साथ में शाम्भवी मुद्रा लगाइये। उज्जायी प्राणायाम भी कीजिये।

धीरे-धीरे सिर को कुछ पीछे की ओर मोड़ते हुये दीर्घ पूरक कीजिए।

सिर को इतना न झुकाइये कि वह कंधों पर टिक जाये।

सिर की झुकी हुई अवस्था में उज्जायी प्राणायाम करने से गले में खराश हो सकती है। कुछ दिनों के अभ्यास के बाद यह कष्ट दूर हो जायेगा।

लाभ

इसका अभ्यास करने से मन भाव-समाधि की स्थिति में पहुंचता है। यह चेतना की एक उच्च स्थिति है।

इसमें उज्जायी प्राणायाम, शाम्भवी एवं खेचरी मुद्रा के लाभ एक-साथ प्राप्त हो जाते हैं।

वज्रोली मुद्रा

वज्रोली मुद्रा का सम्बन्ध वज्र नाड़ी से है जो पैर के निचले भाग से प्रारम्भ होकर स्वाधिष्ठान चक्र तक आती है। इसी नाड़ी के मार्ग से काम-ऊर्जा से सम्बद्ध प्राण प्रवाहित होता है। साधक की सबसे बड़ी समस्या यह है कि मनुष्य की आध्यात्मिक शक्ति उसके शरीर की यौन-प्रणाली के माध्यम से क्षरित हो जाती है। यही उसकी काम-भावना का मूल कारण है। वज्रोली मुद्रा के अभ्यास से यौन ऊर्जा का द्वार नियंत्रित हो जाता है। इस प्रकार साधक अपने प्राण को नियंत्रित करके उसे अपने आध्यात्मिक जागरण के उपयोग में ला सकता है।

सरल विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठिये। हाथ घुटनों पर रहें।

नेत्रों को बन्द करके शरीर को शिथिल कीजिये।

निम्न उदर-प्रदेश पर तनाव लाते हुए तथा मूत्र प्रणाली का संकुचन करते हुए प्रजनन अंगों को ऊपर की ओर खींचिये।

यह संकुचन क्रिया ठीक वैसी ही है जैसी कि मूत्र त्याग की क्रिया को कुछ समय तक रोकने के लिए की जाती है।

ऐसा करते समय पुरुषों के वृषणों (Testes) तथा महिलाओं की योनि को थोड़ा ऊपर की ओर उठना चाहिए।

कठिन विधि (केवल पुरुषों के लिए)

योग्य गुरु के निर्देशन में ही इस कठिन विधि का अभ्यास करना चाहिए अन्यथा भारी हानि हो सकती है। मूत्र मार्ग में लगभग १२ इंच लम्बी चांदी की नली का प्रवेश कराया जाता है। इस नली से पानी ऊपर खींचा जाता है। इस क्रिया का पूर्ण अभ्यास होने के उपरान्त क्रम से दूध, मधु या पारा इसी नली से ऊपर खींचा जाता है। लम्बी अवधि तक का अभ्यास हो जाने पर बिना नली के ही उपरोक्त क्रिया सम्पन्न की जाती है। प्रारम्भ में इस नली को एक इंच तक ही भीतर डालना चाहिए। फिर धीरे-धीरे करके इस दूरी को १२ इंच तक बढ़ाया जाता है।

लाभ

ब्रह्मचर्य पालन के लिए यह उपयोगी विधि है। इस क्रिया के परिणाम-स्वरूप वीर्यपात के कारण नष्ट होती हुई प्राणशक्ति पर नियंत्रण प्राप्त होता है। इसका पूर्ण अभ्यास वीर्यपात होने के बाद भी प्राणशक्ति को नष्ट नहीं होने देता। बाद में साधक इस शक्ति का उदात्तीकरण उच्च यौगिक साधनाओं के लिए कर सकता है।

अश्विनी मुद्रा

अश्विनी मुद्रा का शाब्दिक अर्थ है घोड़े की भंगिमा। मूलबन्ध लगाने के पूर्व इस अभ्यास को सीख लेना आवश्यक है।

विधि १

ध्यान के किसी आसन में बैठ जाइये।
शरीर को शिथिल कीजिये।
आँखों को बन्द करिये। गुदाद्वार की अवरोधिनी (sphincter) मांसपेशियों का कुछ क्षणों के लिये संकुचन व प्रसारण कीजिये। इस क्रिया को बार-बार दुहराइये।

विधि २

पहली स्थिति में बैठ कर गुदाद्वार की अवरोधिनी मांसपेशियों का संकुचन करते हुए पूरक कीजिये। संकुचन करते हुए ही अंतरंग कुम्भक लगाइये। रेचक के साथ मांसपेशियों का प्रसारण कीजिये। इसे दुहराइये।

अवधि

जब तक शरीर को आराम मिले, तब तक कीजिये।

लाभ

इस अभ्यास के द्वारा अश्व की तरह ही गुदा की अवरोधिनी मांसपेशियों पर नियंत्रण प्राप्त किया जाता है। इस अभ्यास के द्वारा साधक अपनी

प्राणशक्ति के ह्रास को रोकने तथा शक्ति का संचय करने में समर्थ होता है। तब वह इस शक्ति के प्रवाह को ऊपर की ओर उच्च उद्देश्य की पूर्ति के लिए मोड़ सकता है।

मूलबन्ध का पूर्वाभ्यास करने के लिए यह एक उपयोगी मुद्रा है।

मूल बन्ध

मूलबन्ध अतीन्द्रिय ऊर्जा को अतीन्द्रिय शरीर के ऊपरी भाग में ही रोक रखता है। मूलबन्ध लगाते समय मानसिक दबाव से मूलाधार चक्र उत्तेजित होता है जो कुण्डलिनी के जागरण में सहायक है।

अभ्यास की प्रारम्भिक स्थिति में साधक मूलाधार चक्र से सम्बन्धित मांसपेशियों को सिकोड़ें। बाद में जब साधक मूलाधार के ठीक बिन्दु को पहचान जायेंगे तब मांसपेशियों के संकुचन की आवश्यकता नहीं रह जायेगी। साधक अपनी सजगता द्वारा सही स्थान का स्पर्श कर लेंगे। यदि ऐसा होने लगे, तो मांसपेशियों के स्थूल संकुचन की अपेक्षा यह अवस्था कहीं अधिक प्रभावोत्पादक होगी।

विधि

ध्यान के किसी ऐसे आसन में बैठ जाइये जिसमें घुटने जमीन को छूते रहें। सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन इसके लिए सर्वोत्तम हैं। इन आसनों में एड़ी का दबाव मूलाधार प्रदेश पर पड़ता है जिससे इस बन्ध का अभ्यास करने में सहायता मिलती है।

हाथों को ज्ञान मुद्रा या चिन्मुद्रा में रखिये।

आँखें बन्द रहें। शरीर को शिथिल रखिये।

तत्पश्चात मूलाधार चक्र की स्थिति का ध्यान कीजिये। अपनी सजगता से इसको स्पर्श करने का प्रयत्न कीजिए।

फिर इसका संकुचन कीजिए।

इस स्थिति में अधिक से अधिक देर तक रहिए।

फिर धीरे-धीरे सामान्य स्थिति आने दीजिये।

थोड़ी देर के बाद इसकी पुनरावृत्ति कीजिये।

मूलबन्ध सामान्यत: जालंधर बन्ध के साथ बाह्य या अन्तरंग कुम्भक लगाये हुए किया जाता है।

सावधानी

इसे धीरे-धीरे सतर्कता से करिये।
अपने को थकाइये नहीं।

लाभ

इस बन्ध में मूलाधार का संकुचन एवं ऊपर की ओर खिंचाव होता है। परिणामस्वरूप अपान वायु का बहाव ऊपर की ओर होता है और उसका संयोग प्राणवायु से होता है। इससे उत्पन्न शक्ति ओजस्विता की जननी है।

अश्विनी, वज्रोली और मूलबन्ध- प्रत्यावर्तन

इस क्रिया का अभ्यास करने से तीनों बन्धों के बीच के फर्क को समझने में सुविधा होती है। प्रारम्भिक अभ्यासी अपनी समस्त श्रोणीय मांसपेशियों को खींचने लगते हैं। उन्हें स्वयं पता नहीं रहता कि वे किस क्रिया का अभ्यास कर रहे हैं। इस प्रकार कुण्डलिनी योग की महत्वपूर्ण क्रियाओं के रूप में इन तीनों की ही प्रभावोत्पादकता समाप्त हो जाती है।

प्रथम अवस्था

ज्ञान मुद्रा या चिन्मुद्रा में ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जाइये।
अब वज्रोली मुद्रा (सरल विधि) लगा लीजिये।
इस स्थिति को दस की संख्या तक धीरे-धीरे गिनते हुए कायम रखिये।
इसके बाद मूलबन्ध लगाइये और दस तक गिनती गिनिये।
धीरे-धीरे मूलबन्ध छोड़ दीजिये।
यह क्रिया जितनी देर तक हो सके, उतनी देर कीजिये।
कुछ दिनों के बाद दस के बदले पन्द्रह गिनती तक इसका अभ्यास कीजिए।

द्वितीय अवस्था

प्रथम अवस्था के ही आसन में बैठिये ।
वज्रोली मुद्रा का अभ्यास कीजिये ।
वज्रोली को मूलबन्ध के साथ जोड़ दीजिये ।
इसके साथ ही अश्विनी मुद्रा का भी अभ्यास जोड़ दीजिये ।
इन तीनों क्रियाओं की स्थिति में एक साथ कुछ सेकण्डों तक रहिये ।
इसके बाद पहले अश्विनी मुद्रा छोड़िये, तत्पश्चात् मूलबन्ध और अन्त में वज्रोली ।

टिप्पणी

तीनों विधियों में अलग-अलग निपुणता प्राप्त कर लेने पर ही इसका अभ्यास करना चाहिये ।
संकुचन के तीन अलग-अलग क्षेत्रों पर आपकी सजगता रहनी चाहिए ।
श्वास से इस अभ्यास का कोई सम्बन्ध नहीं है ।
इसका प्रतिदिन तब तक अभ्यास करिये जब तक आप इनके बीच पाये जाने वाले अन्तर को स्पष्टतया समझने न लगें ।

जालन्धर बन्ध

इस महत्वपूर्ण यौगिक विधि से समस्त प्राण-ऊर्जा धड़ में सिमट जाती है जो कुण्डलिनी जागरण में सहायक है ।

राजयोग विधि

सुखासन के अतिरिक्त ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जाइये ताकि घुटने स्थिरता से धरती पर टिके रहें । जो किसी आसन में नहीं बैठ सकते, वे खड़े रहकर भी जालन्धर बन्ध कर सकते है । खड़े होने की स्थिति में हथेलियों को घुटनों पर रखना चाहिए ।
सम्पूर्ण शरीर को शिथिल करके नेत्रों को बन्द कीजिये ।
दीर्घ पूरक के बाद अन्तरंग कुम्भक लगाइये ।
सिर को सामने झुकाइये ।

तथा ठुड्डी को छाती पर उरोस्थि (sternum) से लगा कर दबाइये।
हाथों पर बल डालते हुये उन्हें स्थिर रखिये।
दोनों कन्धों को एक-साथ ऊपर उठाकर कुछ सामने रखिये। इससे हाथ स्थिर रहेंगे। हथेलियाँ घुटनों पर ही रहेंगी।
इसी अवस्था में श्वास रोक कर उतनी देर तक रहिये, जितनी देर तक आराम से रह सकें।
फिर कंधों को शिथिल कीजिये।
बाजुओं को मोड़ लीजिये। सिर को ऊपर कीजिये।
धीरे-धीरे रेचक कीजिये।
सामान्य श्वसन के बाद पुनरावृत्ति कीजिये।

कुण्डलिनी योग की विधि

जालन्धर बन्ध की यह पद्धति राजयोग से मिलती-जुलती है। थोड़ा-सा अन्तर यही है कि इसमें कंधों और भुजाओं पर बिना दबाव दिये ही सूक्ष्म रूप से अभ्यास किया जाता है। सिर्फ सिर नीचे झुकाया जाता है जिससे ठुड्डी उरोस्थि को छू सके।
इस स्थिति में साधक को मानसिक रूप से इस बात का हमेशा ख्याल रहना चाहिये कि धड़ के हिस्से में प्राणशक्ति का दबाव पड़ रहा है।

टिप्पणी

बहिरंग कुंभक के साथ भी इस क्रिया को किया जा सकता है। ठुड्डी को झुकाकर छाती से दबाने के कारण इस अभ्यास में वायु नलिका बन्द हो जाती है तथा गले के अनेक अंगों पर दबाव पड़ता है।

सावधानी

जब तक ठुड्डी छाती से लगी रहे और जब तक सिर ऊपर उठकर सीधा नहीं हो जाये, श्वास रोके रहें।

सीमायें

जो लोग उच्च रक्तचाप, अन्तःकपाल दबाव तथा दिल के रोगों से पीड़ित हों, उन्हें इसका अभ्यास कुशल निर्देशक के मार्गदर्शन में करना चाहिये।

लाभ

जालन्धर बन्ध के अभ्यास से सम्पूर्ण शरीर तथा मन का शिथिलीकरण हो जाता है।

हृदय की धड़कनों के मन्द हो जाने से सभी अंगों को आराम मिलता है। गले के हिस्से में स्थित शिरानाल अभिग्राहकों (sinus receptors) पर इस प्रक्रिया से उचित दबाव पड़ता है जिसके फलस्वरूप उपरोक्त लाभ मिलता है। मस्तिष्क को रक्त प्रदान करने वाली गल-शिरा (jugular vein) के रक्तचाप से ये अभिग्राहक प्रभावित होते हैं। यदि रक्तचाप उच्च हो, तो मस्तिष्क पर प्रभाव पड़ता है तथा दिल की धड़कनें कम हो जाती हैं। यदि रक्तचाप निम्न हो जाये तो दिल की धड़कन बढ़ जाती है। ये अभिग्राहक रक्तचाप के प्रति अत्यन्त संवेदनशील होते हैं। अतः जालन्धर बन्ध में इन पर दबाव पड़ने के कारण हृदय की धड़कन धीमी हो जाती है और मन को शांति मिलती है।

इससे चुल्लिका (थायरॉइड) और उपचुल्लिका (पैराथायरॉइड) ग्रन्थियों की मालिश होती है। इनकी क्रियाशीलता बढ़ती है। इनका विशेष कर चुल्लिका ग्रन्थि का शारीरिक-रचना के विकास तथा प्रजनन

क्रियाओं पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। ग्रन्थियों की क्षमता बढ़ने से समस्त शरीर प्रभावित होता है। मानसिक तनाव, चिन्ता व क्रोध के निवारणार्थ यह एक अच्छा अभ्यास है। यह साधक को ध्यान के लिए तैयार करता है।

उड्डियान बंध

उड्डियान शब्द का अर्थ है ऊपर उड़ना। इस बंध में उदर तथा डायफ्राम (diaphragm) को ऊपर उठाने की क्रिया की जाती है। इसका उद्देश्य है प्राण को शरीर के ऊपरी हिस्सों में बाँधकर प्राणशक्ति को उर्ध्वगामी बनाना।

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठ जाइये।

घुटने भूमि को छूते रहें।

हथेलियों को घुटनों पर रखिये। आँखें बन्द करके शरीर को शिथिल करिये।

पूरा श्वास छोड़ दीजिये ।
बहिरंग कुम्भक लगाइये ।
अब उदर की मांसपेशियों को अधिक से अधिक ऊपर तथा भीतर की ओर संकुचित कीजिये ।
यह पूर्ण अवस्था है ।
जितनी देर तक आराम से इस क्रिया (बंध) का अभ्यास हो सके, करते जाइये ।
तत्पश्चात् क्रमशः उदर के स्नायुओं तथा जालन्धर बन्ध को शिथिल कीजिये ।
श्वास अन्दर लीजिये ।
जब श्वास की गति सामान्य हो जाये, तो इस क्रिया का अभ्यास फिर से शुरू कीजिये ।

सावधानी

खाली पेट ही इस क्रिया का अभ्यास कीजिये । श्वास अन्दर लेने के पूर्व ठुड्डी ऊपर उठा लीजिये ।

सीमा

हृदय-रोगी, पेप्टिक तथा ड्यूडेनल अलसर से पीड़ित व्यक्ति और गर्भवती महिलायें इस क्रिया का अभ्यास न करें।

लाभ

अनेक रोगों में अचूक लाभ पहुँचाने के अतिरिक्त यह बंध प्राण शक्ति के प्रवाह में वृद्धि करता है ।
चिन्ता की अवस्था में यह मन को स्थिरता प्रदान करता है ।

महाबन्ध

महाबन्ध मूलबन्ध, जालन्धर बन्ध, उड्डियान बन्ध और बाह्य कुम्भक की मिली-जुली क्रिया है ।

विधि

ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जाइये ।
सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन सबसे उत्तम है ।
हाथ घुटने पर रहें ।
धीरे-धीरे श्वास छोड़ दीजिये ।
जालन्धर बन्ध लगाइये ।
फिर उड्डियान बन्ध लगाइये ।
फिर मूलबन्ध लगाइये ।
आराम से इस स्थिति में आप जितनी देर रह सकते हों, रहिये ।
इस स्थिति में तीनों बन्धों पर अपनी चेतना को ले जाइये और मानसिक रूप से उनके नाम का उच्चारण कीजिये ।
क्रमशः कुछ सेकेण्डों तक वहाँ अपनी चेतना को स्थिर कीजिये ।
तब सर्वप्रथम मूलबन्ध शिथिल कीजिये ।
तत्पश्चात् उड्डियान बन्ध ।
अन्त में जालन्धर बन्ध शिथिल करके सिर सीधा कीजिये ।
थोड़ा-सी-साँस बाहर निकाल कर, धीरे-धीरे साँस लीजिये ।
श्वास की गति सामान्य हो जाने पर इस क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये ।

सावधानी

कई क्रियाओं का संयुक्त रूप यह महाबन्ध बहुत शक्तिशाली अभ्यास है। अतः तीनों बन्धों और नाड़ी शोधन प्राणायाम का भली प्रकार अभ्यास किये बिना इस क्रिया का अभ्यास नहीं करना चाहिये।

लाभ

अपने अंदर की छिपी हुई अतीन्द्रिय तथा आध्यात्मिक शक्ति को विकसित करने हेतु यह महाबन्ध अत्यन्त उपयोगी क्रिया है। ध्यान के लिए यह मन को अन्तर्मुखी बनाता है। इसमें तीनों बन्धों के लाभ मिलते हैं।

द्वादश अध्याय

प्राणायाम

योगाभ्यास का उद्देश्य चाहे रोग-निवारण, स्वास्थ्य-लाभ या आध्यात्मिक उपलब्धि हो, साधक के लिए प्राण तथा सूक्ष्म शक्ति पर नियन्त्रण प्राप्त करना आवश्यक है। योग स्वयं ही जीवनीशक्ति का विज्ञान है। मनुष्य के अन्दर ऊर्जा के प्रवाह को संतुलित करने का सबसे सरल तरीका है– प्राणायाम।

बहुत से लोग प्राणायाम को श्वास-नियंत्रण की शारीरिक क्रिया मात्र समझते हैं। पर इस भ्रम में नहीं रहना चाहिए। प्राणायाम का मुख्य प्रभाव स्नायु-संस्थान और अतीन्द्रिय शरीर की क्षमताओं पर पड़ता है। श्वास को जीवन का सूत्र कहा गया है। इस पर हमारे जीवन का संतुलन बहुत हद तक निर्भर करता है। अनेक प्रकार के ध्यान, प्राणायाम पर आधारित होते हैं।

प्राणायाम ध्यान की क्रिया का एक अंग है। यह साधक को सफल निर्बाध ध्यान के लिए शारीरिक एवं मानसिक रूप से तैयार करता है। ध्यान में बैठने के पूर्व मन को अन्तर्मुख करने में यह एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

जो लोग सफलतापूर्वक ध्यान करना चाहते हैं, उन्हें प्राणायाम की विधियों में दक्षता प्राप्त कर लेनी चाहिये। इससे उन्हें बहुत लाभ होगा। परन्तु प्राणायाम अत्यन्त शक्तिशाली क्रिया है। शारीरिक असन्तुलन से ग्रस्त व्यक्ति, वृद्धजन तथा हृदय के रोगी बिना मार्गनिर्देशन के इसका अभ्यास न करें। इसे प्रारम्भ करने के पश्चात् कोई बुरा प्रभाव दिखाई पड़े तो तुरन्त इसका अभ्यास बन्द करके किसी योग्य शिक्षक की सलाह लेनी चाहिए। इसके अलावा अभ्यास की अगली अवस्थाओं की ओर तब तक न बढ़ें, जब तक कि पूर्ववर्ती अभ्यास पूरी तरह सध न जाये।

यदि इन सुझावों का पालन किया गया, तो प्राणायाम आपको अनेक लाभ देगा।

प्रारम्भिक नाड़ी शोधन प्राणायाम

पूरक, अन्तरंग कुम्भक, रेचक तथा बहिरंग कुम्भक में श्वास-नियन्त्रण प्राणायाम-साधना की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है। नाड़ी शोधन की प्रत्येक अवस्था का क्रमिक अभ्यास करना चाहिए। हाँफने की स्थिति न आने पाये। अभ्यास के बीच किसी प्रकार की कठिनाई होने पर तुरंत अभ्यास बन्द करके योग्य शिक्षक की सलाह लेनी चाहिए।

नाड़ी शोधन का अभ्यास अगर ठीक तरह से किया जाये, तो यह शरीर की शुद्धि तथा मन को शान्त करने की दृष्टि से सर्वोत्तम प्राणायाम सिद्ध होगा। कुछ लोगों को इसका अभ्यास अनुकूल नहीं पड़ता। उन्हें इसके अभ्यास के परिणामस्वरूप अपने शरीर के अन्दर हो रहे परिवर्तनों के प्रति सजग रहना चाहिए।

पहली अवस्था

ध्यान के किसी आसन में (वज्रासन नहीं) बैठ जाइये।
हाथों को घुटनों पर रख लीजिये। रीढ़ और गर्दन एक सीध में रहें।
सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कीजिये तथा नेत्रों कों बन्द करके मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्राणायाम के लिए तैयार हो जाइये।
अपनी चेतना को शरीर एवं श्वास पर केन्द्रित कीजिए।
पाँच गिनते हुये श्वास अंदर (पूरक) लीजिये।
पाँच गिनते हुये श्वास बाहर (रेचक) निकालिए।
यह एक आवृत्ति हुई। इस तरह पचास आवृत्ति प्रति दिन के हिसाब से एक सप्ताह तक अभ्यास कीजिये।

दूसरी अवस्था

पहली अवस्था की स्थिति में बैठें।
शरीर को बिल्कुल स्थिर रखें।

अपने दाहिने हाथ को मुख पर लाकर तर्जनी और मध्यमा उँगलियों को नासाग्र मुद्रा में भौंहों के बीच ललाट पर रखें।
सिर और धड़ सीधे और तनावरहित रहें।
दोनों नथुनों से अन्दर श्वास लें।
अब दाहिने नथुने को अँगूठे से बन्द करके बायें नथुने से पाँच की गिनती गिनते हुए श्वास छोड़ें।
दाहिने नथुने को बन्द रखे हुए पुन: बायें नथुने से पाँच की गिनती गिनते हुए श्वास लें।
अब दाहिना नथुना खोलकर अनामिका उँगली से बायाँ नथुना बन्द कर लें और पांच तक गिनते हुए श्वास छोड़ें।
अब दाहिने नथुने से ही श्वास अन्दर लें।
दाहिना नथुना बन्द करके बायें नथुने से श्वास छोड़ें।
बायें नथुने से श्वास लें और दाहिने से छोड़ें।
बायें नथुने से श्वास लें और उसी नथुने से बाहर निकालें। फिर इसी प्रकार दाहिने नथुने से करें। ऐसा २५ बार करें। अन्त में बायें नथुने से श्वास छोड़कर उसी से श्वास लें।
फिर दोनों नथुनों से श्वास छोड़कर आँखें खोल दें।
शरीर को शिथिल करने की चेष्टा करें।
अपने अभ्यास में ५ आवृत्तियाँ रोज जोड़ें और धीरे-धीरे करके ५० आवृत्तियाँ प्रति दिन करें।

तीसरी अवस्था

दूसरी अवस्था से प्रगति करते हुये श्वास लेते समय दस तक गिनें।
एकाध सप्ताह में इतनी प्रगति हो जानी चाहिये।
श्वास की स्वाभाविक क्षमता से अधिक दबाव उस (श्वास) पर न डालें।
इस स्थिति में निपुणता प्राप्त होने तक प्रति दिन पचास आवृत्तियाँ करें।

चतुर्थ अवस्था

दूसरी अवस्था के ही अभ्यास में यह जोड़ दें।
श्वास अन्दर लेने के बाद पाँच की गिनती गिनते तक श्वास को फेफड़े में

रोके रहें। कण्ठद्वार बन्द करें। तत्पश्चात् जिस नथुने से पूरक किया है उसके बगल वाले नथुने को खोल दें।
थोड़ा-सा श्वास लें और फिर उस नासिका से पाँच तक गिनती गिनते हुये श्वास छोड़ें।
इस स्थिति की पचास आवृत्तियाँ करें।

पाँचवीं अवस्था

चौथी अवस्था की तरह अभ्यास करें लेकिन हर रेचक के बाद पाँच तक की गिनती के साथ बहिरंग कुम्भक लगायें।
बहिरंग कुम्भक के बाद हर बार थोड़ा रेचक करके पूरक करें।
बहिरंग कुम्भक के बाद हल्का रेचक और अन्तरंग कुम्भक के बाद हल्का पूरक प्राणायाम अभ्यास का एक बहुत महत्वपूर्ण अंग है क्योंकि लम्बे कुम्भक के बाद इस विधि से श्वास को नियंत्रित करने में सहायता मिलती है।

छठी अवस्था

पाँचवीं अवस्था का ही अभ्यास करें लेकिन रेचक, पूरक और दोनों प्रकार के कुम्भक के अभ्यास में प्रतिदिन एक संख्या की गिनती बढ़ाते जायें।
दस तक की गिनती तक ऐसा करते जायें।
अपनी शारीरिक क्षमता का ध्यान रखें।

सातवीं अवस्था

पूर्ववत् अभ्यास करें पर पाँच की गिनती तक पूरक, बीस की गिनती तक अन्तरंग कुम्भक, दस की गिनती तक रेचक और पाँच की गिनती तक बहिरंग कुम्भक करें।

आठवीं अवस्था

अब गिनती को इस अनुपात में बढ़ायें– पूरक पाँच, कुम्भक बीस, रेचक दस, बहिरंग कुम्भक दस।
अभ्यास को धीरे-धीरे बढ़ायें।

नवीं अवस्था

अपनी गिनती को १:४:२:२ के अनुपात में धीरे-धीरे करके बढ़ाते जायें–यानी पूरक एक, कुम्भक चार, रेचक दो, बहिरंग कुम्भक दो। शरीर या मन पर आवश्यकता से अधिक तनाव न पड़ने दें।

इस तरह अब आप अपनी सुविधा के अनुसार– ८:३२:१६:१६ या ६:२४:१२:१२ या १०:४०:२०:२० के अनुपात में अभ्यास कर सकते हैं।

नाड़ी शोधन प्राणायाम

प्रारम्भिक नाड़ी शोधन प्राणायाम की नवीं अवस्था की तरह ही नाड़ी शोधन प्राणायाम का अभ्यास किया जाता है। साथ में कुछ और चीजें जोड़ी जाती हैं।

पूरक के पश्चात् दाहिने हाथ को दाहिने घुटने पर रखकर राजयोग पद्धति से जालन्धर बन्ध लगायें।

कुम्भक के अन्त में जालन्धर बन्ध खोल दें। सिर उठा लें। अपना दाहिना हाथ नासाग्र मुद्रा में लाकर थोड़ा पूरक करें।

और तब दूसरे नथुने के द्वारा रेचक करें। रेचक के बाद अपने दाहिने हाथ को घुटने पर लाकर जालन्धर बन्ध, उड्डियान बन्ध मौर अन्त में मूल बन्ध लगायें।

बहिरंग कुम्भक के अन्त में पहले मूल बन्ध खोलें, फिर उड्डियान बन्ध और अन्त में जालन्धर बन्ध।

अपने हाथ को नासाग्र मुद्रा में उठाकर थोड़ा श्वास छोड़ें और लें।

यह सम्पूर्ण नाड़ी शोधन प्राणायाम है।

शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक शान्ति के लिए प्रतिदिन इसकी पचास आवृत्तियाँ करें।

टिप्पणी

मानसिक गिनती करने के बदले एक माला का उपयोग करें जिसमें २५ या ५० दाने हों।

श्वास की अवधि का निर्धारण करने के लिए कुछ मंत्रों का एक निश्चित

संख्या में जप किया जा सकता है जैसे 'ओम् नमः शिवाय' या गायत्री मंत्र। नाड़ी शोधन में विभिन्न अनुपात रखे जा सकते हैं, जैसे–१:६:४:२, १:६:३:३, १:४:२:१, १:८:४:२ आदि।

नाड़ी शोधन प्राणायाम के पश्चात् क़ोई गम्भीर ध्यानाभ्यास, जैसे–अन्तरत्राटक या चिदाकाश धारणा अत्यन्त लाभप्रद होगा।

उज्जायी प्राणायाम

प्राण-शरीर पर सूक्ष्म प्रभाव डालने वाला यह सरल परन्तु प्रभावकारी प्राणायाम है। कंठ प्रदेश में जो मस्तिष्क की तरफ आने वाली मुख्य रक्त धमनी के पीछे ग्रीवा-साइनस हैं, उन पर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है। जब रक्तचाप उच्च या अल्प हो जाता है तो इन साइनस के द्वारा इसकी खबर मस्तिष्क तक जाती है। फिर मस्तिष्क यह खबर हृदय की ओर भेज देता है, जिससे हृदय की गति नियंत्रित हो कर सामान्य अवस्था में आ जाती है।

उज्जायी प्राणायाम के अभ्यास से इन साइनस पर दबाव पड़ता है जिससे रक्तचाप कम होता है। परिणामस्वरूप तनाव तथा विचार प्रक्रियायें कम हो जाती हैं। इस प्रकार यह ध्यान के लिए अत्यन्त उपयोगी है। इसे खेचरी मुद्रा के साथ करने से गला दुखता नहीं है।

विधि

खेचरी मुद्रा का अभ्यास करें। कंठद्वार को संकुचित करें।

जब आप इस स्थिति में श्वास लेंगे तब गले से हलके खर्राटे की-सी आवाज आयेगी, जैसी कि सोते बच्चे के गले से आती है।

ऐसा अनुभव करें कि श्वसन क्रिया नासिका से नहीं, गले से हो रही है।

टिप्पणी

इसका अभ्यास सभी प्रकार की ध्यान विधियों में किया जा सकता है (उन विधियों को छोड़कर जिसमें सस्वर मंत्रोच्चारण किया जाता है)।

भस्त्रिका प्राणायाम

भस्त्रिका प्राणायाम में फेफड़ों का उपयोग लोहार की धौंकनी की तरह होता है। यह मन और स्नायु संस्थान को शुद्ध बना देता है। इसका अभ्यास मन को अन्तर्मुखी बनाता है तथा एकाग्रता प्रदान करता है। अभ्यास करते समय यदि किसी प्रकार की विपरीत प्रतिक्रिया दिखाई पड़े, तो योग-शिक्षक की राय लें।

पहली अवस्था

ध्यान के किसी आसन में बैठकर हाथों को ज्ञानमुद्रा या चिन्मुद्रा में रखें।
आंखें बन्द करें और पूर्णतः शरीर को शिथिल करें।
मेरुदण्ड सीधा रखें।
धीरे-धीरे अपने श्वसन की गति सामान्य गति से दुगुनी बढ़ा लें।
इस विधि से पचास बार श्वास लें या तब तक इस तरह श्वास लेते रहें जब तक सिर हल्का न लगने लगे।
अब एक बार गहरी श्वास लेकर कुम्भक करें और जालंधर तथा मूल बंध लगायें। श्वास तब तक रोके रहें जब तक आप उसे सुविधापूर्वक रोक सकते हैं। यह एक आवृत्ति हुई।
कुम्भक के उपरान्त बन्धों को मुक्त करें और रेचक करें।
श्वसन क्रिया सामान्य हो जाने पर इसे दुहरायें।
प्रतिदिन एक आवृत्ति बढ़ाते जायें।
जब बिना किसी असुविधा के दस आवृत्ति करने लगें तब दूसरी अवस्था का अभ्यास करें।

दूसरी अवस्था

प्रथम अवस्था की स्थिति में बैठें।
अपने दाहिने हाथ को नासाग्र मुद्रा में रख लें।
दाहिना नथना बन्द करें। बायाँ नथना खुला रहने दें।
बायें नथने द्वारा सामान्य से दुगनी गति से श्वसन क्रिया करें।
अब बायाँ नथना बन्द कर लें।

दाहिने नथने द्वारा सामान्य से दुगुनी गति से श्वसन क्रिया करें।
हाथ नीचे कर लें और दोनों नथनों से एक साथ इसी तरह बीस बार श्वसन क्रिया करें।
यह एक आवृत्ति हुई। पाँच आवृत्तियाँ करें।
प्रति दिन एक-एक आवृत्ति बढ़ाते जायें।
जब पूरी तरह से दस आवृत्ति की क्षमता आ जाये, तब तीसरी अवस्था का अभ्यास करें।

तीसरी अवस्था

पहली या दूसरी अवस्था की स्थिति में बैठकर बायें नथने द्वारा बीस बार द्रुत गति से श्वसन क्रिया करें।
फिर दाहिना हाथ नीचे कर के धीमी गहरी श्वास लें और जालन्धर तथा मूल बन्ध लगाकर अन्दर साँस रोके रहें।
सुविधानुसार इस स्थिति में रहने के बाद बंधों को खोलें और रेचक करें।
अपना दाहिना हाथ नासाग्र मुद्रा में उठायें और दाहिने नथने से तीव्र गति से श्वसन क्रिया करें।
फिर उपरोक्त दोनों बन्ध लगायें और अन्दर साँस रोकें।
बन्धों को खोल कर रेचक करें।
अब दोनों नथनों से बीस बार श्वसन क्रिया करें, बन्ध लगायें तथा अन्दर साँस रोकें।
यह एक आवृत्ति हुई।
श्वास सामान्य हो जाने पर इसकी पुनरावृत्ति करें।
इसका अभ्यास प्रारंभ में दो बार करें, फिर एक-एक आवृत्ति बढ़ाते जायें।
जब दस आवृत्तियाँ सुविधानुसार होने लगें, तब चौथी अवस्था में आवें।

चौथी अवस्था

इसमें भी तीसरी अवस्था के अनुसार अभ्यास चलेगा। केवल श्वसन क्रिया पहले की अपेक्षा ज्यादा तीव्रगति से (सामान्य से चौगुनी) चलेगी।
इसके साथ ही कुम्भक की मात्रा स्वाभाविक रूप से ज्यादा बढ़ जायेगी।
यह अभ्यास कुछ हफ्तों तक करना चाहिए लेकिन करते समय आवश्यकता

से अधिक जोर न लगायें।
जब आप दस आवृत्तियों का अभ्यास करने लगें, तब आप भस्त्रिका की पाँचवीं अवस्था कें अभ्यास करें।

पाँचवीं अवस्था

रोज धीरे-धीरे श्वास की संख्या को पाँच-पाँच के हिसाब से बढ़ाते जायें।
जिस समय आप प्रति आवृत्ति पचास बार श्वसन क्रिया करने लगेंगे तब आप भस्त्रिका की अन्तिम अवस्था तक पहुँच जायेंगे।
इस प्रकार प्रतिदिन धीरे-धीरे भस्त्रिका प्राणायाम की मात्रा पच्चीस आवृत्ति तक बढ़ाई जा सकती है।

टिप्पणी

भस्त्रिका प्राणायाम के तुरन्त बाद जप, चिदाकाश धारणा अथवा अन्तर्मौन का अभ्यास करना चाहिये।

सावधानी

भस्त्रिका प्राणायाम के अभ्यास के समय वेहोशी अथवा पसीना निकलने की स्थिति यह सूचित करती है कि अभ्यास उचित ढंग से नहीं किया जा रहा है।
बलपूर्वक श्वसन क्रिया नहीं की जानी चाहिये।
अभ्यास करते समय मुख विकृत करना ठीक नहीं है। अभ्यास के समय शरीर को ज्यादा हिलाना-डुलाना भी ठीक नहीं है।
सम्पूर्ण क्रिया को बहुत आराम के साथ और धीरे-धीरे करना चाहिये।

सीमायें

उच्च रक्तचाप और घुमड़ी (vertigo) के रोगी तथा हृद-धमनी, श्वसन तथा रक्तसंचार सम्बन्धी समस्याओं से ग्रसित व्यक्तियों को भस्त्रिका प्राणायाम नहीं करना चाहिये। प्रारम्भिक अभ्यास में विशेष सावधानी रखें।

कपालभाति प्राणायाम

कपालभाति का मतलब है– धौंकनी की तरह क्रिया करके सामने के कपाल को साफ करना। यह एक शक्तिशाली प्राणायाम है जिससे मन बहुत जल्दी अन्तर्मुखी होता है। इस प्राणायाम को करने के बाद ध्यान करने की क्षमता बढ़ती है। साधक की चेतना सूक्ष्म जगत की ओर अग्रसर होती है।

विधि

ध्यान के किसी आसन में चिन्मुद्रा या ज्ञानमुद्रा लगाकर बैठ जायें।
आँखें बन्द करके सम्पूर्ण शरीर को शिथिल करें।
रेचक पर बल देते हुए तीव्र गति से श्वसन क्रिया करें।
पूरक सहज और रेचक बलपूर्वक करें।
लगातार बीस से तीस बार तक या जब तक हलकापन अनुभव न होने लगे, रेचक करें।
इसके बाद लम्बा पूरक करें, फिर पूरी तरह रेचक करके महाबन्ध लगायें।
अपनी चेतना को चिदाकाश पर केन्द्रित करें। यह एक आवृत्ति हुई।
इस स्थिति में जब तक सुविधा से रुक सकें, रुकें। तब इसके बाद महाबन्ध खोल कर हल्के रेचक के बाद मन्द पूरक करें।
शुरू में दो आवृत्तियाँ ही पर्याप्त हैं। फिर एक-एक आवृत्ति प्रतिदिन बढ़ाते जायें (बीस आवृत्ति तक)।
श्वास की संख्या प्रति आवृति पाँच तक बढ़ाते जायें, जब तक उनकी संख्या सौ न हो जाये।
कपालभाति के अभ्यास के पश्चात् प्रतिदिन चिदाकाश धारणा का अभ्यास कम से कम दस मिनट अवश्य करें।

सावधानी

भस्त्रिका प्राणायाम में निपुणता पा लेने के बाद ही कपालभाति का अभ्यास करना चाहिए।

सीमा

कपालभाति का अभ्यास उच्च रक्तचाप, हृदय एवं श्वास रोग आदि से पीड़ित व्यक्तियों को नहीं करना चाहिये।

लाभ

यह साधक को सहज ही अन्तर्मुखी बनाता है। मन विचारों और बिम्बों से मुक्त हो जाता है। ध्यान से पूर्व किये जाने वाले प्राणायामों में यह सर्वोत्तम प्राणायाम है।

भ्रामरी प्राणायाम

भ्रामरी का शाब्दिक अर्थ है भ्रमर (भौंरा)। नाद योग की तैयारी में इस प्राणायाम का उपयोग होता है।

विधि

ध्यान के किसी आसन में ज्ञानमुद्रा या चिन्मुदा लगाकर बैठ जायें।
दोनों नथनों से पूरक करें।
अंतरंग कुम्भक लगाकर जालंधर तथा मूल बंध पाँच की गिनती तक करें।
बंधों को मुक्त कर दें।
दोनों कर्णछिद्रों को तर्जनी अंगुली से बन्द करें।
मुँह बन्द रहे पर ऊपर और नीचे के दाँत एक-दूसरे से अलग रहें।

धीरे-धीरे रेचक करते हुये भौंरे की तरह लगातार गुंजन करें।
उस ध्वनि तरंग को सिर में अनुभव करें।
सिर्फ इसी ध्वनि पर चेतना केन्द्रित करें।
रेचक के पश्चात् हाथ नीचे करें।
यह एक आवृत्ति हुई।
पाँच आवृत्तियों से शुरू करके एक-एक आवृत्ति प्रतिदिन बढ़ाते जायें।

सावधानी

भ्रामरी प्राणायाम शरीर की झुकी हुई स्थिति में कभी नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे कण्ठद्वार (glottis) को भारी तनाव झेलना पड़ेगा।

लाभ

भ्रामरी प्राणायाम नाद के प्रति सजगता में वृद्धि करता है। यह मानसिक तनाव, क्रोध, चिन्ता आदि दूर करता है।
इसका अभ्यास उच्च रक्तचाप में भी लाभकारी है।

तृतीय खण्ड

ध्यान के अभ्यास

त्रयोदश अध्याय

जप योग

समाधि की ओर ले जाने वाली योग की सभी पद्धतियों में जप योग सबसे सरल है। इसका अभ्यास हर व्यक्ति आसानी से हर परिस्थिति में कर सकता है।

जप का अर्थ है पुनरावृत्ति या आवर्तन और जप योग का उद्देश्य है चेतना के आवर्तन द्वारा परम सत्ता से एकीकरण अर्थात मिलन। इसी उद्देश्य के बोध के साथ जप किया जाना चाहिये

जप के अभ्यास के लिए किसी निश्चित मन्त्र का होना परम आवश्यक है। 'मन्त्र' शब्दों के तरंगों का एक समूह है जिसका प्रभाव मनुष्य की अतीन्द्रिय चेतना पर पड़ता है। शास्त्रीय परम्परा के अनुसार यह कहा जाता है कि जो मन्त्र गुरु से या स्वप्न में प्राप्त होते हैं, वे सर्वश्रेष्ठ हैं। मुख्य बात यह है कि मन्त्र पूरी तरह से दिमाग में बैठ जाये। मानसिक या वाचिक जप द्वारा वे ध्वनि तरंगें व्यक्ति की आन्तरिक चेतना में एक रूप ग्रहण करती हैं जिसका भौतिक प्रकटीकरण भी होता है।

जप के लिए दूसरी आवश्यक वस्तु है माला। माला के विभिन्न दाने एक गाँठ द्वारा जुड़े रहते हैं जिसे ब्रह्म गाँठ कहते हैं। माला में एक सुमेरु होता है। यह एक सौ आठ दाने के अतिरिक्त होता है। माला में जप का प्रारम्भ सुमेरु से ही किया जाता है। जप के आधुनिक अभ्यासी इस सुमेरु की महत्ता को भूल बैठे हैं। अक्सर जप करते समय नये अभ्यासी का ध्यान अनायास ही बाह्य विचारों में भटक जाता है। जो पुराने साधक होते हैं उनका मन अचेतन या अतीन्द्रिय मन के दृश्यों और प्रपंचों में खो जाता है। जब मंत्र से ध्यान हटकर इधर-उधर भटकने लगता है तब भी माला यंत्रवत घूमती रहती है। सुमेरु का उद्देश्य है

उस भटकते हुए मन को ठोकर मारकर जगा देना। जब उँगलियाँ सुमेरु पर पहुँचती हैं, तब सुमेरु का स्पर्श होते ही मन सचेत हो उठता है।

जप में मंत्र पर अवस्थित चेतना का आवर्तन होता रहता है, जिससे मन में एकाग्रता और विश्रान्ति आती है। इससे व्यक्ति की सभी शारीरिक और मानसिक क्षमताएँ कुशलतापूर्वक कार्यरत रहती हैं। यह बात हमेशा याद रखें कि मन को बलात मंत्र पर एकाग्र करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। मंत्र की आवृत्ति सहज रूप से अन्तर्मन से होनी चाहिए। जप करते समय दूसरे विचारों का आना स्वाभाविक है। उन्हें द्रष्टा या साक्षी रूप से देखना चाहिए। वे आयेंगे और चले जायेंगे। साधक का मन उनसे प्रभावित नहीं होना चाहिए। ऐसी अवस्था में जप बन्द नहीं होना चाहिए। बाह्य विचारों को तटस्थ भाव से देखते हुए जप चलता रहना चाहिए।

जप के सम्पूर्ण अभ्यास को चार भागों में बाँटा जा सकता है। इनका विवरण इस प्रकार है :

बैखरी जप

प्रारम्भ में सस्वर मंत्र-पाठ करना ठीक है। इस तरह बोलकर मंत्र का जप करने से उसकी ध्वनि तरंगें मस्तिष्क में पूर्णतः भरती जायेंगी, जिसके फलस्वरूप कुछ सप्ताहों के अभ्यास के पश्चात् मन शान्त और स्थिर हो जायेगा। जप करने से मन में एक वातावरण तैयार होता है जिसके द्वारा अतीन्द्रिय स्तर पर प्रतिबिम्बों-प्रतीकों का दर्शन आसान हो जाता है।

यदि आप किसी विशेष वस्तु पर ध्यान एकाग्र करने में कठिनाई अनुभव करते हों तब एक घंटे तक बैखरी जप का अभ्यास करें। इसके बाद ध्यान में बैठें। कुछ दिन, सप्ताह, या महीनों तक इसका अभ्यास करने के बाद उपांशु जप शुरू कर दें।

उपांशु जप

इसमें मन्त्र का उच्चारण इतना धीमा होता है कि केवल साधक स्वयं ही उसे सुन सकता है। केवल ओठ हिलते हैं और कोई ध्वनि नहीं

निकलती। यह क्रिया बैखरी से ज्यादा सूक्ष्म है तथा इसके द्वारा मानसिक जप की तैयारी की जाती है। उपांशु जप का अभ्यास उन साधकों द्वारा किया जाता है जो किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए आठ-दस घंटे बैठकर जप साधना किया करते हैं। मंत्र शास्त्र के अनुसार भाग्य के दोष को मिटाने के लिए भी मंत्र का जप किया जा सकता है। ऐसे लोगों की संख्या कम नहीं है जो शारीरिक स्वास्थ्य प्राप्त करने के उद्देश्य से मंत्र का जप किया करते हैं।

मानसिक जप

जब तक बैखरी और उपांशु का अभ्यास अच्छी तरह से न हो जाये, तब तक मानसिक जप का अभ्यास सम्भव नहीं है। विशेष रूप से अस्थिर मन वाले लोग वैखरी और उपांशु जप का अभ्यास किये बिना मानसिक जप में जल्दी प्रगति नहीं कर सकते। जप का सबसे प्रचलित और सूक्ष्म रूप मानसिक जप है। जो लोग इसका अभ्यास कर सकते हैं, उनके लिए यह जप का एक बहुत शक्तिशाली तरीका है। ऋषियों और शास्त्रों का कहना है कि मानसिक जप का निष्ठापूर्ण अभ्यास मनुष्य को मुक्ति दिला सकता है। वास्तव में ९० प्रतिशत सन्तों ने आत्मोन्नति के लिए पूर्णतः मानसिक जप पर ही अपने आपको निर्भर किया।

लिखित जप

इस तरह का जप उन साधकों के लिए है जो जप के अन्य साधनों के अभ्यास द्वारा उच्च एकाग्रता की स्थिति को प्राप्त कर चुके हैं। लिखित जप के लिए एक कापी लेनी चाहिये। उसमें हरे, नीले या लाल रंग से मंत्र को छोटे-छोटे सुन्दर अक्षरों में करीब सौ या उससे अधिक बार लिखना चाहिए। मंत्र के अक्षर छोटे, सुन्दर, स्वच्छ, स्पष्ट आकार में हों तथा उन्हें जितना सम्भव हो सके, एकाग्रतापूर्वक तथा सावधानी के साथ लिखना चाहिए। अक्षर जितना ही छोटा होगा, उतनी ही एकाग्रता बढ़ेगी। लिखित जप तथा मानसिक जप एक-दूसरे के साथ सम्बद्ध रहते हैं क्योंकि मंत्र लिखते समय उसकी मानसिक पुनरावृत्ति भी होती है।

मंत्र का अभ्यास इस प्रकार करें– तीन भाग बैखरी, दो भाग उपांशु और एक भाग मानसिक। हिन्दू परम्परा के अनुसार एक बार कोई किसी मंत्र में दीक्षित हो गया हो तो आजीवन उसे उसी मंत्र का अभ्यास करना चाहिए। जप योग का रास्ता भले ही लम्बा हो पर वास्तव में यह निश्चित और सुरक्षित है। यह आध्यात्मिक जीवन के सन्तुलित विकास का प्रमुख साधन है।

जप अनुष्ठान

अनुष्ठान का अर्थ होता है किसी कार्य को अनुशासन के साथ पूरा करने का संकल्प लेना। जप अनुष्ठान के दो मुख्य उद्देश्य होते हैं–

क. शारीरिक, मानसिक तथा अतीन्द्रिय अनुशासन के द्वारा आध्यात्मिक विकास के लिए आत्मशुद्धि।

ख. भौतिक जीवन में सफलता।

बैखरी जप के अनुष्ठान साधकों द्वारा सामूहिक रूप से भी किये जाते हैं। भारतवर्ष में कहीं-कहीं एक ही मंत्र का अभ्यास वर्षों तक किया जाता है। ऋषिकेश में सन् १९४३ से *हरे राम हरे कृष्ण* महामंत्र का जप चौबीसों घंटे लगातार चल रहा है। इसमें एक क्षण भी व्यतिरेक नहीं हुआ है। मंत्रोच्चारण से वातावरण में दिव्य, सशक्त लहरें फैलती रहती हैं।

भारत में 'जप अनुष्ठान' ही लोकप्रिय है। यह उन लोगों के लिए सर्वोत्तम है, जिनका मन इधर-उधर भटकता रहता है। श्रावण महीने में कई स्थानों में बेल के पत्तों पर मंत्र लिखने की हिन्दू परम्परा है। प्रत्येक बेल-पत्र में तीन दल होते हैं। उस पर कुंकुम के घोल से 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र लिखते हैं। फिर उन पत्रों को एकत्र कर के इष्ट देव को अर्पित करते हैं। यह अभ्यास पूरे श्रावण महीने भर चला करता है।

मानसिक जप-अनुष्ठान के अन्तर्गत गुरु द्वारा प्राप्त मंत्र का अनुष्ठान अधिक लोकप्रिय है। आध्यात्मिक साधकों के लिए यह सर्वोत्तम है। इस अभ्यास का प्रारम्भ करने के पूर्व साधक को जप अनुष्ठान सम्बन्धी लक्ष्य निश्चित कर लेना चाहिए। मान लीजिये, साधक ने दस

दिनों तक १०,८०० बार मंत्र जपने का लक्ष्य निर्धारित किया है। प्रतिदिन उसे दृढ़ता के साथ इसी लक्ष्य को ध्यान में रख कर अनुष्ठान करना चाहिये। निश्चित लक्ष्य के पूरा होने तक जप करते रहना आवश्यक है।

सुमिरनी जप २७ दानों की माला पर किया जाने वाला अभ्यास है। सुमिरनी माला में सुमेरु नहीं होता। यह एक महत्वपूर्ण अभ्यास है। यह एक निश्चित अवधि तक चौबीसों घंटे चलने वाला अनुष्ठान है, जिसमें एक भी क्षण के लिए साधक के हाथ से माला नहीं छूटती। इस तरह के अनुष्ठान में मंत्र की बार-बार आवृत्ति करना उद्देश्य नहीं होता। इसमें मंत्र स्वत: प्रस्फुटित होते हैं। निद्रा में भी माला घूमती रहनी चाहिए।

मंत्र

इस पुस्तक के अन्त में कुछ मंत्रों की सूची दी गयी है।

जप के नियम और निर्देश

१. किसी एक मंत्र या देवता का नाम चुन लें। अच्छा होगा यदि मंत्र गुरु द्वारा दिया गया हो। प्रति दिन इसका जप एक माला से (एक सौ आठ बार) लेकर दस माला तक करें।
२. तुलसी या रुद्राक्ष की माला का प्रयोग करें। माला में सुमेरु के अतिरिक्त एक सौ आठ दाने हों। तांत्रिक अभ्यास के लिए स्फटिक की माला का व्यवहार किया जाता है।
३. दाहिने हाथ की मध्यमा उँगली और अँगूठे से दानों को घुमायें। अन्य उँगलियों का उपयोग न करें।
४. जप का अभ्यास ध्यान के किसी भी आसन (जैसे– पद्मासन, सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन) में बैठकर करना चाहिए। दाहिना हाथ माला के साथ घुटने पर टिका रहे। माला भूमि को छूती रहेगी। माला को पकड़े हुए दाहिना हाथ वक्षस्थल केन्द्र में भी रह सकता है। इस स्थिति में माला को कपड़े के झोले में भी रखकर घुमाया जा सकता है। यह झोला गले या कलाई में झूलता रहेगा। कलाई को कंधे से झूलती हुई पट्टी के अन्दर डाल कर रखा भी जा सकता है।

५. माला पर दूसरों की दृष्टि न पड़े । जब इसका उपयोग न हो रहा हो, तब उस समय इसे कपड़े में बाँध कर या किसी रेशमी थैले के अन्दर रखें। टूटी हुई माला से जप न करें ।
६. सुमेरु को पार करके माला न घुमायें । सुमेरु पर पहुँच कर वहीं से माला घुमा कर जपें ।
७. कुछ समय के लिए मानसिक जप करें। यदि मन इधर-उधर भागने लगे तो बैखरी जप शुरू कर दें। फिर जितनी जल्दी सम्भव हो सके, मानसिक जप प्रारंभ कर दें ।
८. मंत्र के प्रत्येक अक्षर का उच्चारण शुद्ध और स्पष्ट करें। जप न तो बहुत द्रुत गति से करें और न बहुत मन्द गति से। जब मन इधर-उधर भटकने लगे, तो जप की गति अवश्य बढ़ा दें ।
९. जप करते समय किसी सांसारिक वस्तु की कामना न करें। इस बात का अनुभव करें कि मंत्र शक्ति के प्रभाव से आपका हृदय और मन शान्त और स्थिर हो रहा है ।
१०. अपने गुरु मन्त्र को गुप्त रखें । उसे किसी के सामने प्रगट न करें ।
११. किसी भी काम में क्यों न लगे हों, मंत्र की धारा प्रतिपल अन्तर्मन में प्रवाहित होती रहे ।
१२. साधकों को यथासम्भव उत्तर या पूर्व दिशा की ओर मुँह करके मंत्र-जप करना चाहिए।
१३. जप करते समय अवचेतन मन के छिपे हुए संस्कार विभिन्न प्रतिबिम्बों, चित्रों, दृश्यों और विचारों के रूप में चेतन मन के तल पर आयेंगे। एक तटस्थ दर्शक की तरह उन्हें देखें लेकिन उनसे प्रभावित होकर जप करना न भूल जायें ।

जप करने से चित्त शुद्धि होता है, मन पवित्र होता है, वासनाओं और संस्कारों का क्षय होता है । आध्यात्मिक जीवन के विकास तथा चित्त-शुद्धि के लिए संस्कार और वासनाओं का क्षय होना आवश्यक है अन्यथा वे बाधायें पहुँचाते हैं।

शास्त्रों में कहा गया है कि योग में ध्यान के पथ पर मुख्य तीन प्रकार की बाधाएँ आती हैं– मल, आवरण और विक्षेप । इन तीनों प्रकार की बाधाओं को जप के प्रति अखण्ड सजगता से हटाया जा सकता है ।

मंत्र-जप के अभ्यास में बलपूर्वक चित्त को एकाग्र करने की आवश्यकता नहीं है। केवल एक ही चीज की आवश्यकता है। पूर्णतः विश्रामपूर्ण स्थिति में सहज रूप से, अपने इष्ट मंत्र के प्रति अखण्ड और तैलधारावत् सजगता रहनी चाहिए। यह स्थिति ही मन की बहिर्मुखी वृत्ति से साधक को उबार सकती है।

हम सामान्यतः चिन्ता, उत्तेजना और तनाव में भरे रहते हैं। यह हमारी वास्तविक प्रकृति नहीं है। हमारी असली प्रकृति है– शुद्ध चेतना, शान्ति, नीरवता, समचित्तता और समाधि-युक्त चित्त की स्थिति। हम इसकी तुलना एक धुँधले आइने से करें जिस पर धूल की परतें जम गई हैं। यदि हम आइने को साफ कर दें, तो वस्तु को प्रतिबिम्बित करने का उसका वास्तविक गुण सहज ही उजागर हो जायेगा।

मन की अशान्ति ही सारे दुःखों, तनावों एवं जटिलताओं की जड़ है। लेकिन ये सारी चीजें हम पर आरोपित की गई हैं। साधना द्वारा मन को शान्त और शुद्ध करें। आपको ध्यान, समाधि तथा आत्मा के शुद्ध स्वरूप का बोध होगा।

ध्यान करने के लिए मन पर तनाव या दबाव नहीं डाला जाता। आवश्यकता होती है सहज (बलात् नहीं) एकाग्रता की, तनाव रहित जागरूकता की। एकाग्रता नहीं, सहज जागरूकता चाहिये। अर्थात् हमारी जागरूकता उस स्थिति तक पहुँच जाये, जहाँ हम न तो विचारों से संघर्ष करते हैं, न उन्हें दबाते हैं। साक्षी या द्रष्टा की भाँति मात्र उन्हें देखते रहते हैं।

कभी-कभी ऐसे सरल संस्कार उभरते हैं कि आपको स्वयं आश्चर्य होता है कि आखिर ये सामने क्यों आये? इससे यह समझना चाहिए कि मंत्र के प्रति आपकी जागरूकता केवल ऊपरी सतह तक ही सीमित है। जब यह जागरूकता गहन-गम्भीर होकर सम्पूर्ण चेतना पर छा जायेगी तब अधिक महत्वपूर्ण विचार उभर कर आयेंगे। इसके पूर्व कभी-कभी क्षण भर के लिए विचारशून्यता की स्थिति आयेगी। यह स्थिति चेतना की एकाग्रता के कारण होती है।

जप करते समय आप अपने आपको तनाव रहित स्थिति में रखें। शेष स्वतः घटित होगा। चित्त-विकर्षण (चित्त के इधर-उधर भागने)

की चिन्ता न करें। यदि आप गहन एकाग्रता का ज्यादा प्रयास करेंगे तो सिर दर्द या अन्य शारीरिक समस्याओं के सिवा और कुछ हाथ नहीं लगेगा। सबसे आवश्यक चीज है कि आप जल्दबाजी न करें। सब कुछ अपने नियत समय पर होगा। आप केवल मंत्र के प्रति जागरूक रहें और जप करते जायें।

सहज एकाग्रता और अखण्ड, तनाव-रहित जागरूकता– जप योग की ये दो महत्वपूर्ण बातें हैं। इनको ध्यान में रखना आवश्यक है।

चतुर्दश अध्याय

मंत्र सिद्धि योग

निम्नांकित अभ्यास वस्तुत: कुण्डलिनी योग की क्रियाओं की तैयारी करने के लिए हैं। इन अभ्यासों के द्वारा साधक को अपने अन्दर स्थित सूक्ष्म चक्रों की सही स्थिति का पता चलता है तथा उनके प्रति सजगता बनी रहती है।

इन अभ्यासों का आधार मूलत: जपयोग ही है। योग साधना के उच्च साधक एक सप्ताह से लेकर महीने भर तक नियमित रूप से अनुष्ठान के रूप में इन्हें करें तो वे निश्चित ही लाभान्वित होंगे। उपरोक्त साधनाओं का अभ्यास जब निश्चित कार्यक्रम के अनुसार किया जाता है तो उसे मंत्र सिद्धि योग कहा जाता है। सूक्ष्म मानसिक केन्द्रों को जगाने और सुनियोजित करने में इन अभ्यासों की भूमिका महत्वपूर्ण है।

मणिपुर शुद्धि

प्रथम अवस्था

ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जायें।

अपना ध्यान मणिपुर चक्र में केन्द्रित करें।

मणिपुर क्षेत्र में होने वाली श्वास-प्रश्वास क्रिया के प्रति सजग रहें।

नाभि केन्द्र में श्वास-प्रश्वास के द्वारा होने वाली प्रसारण और संकुचन क्रिया का अनुभव करें।

ज्यादा एकाग्र होने की आवश्यकता नहीं है। केवल उसका ख्याल बनाये रखें।

यह अभ्यास दस मिनट तक करें।

द्वितीय अवस्था

मणिपुर चक्र में सहज श्वास की चेतना बनाये रखें और साथ ही साथ मानसिक रूप से ॐ मंत्र को दुहराते रहें।

यह अभ्यास भी दस मिनट तक करें।

अनाहत शुद्धि

प्रथम अवस्था

ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जायें।

अनाहत चक्र पर मन को एकाग्र करें।

वहाँ पर होने वाली श्वास-प्रश्वास की क्रिया का ख्याल रखें।

ऐसा दस मिनट तक करें।

द्वितीय अवस्था

सहज श्वास के साथ वक्षस्थल पर होने वाले आकुंचन और प्रसारण का अनुभव करें। हर श्वास-प्रश्वास के साथ ॐ का मानसिक जप करें।

विशुद्धि शुद्धि

प्रथम अवस्था

ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जायें।

सम्पूर्ण शरीर को शिथिल करें।

शरीर के अन्दर होने वाली अतीन्द्रिय श्वास-प्रश्वास क्रिया के प्रति सजग रहें।

आपकी अतीन्द्रिय श्वास अन्दर जाते समय ऊर्ध्वगामी हो जायेगी। बाहर आते समय उसकी गति ऊपर से नीचे की ओर होगी।

श्वास की इस गति के प्रति सजग होकर श्वास से निकलने वाली ॐकार की ध्वनि को सुनें।

पाँच मिनट तक अभ्यास करें।

द्वितीय अवस्था

अब ऐसा अनुभव करें कि श्वास लेते समय मंत्र नाभि से कंठ की तरफ जा रहा है तथा छोड़ते समय कंठ से नाभि की तरफ आ रहा है।

तृतीय अवस्था

सोचें कि श्वास लेते समय मंत्र श्वास के साथ विशुद्धि क्षेत्र से उठते हुए मस्तिष्क के नीचे नाक के ऊपरी बिन्दु के ठीक पीछे स्थित किसी अज्ञात स्थान तक ऊपर जाता है।

फिर श्वास छोड़ते समय मंत्र श्वास के साथ पुनः विशुद्धि चक्र तक वापस आता है।

चतुर्थ अवस्था

अब आप देखेंगे कि मंत्र श्वास के साथ नाभि से प्रारम्भ होकर विशुद्धि चक्र से होते हुए मस्तिष्क के नीचे स्थित उपर्युक्त अज्ञात बिन्दु की ओर जाता है। फिर उसी प्रकार श्वास छोड़ते समय पुनः विशुद्धि चक्र से होते हुए नाभि में वापस आ जाता है।

इस क्रिया का दस मिनट तक अभ्यास करें।

पिंगला और इड़ा शुद्धि

ध्यान के किसी आसन में बैठें।

अपनी श्वास को दाहिने नासिका छिद्र (पिंगला) में अनुभव करें।

अपना पूरा ध्यान पिंगला नाड़ी से प्रवाहित होने वाली श्वास पर लगाये रखें।

जब पूरा मन उसमें एकाग्र होने लगे तो उसमें ॐ मंत्र जोड़ दें।

अपनी श्वास को गिनते जायें।

एक सौ बीस से गिनती शुरू करें और उल्टा गिनते हुए अन्त में शून्य तक पहुँच जायें।

इसी क्रिया को अब बायें नासिका छिद्र (इड़ा) से शुरू करें।

अनुलोम-विलोम

ध्यान के किसी भी आसन में बैठकर सहज रूप से गहरी श्वसन क्रिया प्रारम्भ करें।

बायें नासिका छिद्र (इड़ा) से श्वास लें।

दाहिनें नासिका छिद्र (पिंगला) से छोड़ें।

श्वास की यह अनुलोम-विलोम क्रिया (बायें नासिका छिद्र से लेना और दाहिने से छोड़ना) अपनी इच्छा शक्ति से ही सम्पन्न हो पाती है।

अब इसी प्रकार दाहिने नासिका छिद्र से श्वास लें और बायें से छोड़ें।

फिर वैसे ही बायें नासिका छिद्र (इड़ा) से श्वास लें और दाहिने (पिंगला) से छोड़ें।

इसी प्रकार अनुलोम-विलोम क्रम से श्वास-प्रश्वास क्रिया जारी रखें।

श्वास के साथ ॐ मंत्र को जोड़ दें।

यह अभ्यास एक सौ आठ श्वासों तक चालू रखें।

श्वास गिनने के लिए १०८ दानें वाली माला का उपयोग कर सकते हैं।

प्राण शुद्धि

ध्यान के किसी आसन में बैठें।

दोनों नासिका छिद्रों से सहज रूप से धीमी श्वास लें।

श्वास लेते समय ऐसा महसूस करें कि दोनों नासिका छिद्रों से श्वास की दो धारायें प्रवाहित होते हुये भ्रूमध्य (त्रिकुटि) में आकर एक साथ मिल रही हैं।

श्वास की गति अंग्रेजी के उलटे v अक्षर के समान हो जाती है। श्वासों का कोणात्मक रूप से मिलन बिल्कुल मानसिक क्रिया है। इसका विवरण 'योग का अतीन्द्रिय शरीरविज्ञान' नामक अध्याय में दिया जा चुका है।

त्रिकुटि से श्वास छोड़ें। अब दोनों नासिका छिद्रों से ʌ आकृति बनाते हुये श्वास की धारायें निकलेंगी।

कुछ समय तक यह क्रिया करते जायें।
अब ॐ मन्त्र को श्वास के साथ मिलायें।

वाक् शुद्धि

प्रथम अवस्था

शुरू से अन्त तक ध्यान के किसी आसन में स्थिर होकर बैठे रहें।
सहज ढंग से गहरी श्वास लें।
लम्बी श्वास छोड़ते हुये अधिकाधिक मंद स्वर में ॐ मन्त्र का उच्चारण आवाज निकालते हुये देर तक करें।
ॐ मन्त्र के शक्ति प्रवाह का आरोहण मणिपुर चक्र से होगा।
इस अभ्यास को पन्द्रह मिनट तक सजगता के साथ करें।

द्वितीय अवस्था

गहरी श्वास लेकर एक सेकेण्ड तक उसे रोक कर रखें।
तब श्वास छोड़ते हुये जितनी बार सम्भव हो 'ॐ' उच्चारण करें।
'ॐ', 'ॐ', 'ॐ', 'ॐ' का उच्चारण एक लय के साथ करें।
श्वास अन्दर लेते समय भी ॐ का मानसिक उच्चारण करते रहें, ताकि मंत्र की लय भंग न हो।
इसका अभ्यास पन्द्रह मिनट करें।
सजगता के साथ अभ्यास करें।

त्रिकुटि सन्धानम्

दोनों भौंहों के मध्य का स्थान त्रिकुटि कहलाता है जो भ्रूमध्य के नाम से भी जाना जाता है।
इस स्थान पर स्थित नाड़ी के प्रत्येक स्पन्दन तथा ॐ मंत्र के प्रति निरन्तर सजग रहें।
यह अभ्यास पन्द्रह मिनट तक करें।
जागरूकता के साथ अभ्यास करें।

चक्र-शुद्धि

दो माला तैयार करें– एक ग्यारह दाने की और दूसरी इक्कीस दाने की। इक्कीस दाने वाली दो सुमरिनी मालाओं को एक साथ जोड़ कर व्यवहार किया जा सकता है।

ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जायें।

इक्कीस दाने वाली माला को दाहिने हाथ में और ग्यारह दाने वाली माला बायें हाथ में रखें।

मूलाधार चक्र पर अपना ध्यान केन्द्रित करें।

ऐसा अनुभव करें कि उस स्थान पर ॐ मंत्र का स्पन्दन धीरे-धीरे हो रहा है।

यह स्पन्दन ऐसा लगेगा मानो उस चक्र पर आन्तरिक रूप से चोट की जा रही हो।

अब मूलाधार चक्र पर ॐ मंत्र के स्पन्दन का इक्कीस बार अनुभव करें।

प्रत्येक स्पन्दन के साथ एक-एक दाने को खिसकातें जायें।

इक्कीस स्पन्दन के पूरा होने पर चेतना स्वाधिष्ठान चक्र में ले जायें।

वहाँ पर भी मंत्र का स्पन्दन २१ बार अनुभव करें।

इसी प्रकार से मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार– सभी चक्रों में मन्त्र का स्पन्दन अनुभव करते हुए ॐ की ओर आगे बढ़ते जायें।

सहस्रार में जब इक्कीस स्पन्दन पूरा हो जाये, तो बायें हाथ के एक दाने को आगे खिसकायें और फिर मूलाधार चक्र में वापस आ जायें।

इसी तरह इक्कीस-इक्कीस करके प्रत्येक चक्र से होते हुए बायें हाथ की माला के अनुसार ग्यारह आवृत्ति आपको करनी है।

पूरी क्रिया में कम से कम पैंतालिस मिनट लगना चाहिये।

पंचदश अध्याय

अजपा जप

किसी मंत्र को बारम्बार दुहराने को जप कहते हैं। जब मंत्र की सहज ही आवृत्ति होने लगती है तब जप अजपा बन जाता है। कहा जाता है कि अजपा का प्रस्फुटन हृदय से होता है जब कि जप केवल मुख से निःसृत होता है।

अजपा जप अपने आप में एक पूर्ण साधना है। यह साधक को शारीरिक एवं परिवेशगत चेतना के निम्न स्तर से ध्यान की उच्चतम अवस्था तक ले जा सकता है। यदि पूरी सजगता से इसका क्रमिक अभ्यास किया जाए तो यह चेतना की गहराई में छिपे हुए विकारों को मानसिक सतह पर ला कर रख देगा। जब ऐसा होने लगेगा तो जल्दी ही साधक अपने पुराने संस्कारों एवं छिपी वासनाओं को साक्षी भाव से देखने में समर्थ हो जायेगा। इस तरह अजपा जप उन मानसिक तनावों से मन को मुक्त कर देता है, जो अधिकांश शारीरिक एवं मानसिक रोगों के मूल कारण होते हैं।

अजपा जप का सीधा प्रभाव स्नायु संस्थान के उस जालवत केन्द्र पर पड़ता है जो मस्तिष्क के मध्य में स्थित है। यह एक अत्यंत उच्चकोटि का अभ्यास है। इसका अभ्यास करके साधक कुण्डलिनी योग की उच्चतर स्थितियों के लिए अपने को तैयार करता है।

अजपा जप ध्यान के किसी भी आसन में किया जा सकता है। कुर्सी पर बैठ कर या शवासन में भी इसका अभ्यास चल सकता है लेकिन ध्यान का कोई आसन ही इसके लिए अधिक उपयुक्त होगा। अभ्यास शुरू करने के बाद शरीर हिलना-डुलना नहीं चाहिए।

यद्यपि अजपा जप का अभ्यास करते समय किसी भी मंत्र को उपयोग में लाया जा सकता है, परंतु परंपरा से 'सो-हं' मंत्र का ही प्रयोग होता आ

रहा है क्योंकि श्वास की स्वाभाविक ध्वनि इस मंत्र की ध्वनि से मिलती-जुलती है। बहुत से साधक अजपा जप में गुरु मंत्र का ही प्रयोग करते हैं। इससे इन्हें उपलब्धियाँ भी हुई हैं। हम ऐसे साधकों को भी जानते हैं जो अजपा ज़प में गायत्री मंत्र का अभ्यास करते हैं। वे मंत्र के पूर्वार्ध को श्वास के साथ और उत्तरार्ध को प्रश्वास के साथ पूरा करते हैं।

अजपा जप का प्रारम्भिक अभ्यास

अजपा जप की प्रारम्भिक विधियों में अभ्यासार्थी को प्राण-प्रवाह का अनुभव नाभि और कण्ठ के बीच स्थित अग्रभागीय अतीन्द्रिय पथ में होना चाहिए। उसे श्वास लेने की क्रिया में नाभि से कण्ठ तक प्राण का आरोहण और प्रश्वास की क्रिया में कण्ठ से नाभि तक प्राण का अवरोहण अनुभव करना चाहिये।

शुरू में अभ्यासार्थी को कल्पना का सहारा लेना पड़ेगा। एक तरीका यह है कि नाभि और कण्ठ के बीच के मार्ग को एक शीशे की नली मानें। ऐसा सोचें कि जिस प्रकार नली में ऊपर से पानी डालने पर नीचे से पानी का स्तर ऊपर उठने लगता है उसी प्रकार श्वास लेते समय श्वास नाभि से ऊपर की ओर आने लगती है। यह कल्पना करें कि श्वास लेते समय श्वास नाभि से उठ कर कण्ठ की ओर जा रही है और प्रश्वास में कण्ठ से नाभि में उतर रही है।

प्रथम अवस्था

किसी सुविधाजनक आसन में बैठ जायें।
आँखें बन्द कर लें।
हाथों को ज्ञान मुद्रा या चिन्मुद्रा में रखें।
मेरुदण्ड सीधा रखें।
अपने को शारीरिक और मानसिक रूप से कुछ क्षणों के लिए तनाव-रहित करें।
कम से कम अभ्यास की अवधि भर के लिए अपनी चिंताओं को भूल जायें।

सुख, शान्ति और आनन्द का अनुभव करें।
स्वाभाविक श्वास-प्रश्वास के प्रति जागरूक रहें।
नाभि और कण्ठ के बीच अग्रभागीय मार्ग में श्वास का संचरण अनुभव करें।
श्वास लेने की क्रिया में यह नाभि से कण्ठ तक जाती है और प्रश्वास में कंठ से नाभि तक वापस आती है।
श्वास क्रिया के प्रति पूर्णत: सजग रहें।
एक भी श्वास आपकी जानकारी के बिना अन्दर या बाहर न जाने पाये।
आपकी श्वसन क्रिया गहरी और तनावरहित रहे।
इस अभ्यास को कुछ मिनट तक जारी रखें।
अब 'सो-हं' मंत्र को श्वास के साथ मिला दें।
श्वास लेते समय तथा अतीन्द्रिय पथ में प्राण के आरोहण के समय 'सो' की ध्वनि निकलती है।
प्रश्वास के साथ अतीन्द्रिय पथ में प्राण के अवरोहण के समय 'हं' की ध्वनि निकलती है।
प्राण और मंत्र दोनों की गतियों के प्रति पूर्णत: सजग रहें।
प्रतिदिन इसी प्रकार अभ्यास करते रहें।
लगभग एक सप्ताह का अभ्यास कर लेने के बाद द्वितीय अवस्था की ओर बढ़ें।

द्वितीय अवस्था

प्रथम अवस्था का अभ्यास दुहरायें परन्तु मंत्र के क्रम को बदल दें।
श्वसन क्रिया का प्रारम्भ प्रश्वास पर 'हं' ध्वनि के साथ होगा। इसके बाद श्वास लेते समय 'सो' का मानसिक जप किया जायेगा।
इस तरह मंत्र हो जायेगा– 'हं-सो'।
प्रत्येक 'हं-सो' के पश्चात किंचित ठहराव होना चाहिए।
याद रक्खें, पूरी प्रक्रिया में सजग रहना है।
इसका अभ्यास प्रतिदिन एक सप्ताह तक करें। फिर तृतीय अवस्था की ओर बढ़ें।

तृतीय अवस्था

सुविधाजनक आसन में बैठकर आँखें बन्द कर लें।
शारीरिक तथा मानसिक रूप से अपने को तनावरहित रखें।
नाभि और कण्ठ के बीच श्वास-प्रश्वास की क्रिया चलने दें।
इस क्रिया के प्रति कुछ मिनटों तक पूर्ण रूप से सजग रहें।
अब श्वास के साथ 'सो' को और प्रश्वास के साथ 'हं' को संयुक्त कर दें।
इस स्थिति में आपकी चेतना मंत्र के साथ एकाकार होकर इस सीमा तक अविच्छिन्न बन जायेगी कि 'सो' 'हं' में, और 'हं' 'सो' में विलीन होता दिखाई देगा।
इस तरह सो-हं-सो-हं का अनन्त वृत्त बन जायेगा।
'हं' की तरंग को बढ़ायें और उसे 'सो' के साथ मिल जाने दें।
'सो' के कम्पन को बढ़ायें और उसे 'हं' के साथ मिल जाने दें।
इस प्रकार के अभ्यास की अवधि में बिना बाधा के 'सो-हं' और 'हं-सो' की अनवरत आवृत्ति होती रहे।

चतुर्थ अवस्था

इस अवस्था में पहली, दूसरी और तीसरी अवस्थाओं की सारी विधियाँ दुहरा लें।
सुविधाजनक आसन में बैठकर अपने स्वाभाविक श्वास के प्रति पूर्णरूप से सजग हो जायें।
अपने को पूरी तरह तनावरहित कर लें।
प्राण का 'सो' के साथ नाभि से कंठ तक प्रवाहित होना अनुभव करें।
इसी प्रकार 'हं' के साथ प्राण कंठ से नाभि तक लौटें।
सबसे पहले, श्वास द्वारा 'सो-हं' का वृत्त बनाने के प्रति सजग रहें।
इसका अभ्यास कुछ मिनटों तक करें और तब अपनी सजगता को 'सो-हं' की निरन्तरता की ओर मोड़ दें।
कुछ देर बाद आप देखेंगे कि 'सो' और 'हं' दोनों जुड़ गये हैं।
सो-हं-सो-हं-सो-हं के मानसिक जप के साथ लगातार श्वास लेते-छोड़ते रहें।

थोड़ी देर के बाद आप अनुभव करेंगे कि 'सो-हं' स्वाभाविक रूप से 'हं-सो' में बदल गया है।
सहज ही यदि इस क्रम में कोई परिवर्तन आये, तो साक्षी भाव से इसको अनुभव करें।
कुछ दिनों तक यह अभ्यास जारी रखें।
तब पाँचवीं अवस्था की ओर बढ़ें।

पाँचवीं, छठवीं, सातवीं तथा आठवीं अवस्था

खेचरी मुद्रा और उज्जायी प्राणायाम के साथ प्रथम से चतुर्थ अवस्था तक का अभ्यास करें।
जब इसका पूरी तरह से अभ्यास हो जाये, तब अजपा जप के मध्यम अभ्यास की ओर बढ़ें।

अजपा जप का मध्यम अभ्यास

अजपा जप के सम्पूर्ण अभ्यास में दृढ़ कल्पना शक्ति की आवश्यकता है। जो भी क्रिया चल रही हो, उसे ठीक-ठीक याद रखें। यह बहुत महत्वपूर्ण बात है। यदि आप ध्यान करें और भूल जायें कि ध्यान कर रहे हैं तो सफल ध्यान कर ही न पायेंगे। इसलिए अपनी समस्त क्रियाओं के प्रति सजग रहें।
आप मानस दर्शन कर रहे हैं, श्वास ले रहे हैं, आपका मन भटक रहा है— इन सबके प्रति सजग रहें।

इस अभ्यास में प्राण प्रवाह को नाभि से कंठ तक के क्षेत्र में अनुभव करने के बजाय सुषुम्ना नाड़ी में करें। प्रत्येक चक्र से होते हुए प्राण प्रवाहित हो रहा है— ऐसा अनुभव करें। ये चक्र हैं—मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञा।

प्रथम अवस्था

किसी सुविधाजनक आसन में बैठकर आँखें बन्द कर लें। अपने को शारीरिक एवं मानसिक रूप से कुछ मिनट के लिए तनावरहित कर दें।

खेचरी मुद्रा लगाकर उज्जायी प्राणायाम करें। लयबद्ध धीमी श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग रहें।
प्रश्वास में प्राण आज्ञा से मूलाधार की ओर दूसरे चक्रों को पार करते हुये नीचे उतर रहा है, ऐसा अनुभव करें।
प्रारम्भ में आपको चक्रों की स्थिति की कल्पना करनी चाहिए।
अन्दर श्वास लेते समय प्राण का प्रवाह मूलाधार से आज्ञा की ओर है– ऐसा अनुभव कीजिये।
जब श्वास आज्ञा या मूलाधार में पहुँचे, तो उसे कुछ समय के लिए रोक लें। उस चक्र पर थोड़ी देर तक मन को एकाग्र करें।
तब अपने मंत्र को अपने प्राणों की गति के साथ संयुक्त कर दें।
प्राण के आरोहण के साथ 'सो' का कम्पन अनुभव करें तथा अवरोहण के साथ 'हं' का।
मेरुदण्ड में चक्रों से होकर बढ़ते हुए इस कम्पन की गति (ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर) का अनुभव करें।
प्रत्येक आरोहण तथा अवरोहण के अन्त में कुछ देर तक मूलाधार और आज्ञा चक्रों के प्रति अपनी सजगता बनाये रखें।
अपने द्वारा की गई प्रत्येक क्रिया के प्रति सजगता रखें।
जब अभ्यास में पूर्णता आ जाये, तब दूसरी अवस्था का अभ्यास शुरू करें।

द्वितीय अवस्था–

यह अभ्यास प्रथम अवस्था की तरह ही है। अन्तर केवल इतना ही है कि इसमें श्वास-प्रश्वास के बीच एक निरन्तरता है, पर प्रश्वास-श्वास के बीच नहीं।
मंत्र का अभ्यास यों चलेगा– 'सो-हं', 'सो-हं'।
कुछ दिनों के पश्चात् तीसरी अवस्था पर आयें।

तृतीय अवस्था–

इस अवस्था में श्वास-प्रश्वास के बीच हल्का व्यतिरेक है। परन्तु प्रश्वास और अगली श्वास एक दूसरे से जुड़े रहते हैं।

इस तरह मंत्र हो जाता है 'हं-सो', 'हं-सो', 'हं-सो' ।
जब इस अवस्था का अभ्यास हो जाये, तो चतुर्थ अवस्था पर आयें ।

चतुर्थ अवस्था–
अब श्वास-प्रश्वास-श्वास इस क्रम से मंत्र यों बनेगा : 'सो-हं-सो-हं-सो-हं ।'
कुछ दिनों के बाद पंचम अवस्था का अभ्यास करें ।

पंचम अवस्था–
इस अवस्था में 'सो-हं' से 'हं-सो' और फिर 'सो-हं' पर आने की क्रिया सहज हो जायेगी ।
इस अवस्था तक सक्षम हो जाने पर अजपा जप के उच्च अभ्यास की ओर बढ़ें ।

अजपा जप का उच्च अभ्यास

यह अभ्यास मध्यम अजपा जप के अभ्यास से मिलता-जुलता है । इसकी भी पाँच अवस्थायें हैं । मुख्य अन्तर यह है कि इसमें श्वास लम्बी और गहरी होती है तथा प्राण-प्रवाह का अतीन्द्रिय मार्ग मूलाधार से सहस्रार तक जाता है ।

मध्यम अजपा जप की पाँच अवस्थाओं की तरह इसका भी अभ्यास करना चाहिए ।

प्रारम्भिक अजपा जप का कक्षा-प्रतिलेखन

प्रथम अवस्था–
पद्मासन, सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या सुखासन में बैठ जायें ।
आज अजपा जप के अभ्यास का शुभारम्भ है ।
जप का अर्थ है– आवृत्ति ।
अजपा जप का अर्थ है– सहज आवृत्ति ।

मंत्र 'ॐ' हो या 'सो-हं', इसके साथ मन को जोड़े रखने की अनेक विधियाँ हैं। हम लोग इस अभ्यास में 'सो-हं' मंत्र का उपयोग करेंगे।

'सः' का अर्थ है– 'वह' परमात्मा; 'अहं' का अर्थ है– 'मैं' जो आत्मा है।

यह मंत्र इस बात की याद दिलाने के लिए है कि 'मैं' 'वह' हूँ।

यह मंत्र श्वास की आवाज में भी सुनाई पड़ता है– 'सो' श्वास लेते समय और 'हं' श्वास छोड़ते समय।

यह अभ्यास क्रिया योग तथा कुण्डलिनी योग के अन्य अंगों की आधार-शिला है।

अपने श्वास के प्रति सजग हो जायें और इस बात के प्रति भी सजग रहें कि कुछ काल के लिए आप अपने श्वास के प्रति सजग नहीं थे।

पूरी रात भर आप इसके प्रति सजग नहीं थे।

आपकी सजगता का केन्द्र कण्ठ या विशुद्धि क्षेत्र है।

श्वास स्वाभाविक होनी चाहिए परन्तु नासीय (nasal) नहीं।

कण्ठच्छद (epiglottis) से श्वास लेना है। श्वास सहज रूप से गले से खर्राटे के साथ निकलेगी।

आवाज न्यूनतम होनी चाहिये। श्वास सूक्ष्म है।

आँखें बन्द करके सभी शारीरिक गतियाँ रोक दें।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जाइये ऐसा करने से शरीर स्थिर हो जायेगा।

विशुद्धि (कंठ) पर मन को एकाग्र करें।

आप अपने उस श्वास का अनुभव कर सकते हैं जो इतना स्थूल नहीं है कि सुनाई दे सके।

अपनी अनवरत जागरूकता का केन्द्र कंठ को बना लें।

आपकी जागरूकता का विषय है– कंठ में श्वास प्रवाह की अनुभूति।

एक ही विचार रखें 'मैं जानता हूँ कि मैं श्वास ले रहा हूँ', 'मैं जानता हूँ कि मैं श्वास छोड़ रहा हूँ।'

श्वास का प्रत्येक चक्र आपकी जानकारी में रहे।

चेतना की अधिक गहराई में जाने की चेष्टा न करें।

यदि आपका मन भटकता है तो उसे भटकने दें, पर इस भटकाव के प्रति भी जागरूक रहें।

याद रखें–'मै यह जानता हूं कि मैं श्वास ले रहा हूँ', 'मैं यह जानता हूँ कि मैं श्वास छोड़ रहा हूँ'।
आपकी एकाग्रता का केन्द्र विशुद्धि है।

द्वितीय अवस्था

अभी तक आप सोच रहे थे–'मैं श्वास ले रहा हूँ', 'मैं श्वास छोड़ रहा हूँ'। इसके स्थान पर अपने को सुझाव दें– 'मैं श्वास के आरोहण-अवरोहण का अनुभव कर रहा हूँ। मैं इसके प्रति सजग हूँ'।
अपनी चेतना को बहिर्मुखी बनाये रखें, अन्तर्मुखी नहीं।
सामने की ओर या बगल की तरफ न झुकें।
मन खाली न रहे। बाह्य स्तर पर इसे गतिशील रखें।
श्वास के आरोहण-अवरोहण के प्रति और 'मैं जानता हूँ', इसके प्रति भी सजगता बनाये रखें।
आप जानते हैं कि आप श्वास के प्रति सजग हैं।
इस अभ्यास की दूसरी अवस्था है– श्वास के आरोहण-अवरोहण के प्रति सजगता।
शरीर को हिलायें नहीं।
सजगता के प्रति परम सजगता।
मानसिक रूप से शरीर में कड़ापन अनुभव करें।
विकसित मन से ऐसा करें, मानो आप पूर्णतः सजग हैं।
आप जानते हैं कि आप सजग हैं।
ध्यान और एकाग्रता की गहराई में सजगता ही है।
'हाँ, निश्चित रूप से मैं नहीं सो रहा हूँ, मैं जागृत अवस्था में हूँ'।
विशुद्धि में श्वास का आरोहण-अवरोहण हो रहा है।
मणिपुर से विशुद्धि के बीच ऐसा हो रहा है।
इन दोनों बिन्दुओं के बीच के मार्ग में एक क्षण के लिये भी चेतना खंडित नहीं होनी चाहिये।
श्वास के आरोहण-अवरोहण के प्रति सजगता।
सूत्र है– श्वास के प्रति सजगता।
श्वास के प्रति पूर्ण सजगता।

नाभि से श्वास के आरोहण और कंठ से उसके अवरोहण के प्रति सजगता ।
मार्ग अतीन्द्रिय है ।
जिस प्रकार हवा के झोंके से सुरक्षित दीप-शिखा स्थिर रहती है उसी प्रकार अपनी सजगता को स्थिर बनाये रखें ।
उतरती-चढ़ती श्वास के प्रति सजगता ।
अभ्यास के साथ ही इसे सुनते भी जायें । यह बहुत महत्वपूर्ण है ।

तीसरी अवस्था

यह तीसरी अवस्था है ।
नाभि से कंठ के बीच श्वास के प्रति आपकी सजगता बनी हुई है ।
यह अतीन्द्रिय मार्ग हैं ।
और आप जानते हैं कि आप श्वास के आरोहण-अवरोहण के प्रति सजग हैं ।
आंतरिक जागृति विकसित होनी चाहिये । आपको आंतरिक रूप से सजग रहना है ।
मै जानता हूँ...... मणिपुर में अवरोहण हो रहा है ।
मैं जानता हूँ...... विशुद्धि में आरोहण हो रहा है ।
जागरूकता की जागरूकता ।
यदि आप पाँच मिनट तक यह अभ्यास ठीक-ठीक करें, तो इच्छाशक्ति द्वारा शरीर पर नियंत्रण हो जायेगा । जागरूकता इतनी अंतराभिमुख हो जायेगी मानों आप सिक्के गिन रहे हैं या भरी सड़क पर मोटर चला रहे हैं ।
आप अपनी चेतना की गतिविधियों के प्रति जागरूक रहें ।
यदि आप मेरी बात समझ रहे हैं तो अपने व्यक्तित्व के प्रति और गहरे रूप में सजग हो जायेंगे ।
आप जागरूकता के साक्षी हैं ।
बिल्कुल स्थिर रहें ।
मूर्तिवत, शिलावत अडिग बन जायें ।
यह जानें कि मै अपने प्रति सजग हूँ ।
आप नहीं जानते कि आप क्या कर रहे हैं, पर मैं जानता हूँ ।

नाभि और कंठ के बीच के अतीन्द्रिय पथ का ख्याल एकदम स्पष्ट हो जाना चाहिये।

इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि आप इस पथ के प्रति सजग हैं।

इस आरोहण-अवरोहण की प्रक्रिया में 'सो-हं' की ध्वनि के प्रति अपनी सजगता विकसित करें।

ऊर्ध्वगामी सूक्ष्म श्वास है– 'सो'।

और अधोगामी श्वास चेतना है– 'हं'।

इसी प्रकार दुहराते जायें......... 'सो-हं'।

यदि आपका मन भटकता है तो इसे भी जानें।

सत्य को छिपायें नहीं।

आप अपने मन के व्यवहार के प्रति पूर्ण तथा जागरूक होने का अभ्यास कर रहे हैं।

आप जानते हैं कि आप क्या कर रहे हैं।

शरीर को हिलायें नहीं। आप इस समय मूर्तिवत हैं।

मन को शान्ति प्रदान करने वाला 'सो-हं' मंत्र अत्यन्त शक्तिशाली है, पर इससे नींद भी आती है।

चतुर्थ अवस्था

अब इस सजगता को 'हं-सो' में बदल दें।

कंठ से नाभि तक 'हं' के प्रति सजगता।

नाभि से कंठ तक 'सो' के प्रति सजगता।

इस प्रकार 'हं-सो' के प्रति अनवरत सजगता बनी रहे।

'मै जानता हूँ', 'मैं जानता हूँ', की पूर्ण सजगता के साथ प्रत्येक बार 'हं-सो' का अभ्यास करें।

'हं-सो' के सम्पूर्ण बोध का विस्तार करते जायें।

'हं-सो' के रूप में गति के प्रति सजगता ही महत्वपूण है।

अपनी चेतना और अपने मन पर लगातार निगरानी रखें।

अन्यमनस्क न बनें।

मै जानता हूँ कि आप सब 'हं-सो' की सजगता से भागने-भागने को हैं।

गहरे कुएँ में डुबाई जाने वाली बाल्टी को जैसे रस्सी से कसकर बाँध दिया जाता है, उसी तरह अगर आपका मन 'हं-सो' के साथ मजबूती से बँधा नहीं, तो उसके छिटक जाने का खतरा रहेगा ।

केन्द्र बिन्दु 'हं-सो' के प्रति जागरूकता खूब मजबूत होनी चाहिए ।

अपने शरीर का क्या होता है, यह महत्वपूर्ण बात नहीं है । मन की पकड़ ठीक रहनी चाहिए ।

जितना ही आत्म-नियन्त्रण बढ़ता है तथा केन्द्र बिन्दु की पकड़ मजबूत होती जाती है, बाद के अनुभव उतने ही अच्छे होते हैं ।

संपूर्ण प्रक्रिया में यह प्रश्न अपने-आप से करते रहें– क्या मैं 'हं-सो' के प्रति जागरूक हूँ ?

क्या विकसित चेतना अन्तर में विद्यमान है ?

क्या वह विस्तृत, आनन्दमय और शान्त है ?

क्या मैं आन्तरिक रूप से सजग हूँ ?

पंचम अवस्था

चाहे जितनी बार 'सो-हं' की आवृत्ति करें । फिर जब बदलना चाहें इसे 'हं-सो' में बदल कर इच्छानुसार आवृत्ति करें ।

इसमें कोई नियम नहीं है, लेकिन आपको किसी न किसी वस्तु के प्रति सजग होना पड़ेगा ।

सीधे और स्थिर रहें ।

आप बदल-बदल कर अभ्यास कर सकते हैं । परन्तु ऐसा करना अनिवार्य नहीं है ।

चिदाकाश के दृश्य को ध्यान से देखें ।

वस्तु चाहे कोई भी हो, एक तिनका या पेड़ या पशु या मात्र शून्य ही क्यों न हो, आप उसे जानें, सतर्कतापूर्वक उसका ध्यान रखें या देखें ।

साथ-साथ 'सो-हं' या 'हं-सो' के साथ अपने को लगातार जोड़े रखें ।

चाहे जिस तरह आपको रुचे, मन को कार्यरत व तनावहीन रखें ।

यह आवश्यक नहीं है कि आप किसी विशेष विधि का ही अनुसरण करें ।

यह आपकी सजगता का एक पक्ष है ।

और दूसरा पक्ष है– क्या मैं चिदाकाश में देख रहा हूँ ?

चिड़िया, घास या नाव....आप अपनी चेतना को 'सो-हं' का तनावरहित अनुसरण करने में भी लगाये रखें।

आप दृश्य-दर्शन की भी चेष्टा कर रहे हैं।

विचार नहीं करें बल्कि मानसिक चित्रों का दर्शन करने की चेष्टा करें।

इच्छा-शक्ति द्वारा शरीर को दृढ़ रखें।

'सो' और 'हं' के साथ विचरण करें, पर बिम्बों पर दृष्टि रखें।

इस अभ्यास में निपुण हो जाने पर अन्तर्मौन और ध्यान का अभ्यास करना आपके लिए आसान हो जायेगा।

आप मानसिक रूपों को देखने की क्षमता विकसित करने की चेष्टा कर रहे हैं। इसलिए जब आप ज्वाला या गुलाब के विषय में सोचते हैं तब उसे देख लेते हैं।

मंत्र के प्रति सजगता बनाये रखें।

आन्तरिक बिम्बों पर अपनी निगाह रखें– मैंने क्या देखा? मैं क्या देख रहा हूँ?

षष्ठ अवस्था

अब श्वास-प्रश्वास को एक से बीस या तीस तक गिनें।

श्वास की आरोहण-अवरोहण गति का ध्यान रखें।

अनवरत सजगता बनाये रखना आवश्यक है।

श्वास-प्रश्वास को पूरी सजगता से गिनें।

सजगतापूर्वक सही-सही गिनती करें।

सावधानी से गिनें।

शरीर के ऊपर नियंत्रण रखें।

शरीर, अतीन्द्रिय पथ और गिनती– सबको याद रखें।

यदि आप गिन चुके हों तो याद रखें— मैं गिन रहा था।

मन को ढीला न छोड़ें।

अब श्वास-प्रश्वास के साथ 'सो-हं' को जोड़ दें।

'सो' श्वास है, 'हं' प्रश्वास।

श्वास क्रिया और 'सो-हं' की सजगता नाभि और कंठ के बीच हो।

केन्द्र बिन्दु को याद रखें।

ऊपर जाती हुई चेतना 'सो' और नीचे आती हुई 'हं' है।
अब मेरे साथ उच्चारण करें– ॐ ॐ ॐ।
हरि ॐ तत्सत्।
अब आँखें खोलकर शरीर को ढीला छोड़ दें।

उच्च अजपा जप का कक्षा-प्रतिलेखन

ध्यान के किसी भी आसन में बैठें। हाथों को ज्ञानमुद्रा या चिन्मुद्रा में रखें। आँखें बन्द करें। शरीर स्थिर रखें।
शरीर सीधा रखें। अजपा-जप के निर्देशों को सुनें।
खेचरी माँ है। जैसे बच्चा अपनी माँ की गोद में रहता है, उसी तरह योगी भी जब तक चाहे खेचरी में रह सकता है।
खेचरी के साथ आपका सम्बन्ध अवश्य स्थापित हो जाना चाहिए। यह आपके अस्तित्व का एक अनिवार्य अंग है।
अब आपको जिह्वा, जिह्वाग्र और तालू पर अपना ध्यान केन्द्रित करना है।
खेचरी के अभ्यास के प्रारम्भ में शरीर की सीमाओं का ख्याल रखें।
आप चाहते हुए भी सारे दिन खेचरी का अभ्यास नहीं कर सकते लेकिन धीरे-धीरे करके आप दीर्घ काल तक इसका अभ्यास कर सकते हैं।
उज्जायी प्राणायाम के साथ इस तरह इसका अभ्यास करें कि आप नीचे मूलाधार और ऊपर सहस्रार के बीच श्वास-प्रश्वास का अनुभव मेरुदंड में कर सकें।
उज्जायी में उसी तरह की आवाज निकलनी चाहिए जैसी गहरी नींद में निकलती है।
आवाज में सम-स्वरता हो; उतार-चढ़ाव नहीं।
उबलते पानी के बर्तन (ब्वाइलर) से निकलने वाली भाप के स्वर की तरह आवाज होना चाहिए।
मूलाधार से श्वास; सहस्रार से प्रश्वास– उसकी कल्पना मेरुदंड में एक सूक्ष्म प्रकाश-पथ के रूप में करें।
मुँह और ओंठ बन्द करके उज्जायी का अभ्यास प्रारम्भ करें।

मेरुदण्ड के भीतर उज्जायी श्वसन क्रिया के प्रति सजग हो जायें।
सहस्रार से मूलाधार तक और मूलाधार से सहस्रार तक।
इस पथ में आपकी श्वास गहरी नींद में चलने वाली श्वास के सदृश होगी।
कुछ समय के बाद यह सूक्ष्म और विरलित हो जायेगी लेकिन अब आपको सजग होकर आवाज निकालना होगा।
खेचरी मुद्रा में लगातार रहना जरूरी नहीं है। बीच-बीच में खेचरी माँ की गोद छोड़ दें परन्तु वापस वहीं पहुँच जायें।
अब श्वास का वेग न बढ़ायें, नहीं तो ऐसा करने से कण्ठ अधिक सूखेगा।
खेचरी लगाये रखने से कुछ समय के बाद रस-स्राव होगा जो कण्ठ को सिंचित करता रहेगा; उसकी शुष्कता दूर हो जायेगी।
मेरुदण्ड में सुषुम्ना नाड़ी है।
जब तक सुषुम्ना सुषुप्तावस्था में है तब तक वह नाड़ी से अधिक और कुछ नहीं है, लेकिन जागृत हो जाने पर यह तरंगों से भरा प्रकाश-पथ बन जाती है।
उज्जायी लगाये हुए श्वास के प्रति सजगता को कल्पना की सहायता से सुषुम्ना नाड़ी से होकर प्रवाहित होने दें।
सुषुम्ना नाड़ी से होकर सहस्रार की ओर चढ़ती हुई और मूलाधार की ओर उतरती हुई श्वास को स्पष्ट रूप से अनुभव करने की कोशिश करें।
आपको इसी दिशा में दक्ष होना है।
ऐसा लगता है जैसे आप सब सो रहे हों– उज्जायी का स्वर मधुर लग रहा है।
यदि आप खेचरी लगाये रखें तो खाँसी नहीं होगी।
उज्जायी के इसी अभ्यास में 'सो-हं' मंत्र का विचार जोड़ देना है।
श्वास के आरोहण में 'सो' तथा प्रश्वास के अवरोहण में 'हं'।
सिर्फ पाँच मिनट।
इसी प्रकार आप श्वास के 'सो-हं' संगीत के प्रति जागरूक होते हैं।
'सो-हं' के प्रति निरन्तर जागरूकता ही सुषुम्ना में उज्जायी श्वसन-क्रिया का रूप है।

'सो-हं' के प्रति जागरूकता चेतना का अत्यन्त सशक्त रूप है ।
दिन-रात में आप जब कभी अवकाश में हों, आप सुषुम्ना में 'सो-हं' के प्रति जागरूक हो सकते हैं ।
इससे आपकी चेतना पर एक सशक्त प्रभाव पड़ेगा ।
'सो-हं' की जागरूकता निरन्तर बनी रहनी चाहिए, खेचरी इसके साथ रहे या नहीं रहे ।
योगी को अहर्निश 'सो-हं' के प्रति अपनी जागरूकता बनाये रखने का प्रयत्न करना चाहिए ताकि उसकी चेतना की गहराइयों का शुद्धिकरण हो सके ।
उसे किसी भी समय ध्यान के आसन में स्थिर बैठ कर, आँखें बन्द करके 'सो-हं' कें प्रति जागरूक हो जाना चाहिये ।
इसके बाद 'सो-हं' के बजाय वह 'हं-सो' के प्रति सजग हो सकता है ।
यह क्रिया जप में मंत्र के प्रति सजगता की तरह ही है । पर यह माला के बिना 'सो-हं' के प्रति सजगता है ।
यह सजगता माला के प्रति नहीं, श्वास के प्रति है और हाथ में नहीं, बल्कि मेरुदण्ड में है ।
यदि आप इस अतीन्द्रिय सजगता की स्थिति प्राप्त कर लें तो आन्तरिक स्तर पर अनेक कार्य सम्पन्न हो जायेंगे ।
'सो-हं'...'हं-सो', मूलाधार से सहस्रार– आरोहण और अवरोहण ।
जब आप 'हं' कहते हैं तो पूरा शरीर शिथिल हो जाता है ।
जब आप 'सो' कहते हैं तो चेतना शीर्ष पर पहुँच जाती है ।
दिन में कभी भी स्वयं अभ्यास करके देखें । आप पायेंगे कि दिन के अलग-अलग समय के अनुभव भिन्न-भिन्न होते हैं– सुबह, अपराह्न और शाम के अनुभव एक दूसरे से भिन्न ।
इसका अभ्यास कम से कम पाँच मिनट और अधिक से अधिक आधे घण्टे तक करना चाहिए ।
इसका अभ्यास भिन्न-भिन्न स्थितियों में करें– भोजन के पहले और भोजनोपरान्त, स्नान के बाद, स्नान के पूर्व बेहद गर्मी में, बेहद सर्दी में, इच्छा और अनिच्छा की स्थिति में, आप थके हुए हों या तरो-ताजा हों ।
संस्कारों का क्षेत्र विकसित करने के लिए इसका अभ्यास करना चाहिए ।

योगी सतर्क हो तो उसे दिन भर में कई बार पाँच मिनट का समय मिल सकता है, यानी कुल मिला कर कम से कम दो घण्टे तो मिल ही जायेंगे। यदि आप 'सो-हं' और 'हं-सो' का अभ्यास करते हैं तो सचमुच आप विभिन्न संस्कारों और कर्मों को प्रकट होने का अवसर प्रदान करते हैं।
कृपया आँखें खोल दें और शरीर को शिथिल करें।
हरि ॐ तत् सत्।
अब अजपा जप का अभ्यास पूरा हुआ।

षोडश अध्याय

योगनिद्रा

योगनिद्रा का मतलब होता है अतीन्द्रिय निद्रा। यह वह नींद है जिसमें जागते हुए सोना है। यह निद्रा और जागृति के मध्य की स्थिति है। यह हमारी आन्तरिक जागरूकता की स्थिति है। इसमें हम चेतना, अवचेतन मन और उच्च चेतना से सम्बन्ध स्थापित करते हैं। अभ्यास की प्रारम्भिक स्थिति में किसी बोलने वाले का होना आवश्यक है। इसके लिए यदि सम्भव हो तो टेप रिकार्डर का इस्तेमाल किया जा सकता है। आगे चलकर जब आपको निर्देश याद हो जायेंगे तो आप स्वयं ही अकेले में अभ्यास कर सकते हैं।

योगनिद्रा में अभ्यासी गहन शिथिलन की स्थिति में पहुँच जाता है। नींद की प्रारम्भिक तैयारी के रूप में भी इसका अभ्यास किया जाता है। बहुत से लोग यह नहीं जानते कि किस तरह सोना चाहिए। वे अनेक प्रकार की चिंताओं का बोझ लिए हुए अपनी समस्याओं पर विचार करते हुए सो जाते हैं। नींद में भी उनका मन सक्रिय तथा शरीर तनावपूर्ण रहता है। जब वे सोकर उठते हैं, तो उन्हें थकान लगती है। नींद के द्वारा उन्हें विश्राम नहीं मिल पाता। बहुत मुश्किल से कोशिश करते-करते वे आधे घण्टे के बाद बिस्तर से उठते हैं। अत: हर व्यक्ति को वैज्ञानिक ढंग से सोने की कला सीखनी चाहिए। सोने के पहले योगनिद्रा का अभ्यास करें। इससे सम्पूर्ण शरीर और मन शिथिल हो जायेगा। नींद गहरी आयेगी और कम समय में पूरी हो जायेगी।

योगनिद्रा के अभ्यास से व्यक्तित्व का नवीकरण हो जाता है। तामसिक प्रकृति के अभ्यासियों को ऊर्जा और रक्त प्राप्त होता है।

योगनिद्रा के अभ्यास में शारीरिक केन्द्रों की स्थिति अन्तर्मुखी हो जाती है। इसी को प्रत्याहार कहते हैं। जब मन किसी केन्द्र पर एकाग्र

हो जाता है, तब रक्त, प्राणशक्ति आदि भी उसी स्थान पर केन्द्रित हो जाते हैं। सभी इन्द्रियाँ उस केन्द्र पर वापस लौट जाती हैं। तब गहन शिथिलता की स्थिति प्राप्त होती है। फलस्वरूप तनाव समाप्त हो जाते हैं तथा मन साफ हो जाता है। विचारों में स्पष्टता आ जाती है। योगनिद्रा की स्थिति में हम अपने आन्तरिक व्यक्तित्व के साथ सम्बन्ध स्थापित करते हैं ताकि अपने तथा दूसरों के प्रति अपनी अभिवृत्तियों में उचित परिवर्तन ला सकें। यह आत्मनिरीक्षण है। इस विधि का प्रयोग अनेक योगियों द्वारा बहुत प्राचीनकाल से अपने आत्मा से सम्पर्क करने हेतु किया जाता रहा हैं।

योगनिद्रा के अभ्यास के समय संकल्प किया जाता है। यह एक महत्वपूर्ण बात है। संकल्प के वाक्य नैतिक महत्व के हों तथा छोटे हों। इन्हें अवचेतन मन में अन्तःस्थापित किया जाता है। उदाहरणार्थ, "मैं संकल्प करता हूँ कि धूम्रपान नहीं करूँगा"– एक संकल्प है। योगनिद्रा की स्थिति में जब हमारा मन निष्क्रिय हो जाता है, संकल्प (या आत्म-सुझाव) बहुत प्रभावकारी हो जाता है। यदि सच्चे विश्वास के साथ आप इसे नित्य अभ्यास करते समय दुहरायें तो यह अवश्य पूरा होगा। इस तरीके से आप अपनी आदतें बदल सकते हैं और अनेक प्रकार के मानसिक रोगों से मुक्त हो सकते हैं। संकल्पों के आध्यात्मिक उद्देश्य भी हो सकते हैं जैसे "मैं ज्यादा सजग बनूँगा"। अभ्यास करते समय संकल्प को बार-बार तथा नियमित रूप से कई सप्ताहों तक दुहराना चाहिए। योगनिद्रा समाप्त होने के बाद आँखें खोलने के पहले अपने संकल्प का पुनः चिन्तन करें। ऐसा करते समय अपनी आस्था और विश्वास को डिगने न दें। यह एक महत्वपूर्ण बात है।

योगनिद्रा के समय दिये गये निर्देशों को (जो द्रुतगति से दिये जाते हैं) सावधानी के साथ सुनते हुये उनका अनुसरण करना चाहिए। यदि आप योगनिद्रा का सोने का उद्देश्य से अभ्यास नहीं कर रहे हैं तो अभ्यास की पूरी अवधि भर आपको पूर्ण रूप से सजग रहना होगा। अभ्यास करते समय सोयें नहीं। निर्देशों के अर्थ का बौद्धिक विश्लेषण भी न करें। उन्हें याद करने की भी कोशिश न करें, नहीं तो आपका मन थक जायेगा और नींद आ जायेगी।

योगनिद्रा का अभ्यास शवासन में करें। सिर समतल फर्श पर हो। सिर और शरीर एक लाइन में हों। पैरों के बीच थोड़ी दूरी हो। हाथ बगल के पास हों। हथेलियाँ ऊपर की तरह खुली हुई हों। बिल्कुल स्थिर होकर लेटे रहें। अभ्यास के समय पेट भरा नहीं होना चाहिए। आँखें अभ्यास की पूरी अवधि में बन्द रहेंगी। योगनिद्रा की साधारणत: निम्नलिखित अवस्थायें होती हैं, (इनके क्रम तथा विषय-वस्तु को बदला भी जा सकता है)—

१. एक संकल्प किया जाता है।
२. शरीर के ६७ अंगों में चेतना को घुमाया जाता है। मन को एक अंग से दूसरे अंग की ओर तेजी से दौड़ना चाहिये। इस अभ्यास की एक से लेकर पाँच आवृत्तियाँ तक होती हैं। शरीर के विभिन्न अंगों के क्रम को बदलना नहीं चाहिये क्योंकि हमारा अवचेतन मन किसी निश्चित क्रम का आदी बन जाता है।
३. भारीपन, हल्केपन, गर्मी, सर्दी, कष्ट और आनन्द की अनुभूतियों के प्रति सजग रहना होता है।
४. चक्रों के केन्द्रों तथा उनके अतीन्द्रिय प्रतीकों के प्रति सजग रहना होता है। जब उनके सही स्थानों का मानसिक स्पर्श किया जाये तो बिम्ब दिखाई पड़ सकते हैं या कुछ विशिष्ट अनुभव हो सकते हैं।
५. अभ्यास के अन्त में संकल्प दुहराया जाता है। आत्म-चेतना तथा परमात्म-चेतना की एकता के प्रति सजग रहा जाता है।
६. धीरे-धीरे सामान्य चेतना में वापस आया जाता है और अपने अंगों को धीरे-धीरे हिलाया जाता है। ऐसा झटके के साथ नहीं किया जाता।

योगनिद्रा का संक्षिप्त कक्षा प्रतिलेखन

योगनिद्रा की तैयारी के लिए समस्त शारीरिक हलचल बन्द करें।
योगनिद्रा की तैयारी के लिए समस्त शारीरिक हलचल बन्द करें।
अपने संकल्पों को याद करें और उन्हें तीन बार दुहरायें।
(विराम)

अब शरीर को शिथिल करें परन्तु सजग रहें।
शरीर के प्रत्येक अंग को शिथिल करें तथा शिथिलता की अनुभूति के प्रति सजग रहें।
शिथिलीकरण पूर्ण तथा समांगी (homogenous) होना चाहिए।
आपका शरीर, मन, इन्द्रियाँ, भावनायें, बुद्धि, और व्यक्तित्व के सभी पक्ष–आपका सम्पूर्ण अस्तित्व–सभी को पूर्णरूप से शिथिल होना चाहिए जैसा कि गहरी नींद में सोते हुए होता है।
सजग रहें और अगले निर्देशों का पालन करने के लिए तैयार हो जायें।
पूरे शरीर पर चित्त को एकाग्र करें, तथा उसके प्रति निर्बाध रूप से सतत् तथा समांगी सजगता बनाये रखें। अपने शरीर का ख्याल करें जो धरती पर पड़ा हुआ है।
उन सभी अंगों का ख्याल करें जो जमीन से छू रहे हैं।
उस स्थान पर मन को एकाग्र करें जहाँ दाहिने पैर की एड़ी जमीन को छू रही है।
इसी तरह उन सभी बिन्दुओं पर अपनी चेतना घुमाते जायें जहाँ विभिन्न अंग धरती को छू रहे हैं।
बायीं एड़ी,
दाहिने पैर की पिंडली, बायें पैर की पिंडली,
दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब,
दाहिनी स्कंधास्थि (shoulderblade), बायीं स्कंधास्थि,
दाहिना हाथ, बायाँ हाथ,
दाहिनी कोहनी, बायीं कोहनी,
सिर का पिछला भाग, सिर का पिछला भाग।
अब केवल शरीर के उन अंगों पर मन को ले जायें जो जमीन को स्पर्श कर रहे हैं।
इस क्रिया का अभ्यास लगातार करते जायें।
जहाँ-जहाँ आपके अंग धरती को स्पर्श कर रहे हैं, उनका आप अच्छी तरह अनुभव करें।
यह अभ्यास जारी रखें, जारी रखें, जारी रखें।
अंगों और धरती के बीच के स्पर्श-बिन्दुओं के प्रति पूर्ण रूप से सजग रहें।

अभ्यास करते जायें; अभ्यास करते जायें।

इन स्पर्श-बिन्दुओं के प्रति पूर्ण रूप से जागरूक रहें– सतर्कतापूर्वक जागरूक रहें।

पूर्ण जागरूकता के साथ इन स्पर्श-बिन्दुओं का अनुभव करें।

इस अभ्यास को गहन करते जायें और अधिकाधिक स्पष्टता के साथ इन स्पर्श-बिन्दुओं का अनुभव करें।

यह गुरुत्व-रेखा है।

अब अपने शरीर के उन बिन्दुओं का ख्याल करें जहाँ-जहाँ दोनों आँखों की पलकें मिलती हैं। चेतना को गहन बनायें तथा इन बिन्दुओं को स्पष्टता से अनुभव करें।

अब अपनी चेतना के गुरुत्व केन्द्र को पलकों से हटाकर दोनों ओंठों के स्पर्श-बिन्दुओं पर ले आयें।

दोनों ओंठों के स्पर्श-बिन्दुओं के प्रति जागरूक हो जायें।

जागरूकता बनायें रखें।

जागरूकता को गहन बनायें और ओंठों के स्पर्श-बिन्दुओं का अनुभव करें।

अब अपने श्वास का ख्याल करें और मानसिक नाड़ी शोधन प्राणायाम करें और साँसों को इस प्रकार गिनें।

बायें नथुने से साँस ली; दाहिने नथुने से छोड़ी–एक

दाहिने से ली; बायें से छोड़ी–दो

बायें से ली; दाहिने से छोड़ी–तीन

दाहिने से ली; बायें से छोड़ी–चार।

दोनों से ली; दोनों से छोड़ी–पाँच।

इसी प्रकार दाहिने-बायें नथुनों से साँस लेते-छोड़ते हुए नौ तक गिनें।

फिर दोनों नथुनों से साँस लेते-छोड़ते हुए–दस।

इस क्रम से तीस तक गिनें।

एक-एक, दो-दो, तीन-तीन, चार-चार. पाँच-पाँच, छः-छः, सात-सात, आठ-आठ, नौ-नौ, दस-दस, ग्यारह-ग्यारह, बारह-बारह, तेरह-तेरह, चौदह-चौदह, पन्द्रह-पन्द्रह, सोलह-सोलह, सत्रह-सत्रह, अट्ठारह-अट्ठारह, उन्नीस-उन्नीस, बीस-बीस, इक्कीस-इक्कीस, बाईस-बाईस, तेईस-तेईस,

चौबीस-चौबीस, पच्चीस-पच्चीस, छब्बीस-छब्बीस, सत्ताईस-सत्ताईस, अट्ठाईस-अट्ठाईस, उन्तीस-उन्तीस, तीस-तीस।
इस अभ्यास को पूरी सजगता के साथ दो मिनट तक करें।
(विराम)
फिर अन्त में अपने संकल्प को तीन बार दुहरायें।
अब अपने चेहरे का मानस-दर्शन करें– उसी प्रकार जिस तरह आप दर्पण के अन्दर अपना चेहरा देखते हैं। अपने पूरे शरीर को जमीन पर लेटा हुआ देखें। कुछ देर तक अपने को देखते जायें।
धीरे से आँखें खोल दें और उठकर बैठ जायें।
योगनिद्रा का अभ्यास पूरा हुआ।

योगनिद्रा का विस्तृत कक्षा प्रतिलेखन

अब योगनिद्रा का अभ्यास यानी मानसिक शिथिलीकरण का अभ्यास प्रारम्भ होता है। कृपया अपने शरीर को विश्राम की स्थिति में रखें।
अभी आप अपनी शारीरिक स्थिति में थोड़ा-बहुत परिवर्तन कर सकते हैं, परन्तु अपनी अन्तिम (final) स्थिति को अभ्यास के अन्त तक न बदलें।
जब तक अभ्यास समाप्त न हो जाये तब तक आँखें न खोलें।
सभी निर्देशों का मानसिक रूप से ही अनुसरण करें। शरीर बिल्कुल न हिलायें।
जो निर्देश दिये जाते हैं उनका बौद्धिक विश्लेषण न करें।
आदेशों का सहज ढंग से पालन करें।
आपको शारीरिक, मानसिक और अतीन्द्रिय विश्राम मिलेगा।
अभ्यास की पूरी अवधि में जागते रहें। सोयें नहीं।
अपने आपको पूर्णतः जागृत रखें। जब शिथिलीकरण गहन हो जाता है, तो नींद अवश्य आती है परन्तु बीच-बीच में अपने-आप से (मन ही मन) कहते रहें– 'मैं जाग रहा हूँ, मैं जाग रहा हूँ, मैं जाग रहा हूँ।'

अभ्यास के बीच-बीच में पूर्ण रूप से जाग कर अपनी चेतना की स्थिति का निरीक्षण करें।

अभ्यास करते समय आपको कुछ बातें समझ में आयेंगी और कुछ नहीं। चाहे आप उन्हें समझें या न समझें, कोई अन्तर नहीं पड़ता है। केवल निर्देशों का पालन करते जायें।

अभ्यास अचानक शुरू न करें प्रतिदिन लगभग ७ से १० मिनट तक अपने मन में चेतना को इस प्रकार विकसित करें– 'अब मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।

'पूरे अभ्यास की अवधि तक मैं पूर्ण रूप से जागता रहूँगा।'

उस अनुभव की याद करें जब रात्रि में पूर्ण शिथिलन की स्थिति में आप सोने जा रहे होते हैं।

इन बातों को मन ही मन दुहरायें।

'मेरा मन स्वतंत्र है।

मेरा शरीर स्वतंत्र है।

मैं शिथिल होने के लिए तैयार हो रहा हूँ।

मैं आदेशों को सुन रहा हूँ।'

इसी तरीके से आपको प्रतिदिन दस मिनट तक अपने-आपको मानसिक विश्राम प्राप्त करने के लिए तैयार करना होगा।

यदि समय-समय पर अन्य विचार आकर आपको तंग करें, तो घबरायें नहीं।

अब सिर से लेकर पैर तक अपने सम्पूर्ण शरीर का ख्याल करते जायें और मानसिक रूप से ॐ का उच्चारण करें।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता।

इस क्षण मन में एक संकल्प करें।

आपको एक संकल्प निश्चित करना है।

आपको अपने संकल्प के बारे में निर्णय लेना है।

आपको अपने लिए एक संकल्प निश्चित करना है। अपने लिए संकल्प

निश्चित करने में जल्दबाजी न करें।
संकल्प के वाक्य सरल होने चाहिये।
सरल संकल्प, सरल संकल्प, सरल संकल्प।
अपने लिए एक संकल्प चुनें।
अपने लिए एक उपयुक्त संकल्प चुनें।
आप योग निद्रा के अभ्यास के समय जो संकल्प करेंगे, वह पूरा होगा। जब बौद्धिक विश्लेषण अनुपस्थित होता है और सहज सजगता का प्राकट्य होता है, तब मन संकल्पों के प्रति बहुत ग्रहणशील रहता है, तब संकल्प प्रभावकारी सिद्ध होता है।
अपने लिए जो संकल्प आप निश्चित करते हैं, वह बहुत ज्यादा लम्बा या अस्पष्ट नहीं होना चाहिये। संकल्प के वाक्य सरल, छोटे और स्पष्ट हों। जैसे आप जमीन तैयार करते हैं और बीज बोते हैं, उसी प्रकार मन रूपी खेत में संकल्प के बीज बोयें।
यह आवश्यक नहीं है कि आप अपने लिए आज ही से संकल्प निश्चित कर लें।
किन्तु आपको अपने लिए संकल्प निश्चित करना अवश्य है।
संकल्प को सरल और व्यावहारिक होना चाहिये।
जब एक बार अपना संकल्प निश्चित कर लें, तब उसे बार-बार दुहरायें।
प्रतिदिन लगभग दस रोज तक लगातार दुहरायें।
योग निद्रा का अभ्यास करते समय कम से कम दो बार संकल्प दुहरायें– एक बार प्रारम्भ में और दूसरी बार अन्त में।
योग निद्रा का अभ्यास करते समय जो संकल्प किया जाता है, वह अवश्य ही पूरा होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।
यदि आप अपने मन को अपने विश्वास में ले लेंगे तो आप कुछ भी कर सकते हैं। जब हमारे बौद्धिक व्यक्तित्व का प्रभाव कम होने लगता है, उस समय अवचेतन मन को अपना स्वरूप प्रकट करने का अवसर मिलता है। आप जो संकल्प करते हैं, वह अवश्य ही पूरा होता है।
अभ्यास में अपने संकल्प को दुहरा लेने के बाद पुनः अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग हो जायें।
एड़ी से लेकर चोटी तक संपूर्ण शरीर के प्रति इस प्रकार जागरूक होवें–

कहें– 'मैं हूँ, मैं हूँ ।' या 'मेरा शरीर, मेरा शरीर'। एक बार में ही पूरे शरीर के बारे में सोचें । एक बार में ही पूरे शरीर के बारे में सोचें । एक ही क्षण में अपने पूरे शरीर के प्रति सजग हो जायें ।

'मैं अपना शरीर हूं । मैं अपना शरीर हूँ ।', इस प्रकार सोचते हुए सम्पूर्ण शरीर के प्रति जागरूकता बनाये रखें ।

अब सोचें– 'मैं निर्देशों को सुन रहा हूँ ।

मैं सतर्क हूँ । मैं सो नहीं रहा हूँ ।

मुझे बाहर की आवाजें सुनाई पड़ रही हैं ।

मैं पूर्णतः शिथिल हूँ । मैं किसी भी क्षण सो सकता हूँ, लेकिन मुझको जागते रहना है ।'

अब योग निद्रा का प्रथम अभ्यास शुरू होता है ।

शरीर के विभिन्न अंगों पर अपनी चेतना को घुमायें । अपने मन में उन अंगों के नाम लें और केवल कुछ क्षणों के लिए (लेकिन ज्यादा देर के लिए नहीं) उनके प्रति अपनी जागरूकता विकसित करें ।

उदाहरण के लिए यदि मैं कहूँ– दाहिने हाथ का अँगूठा, तो आपको भी अपने मन में कहना होगा, 'दाहिने हाथ का अँगूठा ।'

लेकिन इस समय इस अंग को हिलायें नहीं । इसी तरह दूसरे अंगों के साथ करें ।

मैं आपकी चेतना को शरीर के विभिन्न अंगों में ले जाऊँगा । मेरी गति थोड़ी तेज होगी ।

अपने को सजग रखें । बहुत ज्यादा एकाग्र न हों । केवल अपनी सजगता को बढ़ायें । अपने मन की गति को मेरी गति के अनुसार तेज रखें ।

यदि आप मेरी गति के अनुसार नहीं चल सकें, तो कोई बात नहीं; मेरी अगली बातें सुनें ।

पहले मैं थोड़ा धीरे-धीरे चलूँगा । तब इसके बाद अपनी गति थोड़ी तेज करूँगा ।

जिस अंग का मैं नाम लूँ, मन ही मन उसका नाम दुहरायें ।

आपको अंग विशेष का नाम मानसिक रूप से लेना है, इस बात को समझ लें ।

मन ही मन कहें–

दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी, चौथी, हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, काँख, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, दाहिने पैर का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी, चौथी, पाँचों एक साथ।

इसी तरीके से बायें हिस्से में–

बायें हाथ का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी, चौथी, हथेली, कलाई कोहनी, कंधा, काँख, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी और चौथी। पुनः बायें हाथ का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी और चौथी उँगली, कलाई, कोहनी, कंधा, काँख, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी, चौथी।

अब नीचे से शुरू करें–

दाहिने पैर का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी उँगली, तीसरी, चौथी, तलवा, एड़ी, टखना, पिंडली, घुटना, जाँघ, कमर, काँख, कंधा, कोहनी, कलाई, हथेली, दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी, चौथी।

बायें पैर का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी, चौथी, तलवा, एड़ी, टखना, पिंडली, घुटना, जाँघ, कमर, काँख, कंधा, कोहनी, कलाई, हथेली, बायें हाथ का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी और चौथी उँगली।

फिर दाहिने तरफ ऊपर से नीचे की ओर से चलेंगे।

दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी, चौथी, हथेली, कलाई, कोहनी, कँधा, काँख, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, दाहिने पैर का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी, चौथी, तलवा, एड़ी, टखना, पिंडली, घुटना, जाँघ, कमर, काँख, कंधा, कोहनी, कलाई, दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी और चौथी उँगली।

फिर बायीं तरफ ऊपर से नीचे की ओर– बायें हाथ का अँगूठा, पहली उँगली, दूसरी, तीसरी, चौथी, हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, काँख, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर का अँगूठा,

पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी; तलवा, एड़ी, टखना, पिंडली, घुटना, जाँघ, कमर, काँख, कंधा, कोहनी, कलाई, हथेली, बायें हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी, चौथी।

और अब पीछे के अंग, पीछे के अंग। अपना ध्यान सिर के पिछले हिस्से में ले जायें जो जमीन को स्पर्श कर रहा है।

सिर का पिछला हिस्सा जो जमीन को स्पर्श कर रहा है।

सिर का पिछला हिस्सा जो जमीन को स्पर्श कर रहा है।

दाहिनी स्कन्धास्थि (shoulderblade), बायीं स्कन्धास्थि, रीढ़ की हड्डी, दाहिना कूल्हा, बायाँ कूल्हा, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, दाहिनी जाँघ के नीचे का भाग, बायीं जाँघ के नीचे का भाग, दाहिनी पिंडली, बायीं पिंडली, दाहिना टखना, बायाँ टखना, दाहिनी एड़ी, बायीं एड़ी, दाहिना टखना, बायाँ टखना, दाहिनी पिंडली, बायीं पिंडली, दाहिनी जाँघ के नीचे का भाग, बायीं जाँघ के नीचे का भाग, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, दाहिना कूल्हा, बायाँ कूल्हा, रीढ़ की हड्डी, दाहिनी स्कन्धास्थि, बायीं स्कन्धास्थि, सिर का पिछला भाग।

दाहिनी स्कन्धास्थि, बायीं स्कन्धास्थि, रीढ़ की हड्डी, दाहिना कूल्हा, बायाँ कूल्हा, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, दाहिनी जाँघ के नीचे का भाग, बायीं जाँघ के नीचे का भाग, दाहिनी पिंडली, बायीं पिंडली, दाहिना टखना, बायाँ टखना, दाहिनी पिंडली, बायीं पिंडली, दाहिनी जाँघ के नीचे का भाग, बायीं जाँघ के नीचे का भाग, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, दाहिना कूल्हा, बायाँ कूल्हा, रीढ़ की हड्डी, दाहिनी स्कन्धास्थि, बायीं स्कन्धास्थि, सिर का पिछला भाग।

सिर के ऊपरी हिस्से में सामने की ओर जायें। सिर के ऊपरी हिस्से में जायें– सिर का ऊपरी हिस्सा, सिर का ऊपरी हिस्सा, ललाट, दाहिनी भौंह, बायीं भौंह, भ्रूमध्य, दाहिनी आँख, बायीं आँख, दाहिना नासा छिद्र, बायाँ नासा छिद्र, दाहिना गाल, बायाँ गाल, दाहिना कान, बायाँ कान, ऊपरी ओंठ, नीचे का ओंठ, ठुड्डी, गला, छाती का दाहिना हिस्सा, छाती का बायाँ हिस्सा, पूरी छाती, नाभि, पेट का ऊपरी भाग, पेट का निचला भाग, दाहिना श्रोणि-प्रदेश (pelvis), बायाँ श्रोणि-प्रदेश, ऊरुमूल (पेट और जाँघ के बीच का भाग) का दाहिना

हिस्सा, ऊरुमूल का बायाँ हिस्सा, दाहिनी जाँघ, बायीं जाँघ, दाहिना घुटना, बायाँ घुटना, दाहिने पैर की उँगलियाँ, बायें पैर की उँगलियाँ। बायें पैर की उँगलियाँ, दाहिने पैर की उँगलियाँ, बायाँ घुटना, दाहिना घुटना, बायीं जाँघ, दाहिनी जाँघ, ऊरुमूल का दाहिना हिस्सा, ऊरुमूल का बायाँ हिस्सा, बायाँ श्रोणि-प्रदेश, दाहिना श्रोणि-प्रदेश, बायाँ पेट, दाहिना पेट, पेट का निचला भाग, पेट का ऊपरी भाग, नाभि, पूरी छाती, छाती का बायाँ हिस्सा, छाती का दाहिना हिस्सा, गला, ठुड्डी, नीचे का ओंठ, ऊपर का ओंठ, बायाँ कान, दाहिना कान, बायाँ गाल, दाहिना गाल, बायाँ नासा छिद्र, दाहिना नासाछिद्र, बायीं आँख, दाहिनी आँख, भ्रूमध्य, बायीं भौंह, दाहिनी भौंह, ललाट, सिर का ऊपरी हिस्सा, सामने से दिखाई पड़ने वाला सिर का ऊपरी हिस्सा, भ्रूमध्य, भ्रूमध्य, भ्रूमध्य।

मन ही मन कहें– मैं सो नहीं रहा हूँ, जाग रहा हूँ। मैं सो नहीं रहा हूँ, जाग रहा हूँ। मैं सो नहीं रहा हूँ, जाग रहा हूँ। मैं सो नहीं रहा हूँ, जाग रहा हूँ।

अब शरीर के आन्तरिक अंगों की ओर चलें– ध्यान को जीभ, दाँत, तालु पर ले जायें। इसे श्वास के साथ नाक के अन्दर ले जायें फिर मस्तिष्क के अन्दर का भाग, बड़ा मस्तिष्क, आन्तरिक नासिकारन्ध्र जो गले में खुलता है, गले का वह भाग जिससे होकर वायु अन्दर जाती है, दाहिना फेफड़ा, बायाँ फेफड़ा।

श्वास के साथ फेफड़े का अनुभव करें। श्वास के द्वारा उसे भर कर उसका अनुभव करें। दाहिना फेफड़ा, बायाँ फेफड़ा।

हृदय, हृदय की धड़कन पर ध्यान देकर हृदय का अनुभव करें। हृदय की धड़कन पर चित्त एकाग्र करें। यह आसान होगा। अपना ध्यान हृदय की धड़कन पर लगायें। हृदय के प्रति जागरूक हों।

अब अन्ननाल (alimentary canal) में प्रवेश करें। यह वह भाग है जो भोजन को मुँह से पेट तक पहुँचाता है। इसको श्वास के द्वारा अनुभव करें।

पेट, जिगर, जिगर, पेट, गुर्दा, गुर्दा, गुर्दा, आन्तरिक पेट का समूचा भाग। फिर ऊपर से शुरू करें।

मस्तिष्क, मस्तिष्क, मस्तिष्क, आन्तरिक नासिकारन्ध्र, जीभ, दाँत, तालु, दाहिने कान का पर्दा, बायें कान का पर्दा, गला, अन्ननाल, दाहिना फेफड़ा, बायाँ फेफड़ा, हृदय, पेट, यकृत, गुर्दा, पेट के अन्दर का पूरा भाग।

फिर ऊपर से चलें— सोचने की कोशिश करें। सोचने की कोशिश करें। सोचने की कोशिश करें। अपने आंतरिक अंगों के बारे में सोचें। मस्तिष्क, आन्तरिक नासिका रन्ध्र, दाहिने कान का पर्दा, बायें कान का पर्दा, जीभ, दाँत, तालु, गला, अन्ननाल, दाहिना फेफड़ा, बायाँ फेफड़ा, हृदय, पेट, यकृत, गुर्दा, पेट का आन्तरिक भाग, पेट का आन्तरिक भाग, पेट का आन्तरिक भाग। अब शरीर के मुख्य अंग– दाहिना पैर, बायाँ पैर, दोनों पैर एक साथ, दाहिनी बाँह, बायीं बाँह, दोनों बाँहें एक साथ। पीठ का पूरा भाग, सामने का पूरा भाग, सिर, पूरा शरीर।

कहें– पूरा शरीर। इसका मानसदर्शन करें।

कहें– पूरा शरीर। अब इसका मानसदर्शन करें। कहें– पूरा शरीर। अब इसका मानसदर्शन करें। अपनी सजगता को और तीव्र करें। पूरा शरीर, पूरा शरीर, पूरा शरीर।

अब अपने ध्यान को मेरुदण्ड में नीचे ले जायें, अब अपने ध्यान को मेरुदण्ड में नीचे ले जायें।

अपना परीक्षण करें– क्या आप जाग रहे हैं या सो रहे हैं? या ऊँघ रहे हैं अथवा आपका मन भटक रहा है?

अपना निरीक्षण करें– क्या आप जाग रहे हैं?

कहें– 'मैं जाग रहा हूँ।'

अब रीढ़ में नीचे की ओर जायें, जहाँ मूलाधार (perineum) है। मन में कहें– 'मूलाधार' और उसके बारे में सोचें।

रीढ़ के अन्दर सुषुम्ना नाड़ी के निचले हिस्से से थोड़ा ऊपर आयें– ठीक नाभि के पीछे।

फिर सुषुम्ना नाड़ी से अन्दर ही अन्दर हृदय के पीछे तक आयें। अब इसी मार्ग से गर्दन तक जायें। अब रीढ़ की हड्डी के ऊपरी हिस्से पर आयें जहाँ लघु मस्तिष्क है। अब यहाँ से सिर के सबसे ऊपरी भाग में चलें। अब फिर वापस चलें– सिर का ऊपरी भाग, सिर का पिछला भाग,

गर्दन, हृदय के पीछे, नाभि के पीछे, रीढ़ का निचला भाग, मूलाधार। फिर मूलाधार, रीढ़ का निचला भाग।

रीढ़ में नाभि के पीछे का भाग, नाभि के पीछे का भाग, हृदय के पीछे का भाग, गर्दन, गर्दन, सिर का पिछला भाग, सिर का पिछला भाग, सिर का ऊपरी भाग, सिर का ऊपरी भाग, ऊपरी भाग, ऊपरी भाग, ऊपरी भाग।

सिर के पीछे, गर्दन के पीछे, हृदय के पीछे, हृदय के पीछे, हृदय के पीछे, नाभि के पीछे, नाभि के पीछे, नाभि के पीछे, रीढ़ के नीचे, रीढ़ के नीचे, मूलाधार, मूलाधार, मूलाधार।

'मैं जाग रहा हूँ, मैं जाग रहा हूं, मैं जाग रहा हूं। मैं जागरूक हूं, मैं जागरूक हूं, मैं जागरूक हूं।'

अपने पूरे शरीर को उसी प्रकार देखें, जिस प्रकार आप किसी दर्पण में अपने आप को देखते हैं।

मानो आपके ऊपर एक बहुत बड़ा दर्पण टँगा हुआ है और आप उसमें अपने प्रतिबिम्ब को देख रहे हैं।

दर्पण में अपने प्रतिबिम्ब के समान अपने शरीर को देखें।

अपने शरीर को अपने से भिन्न एक वस्तु के रूप में देखें, जैसे आप अपना सिर देखते हैं, अपनी भुजायें, अपनी छाती, अपने पैर, अपने कपड़े देखते हैं, जैसे मैं आपको देख रहा हूं। जैसे मैं आपको देख रहा हूँ, वैसे ही आप अपने आपको किसी वस्तु के रूप में देखें।

मानसिक दर्पण में अपने आपको देखें और कहें– 'मेरा प्रतिबिम्ब, मेरा शरीर, मेरा प्रतिबिम्ब, मेरा शरीर।'

अब विभिन्न चीजों पर मन एकाग्र करें। इनके बारे में मैं आपको बतलाऊँगा।

जागरूक रहें। मैं बहुत सी चीजों के नाम लूंगा। आप भी उनके नाम मानसिक रूप से लेंगे और उनका मानसदर्शन (visualise) करेंगे। यदि आप उनका मानसदर्शन कर लेते हैं, तो इसका मतलब है कि आप पूर्ण रूप से शिथिल हो गये।

यदि आप ऐसा नहीं कर पाते हैं, तो इसका अर्थ है कि आपको और अधिक अभ्यास करना चाहिये।

एक झील में नीलकमल, एक झील में नीलकमल, एक झील में नीलकमल।
जलती हुई एक मोमबत्ती, जलती हुई एक मोमबत्ती, जलती हुई एक मोमबत्ती।
ऊँघने का अनुभव, ऊँघने का अनुभव करें।
गर्मी का अनुभव, गर्मी का अनुभव, गर्मी का अनुभव करें।
भारीपन का अनुभव, भारीपन का अनुभव, भारीपन का अनुभव करें।
लाल रंग का उलटा त्रिकोण, लाल रंग का उलटा त्रिकोण, लाल रंग का उलटा त्रिकोण।
जलती हुई आग की लौ, जलती हुई आग की लौ, जलती हुई आग की लौ।
गर्मी का अनुभव, गर्मी का अनुभव, गर्मी का अनुभव।
बर्फ से आच्छादित पर्वतों की चोटियाँ, बर्फ से आच्छादित पर्वतों की चोटियाँ, बर्फ से आच्छादित पर्वतों की चोटियाँ।
फैला हुआ भू-खण्ड, फैला हुआ भू-खण्ड, फैला हुआ भू-खण्ड।
एक सितारा, आसमान में एक सितारा, एक तारे का छोटा बिन्दु।
एक लाल गुलाब का फूल।
शहद की एक मक्खी, शहद की एक मक्खी, शहद की एक मक्खी।
आसमान में उड़ती हुई चिड़िया, उड़ती हुई चिड़िया, उड़ती हुई चिड़िया।
झील में तैरती हुई नाव, तैरती हुई नाव, तैरती हुई नाव।
तारों से भरा हुआ आकाश, तारों से भरा हुआ आकाश, तारों से भरा हुआ आकाश।
भारीपन का अनुभव, भारीपन का अनुभव, भारीपन का अनुभव करें।
आपकी अपनी श्वास, आपकी अपनी श्वास, आपकी अपनी श्वास।
अँधेरी रात, अँधेरी रात।
एक झील में नीलकमल, एक झील में नीलकमल।
वर्षा की झड़ी।
मूसलाधार वर्षा, मूसलाधार वर्षा।
हरी पत्ती, हरी पत्ती।

बाग, बाग, पीले फूल, पीले फूल, लाल गुलाब, लाल गुलाब, हरी घास, हरी घास, स्विमिंग पूल, स्विमिंग पूल, हरी घास, एक बड़ा बाग।
उलटा त्रिकोण, एक चीता, एक चीता, एक चीता।
पूरा शरीर, पूरा शरीर, पूरा शरीर।
अपने पूरे शरीर को मानसिक दर्पण में देखें।
सारे प्रयत्नों को छोड़ दें।
अपने मन को बहिर्मुखी बनायें, अपने मन को बहिर्मुखी बनायें।
आसपास के वातावरण के प्रति सजग हो जायें।
मैं योग निद्रा का अभ्यास कर रहा हूँ।
मैं योग निद्रा का अभ्यास कर रहा हूँ।
मैं शान्त लेटा हुआ हूँ।
अब फिर आपको अपने संकल्प को दुहराना होगा।
संकल्प करें– वही संकल्प जो अभ्यास के प्रारम्भ में किया था।
संकल्प एक ही होना चाहिये।
उसे बदलें नहीं। वही संकल्प।
आपका अवचेतन मन आपके संकल्प को ग्रहण कर रहा है।
आँखें बन्द रखें।
अब धीरे-धीरे शरीर को हिलायें।
आँखें बन्द किये हुए शरीर को हिलायें।
उठने की तैयारी करें।
आँखें बन्द रखें और शरीर को हिलायें।
उठने की तैयारी करें।
उठ जायें और आँखें खोल दें।
हरि ॐ तत्सत्।

योग निद्रा का पूर्ण कक्षा प्रतिलेखन

योग निद्रा के लिए तैयार हो जायें।
योग निद्रा के लिए तैयार हो जायें।
अपने कम्बल आदि को अच्छी तरह से ठीक कर लें ताकि आप निश्चिन्त

हो जायें कि बिना किसी शारीरिक कष्ट का अनुभव किये हुए आप योग निद्रा का अभ्यास कर सकेंगे ।

हर चीज को सुव्यवस्थित ढंग से ठीक कर लें। शरीर की स्थिति, कम्बल आदि सबको अच्छी तरह से ठीक कर लें । इन्हें व्यवस्थित करने के लिए जो कुछ उपयुक्त शारीरिक गति करनी हो उसे आप अभी कर सकते हैं ।

परन्तु एक बार जब इन्हें ठीक से व्यवस्थित कर लिया जाये, तब शरीर को नहीं हिलाना चाहिये ।

जब तक योग निद्रा का पूरा अभ्यास समाप्त न हो जाये, तब तक आपको हिलना नहीं है ।

बिल्कुल स्थिर हो जायें ।

अब अन्तिम रूप से अच्छी तरह व्यवस्थित हो जायें ।

अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जायें ।

अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जायें ।

अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जायें ।

भौतिक शरीर की सत्ता के प्रति सजग हो जायें ।

भौतिक शरीर की सत्ता के प्रति सजग हो जायें ।

सिर से लेकर पैर तक सम्पूर्ण शरीर के प्रति अपनी जागरूकता विकसित करें ।

सिर से लेकर पैर तक सम्पूर्ण शरीर के प्रति अपनी जागरूकता विकसित करें ।

आपका सम्पूर्ण शरीर आपकी जागरूकता का केन्द्र बने ।

आपका सम्पूर्ण शरीर आपकी जागरूकता का रूप बन जाये ।

आप अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति जागरूक हैं– सिर से लेकर पैर के अँगूठे तक पूरे भौतिक शरीर के प्रति, न कि केवल पैरों या हाथों, या सीने या सिर के प्रति । आप सम्पूर्ण शरीर के प्रति जागरूक हैं, सम्पूर्ण शरीर के प्रति । सम्पूर्ण शरीर के प्रति जागरूकता । सम्पूर्ण शरीर के प्रति समग्र, पूर्ण तथा सतत जागरूकता ।

आप योग निद्रा का अभ्यास करने जा रहे हैं, इसके प्रति सचेत हो जायें और मानसिक रूप से कहें —

मैं इसके प्रति सजग हूँ कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।
मुझे पता है कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।
मुझे पता है कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।
मुझे पता है कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।
मुझे पता है कि मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।
इस तरह सोचते जायें और यह सुनिश्चित कर लें कि आप को पता है कि आप अभ्यास करने जा रहे हैं।
अब यही आपकी जागरूकता का स्वरूप रहेगा।
अपने शरीर को मानसिक रूप से शिथिल करें।
अपने को मानसिक रूप से शिथिल करें।
मन को शिथिल करें।
अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को सामान्य ढंग से श्वास लेते हुए तथा मानसिक नाड़ी शोधन प्राणायाम करते-करते सामान्य श्वसन-क्रिया पर ध्यान देते हुए शिथिल करें।
नासाछिद्रों को बदलते हुए श्वास लें और छोड़ें, यानी बायें से श्वास लें और दाहिने से छोड़ें; फिर दाहिने से लें और बायें से छोड़ें।
सामान्य ढंग से ही श्वास लेते रहें।
नासाछिद्रों के प्रति समग्र सजगता के साथ श्वास लेते रहें और छोड़ते रहें।
बायें नासाछिद्र से साँस लें और दाहिने से छोड़ें। पुनः दाहिने नासाछिद्र से साँस लें और बायें से छोड़ें।
श्वास को शिथिल करें। सामान्य ढंग से श्वास लें। सजगतापूर्वक श्वास लें।
मानसिक नाड़ी शोधन का अभ्यास करते जायें।
इस विधि से आपके व्यक्तित्व को पूर्ण विश्रांति का अनुभव होगा। इसके द्वारा केवल स्थूल शरीर ही नहीं, केवल चिन्तन-प्रणाली ही नहीं, वरन् शरीर, श्वास, इन्द्रियाँ, मन, चेतना आदि सभी को पूर्ण विश्राम मिलेगा।
श्वास की सहायता से आपकी चेतना और मन को अन्दर और बाहर जाना चाहिए।
जब इस तरीके से आप अपने शरीर और मन को विश्राम देंगे तो आपकी

भौतिक चेतना और जागरूकता में एक बहुत बड़ा परिवर्तन आयेगा। किसी भी समय यदि आप इस प्रकार श्वास लें और छोड़ें तथा बारी-बारी से पहले बायें और फिर दाहिने नासाछिद्र से सहज श्वास लेते और छोड़ते रहें और उस (श्वास) के प्रति जागरूक रहें तो पूरा व्यक्तित्व तनाव-रहित हो जायेगा।

एक बार जाँच करके देख लें कि आप पूरी तरह से जाग रहे हैं कि नहीं; कि आप मुझे सुन रहे हैं और सो नहीं रहे हैं।

अब आप संकल्प दुहरायें।

आपका संकल्प सरल, संक्षिप्त और स्पष्ट होना चाहिए। संकल्पों को पूरे विश्वास के साथ दुहराना चाहिए।

योग निद्रा के प्रारम्भ और अन्त में जो संकल्प लिया जाता है वह जीवन में अवश्य ही पूरा होता है।

वह कभी निष्फल नहीं होता।

अभ्यास में नित्य वही संकल्प दुहरायें। उसकी भाषा न बदलें।

संकल्प के संदर्भ भी न बदलें।

प्रतिदिन अभ्यास के प्रारम्भ और अन्त में उसी संकल्प को दुहरायें।

याद रखें कि योग निद्रा के प्रारम्भ और अन्त में आँखें खोलने के पहले संकल्प को दुहराना जरूरी है।

प्रारम्भ और अन्त में संकल्प तीन-तीन बार दुहराया जाता है।

संकल्प दुहराते जायें।

संकल्प दुहराते जायें।

संकल्प दुहराते जायें।

अब योग निद्रा का अभ्यास प्रारम्भ होता है।

शरीर के विभिन्न केन्द्रों में तेजी से चेतना को घुमायें।

अपनी जागरूकता को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाते रहें।

अपनी जागरूकता को एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र तक ले जाते रहें।

आपको मानसिक रूप से इन केन्द्रों का नाम लेकर उनके प्रति सजग होना है।

आपको मानसिक रूप से इन केन्द्रों का नाम ले.कर उनके प्रति सजग होना है।

दाहिने हाथ का अँगूठा, अँगूठे का अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगूठे की जड़।
पहली उँगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, इस उँगली की जड़।
दूसरी उँगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उँगली की जड़।
तीसरी उँगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उँगली की जड़।
चौथी उँगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उँगली की जड़।
हाथ के पीछे का भाग, हथेली, हथेली के उभार।
शुक्र, चन्द्रमा, बुध, सूर्य, शनि, बृहस्पति और मंगल, हथेली के मध्य का भाग।
कलाई, नीचे की भुजा, इस भुजा के अन्दर का भाग, कोहनी, कोहनी के अन्दर का भाग, ऊपरी भुजा। कंधा, काँख, छाती का दाहिना हिस्सा, कमर, कूल्हा, जाँघ, घुटना, घुटने के पीछे की नस (hamstring), घुटने के पीछे का भाग, पिंडली, अग्रजंघा (shin)।
दाहिना पैर, टखना, एड़ी, तलवे का मध्य भाग, तलवे का ऊपरी हिस्सा, पैर का ऊपरी भाग (instep of the foot), पैर की उँगलियाँ।
पैर का अंगूठा, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगूठे की जड़।
दाहिने पैर की पहली उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़।
दाहिने पैर की दूसरी उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़।
दाहिने पैर की तीसरी उँगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़।
दाहिने पैर की चौथी उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उँगली की जड़।
बायें हाथ का अंगूठा, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अंगूठे की जड़।
पहली उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़। दूसरी उँगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उँगली जड़।

तीसरी उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़।
चौथी उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़।
हाथ के पीछे का भाग, हथेली, हथेली के उभार।
शुक्र, चन्द्रमा, बुध, सूर्य, शनि, बृहस्पति, मंगल, हथेली के मध्य का भाग।
कलाई, नीचे की भुजा, इस भुजा के अन्दर का भाग, ऊपरी भुजा, कंधा, काँख, छाती का बायाँ हिस्सा, कमर, कूल्हा, जाँघ, घुटना, घुटने के पीछे की नस, घुटने के पीछे का भाग, पिंडली, अग्रजंघा।
बायें पैर का टखना, एड़ी, तलवे का मध्य भाग, तलवे का ऊपरी भाग, पैर का ऊपरी भाग, पैर की उँगलियाँ।
पैर का अंगूठा, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, अँगूठे की जड़।
बायें पैर की पहली उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़।
बायें पैर की दूसरी उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़।
बायें पैर की तीसरी उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़।
बायें पैर की चौथी उंगली, अग्रभाग, नाखून, पहला जोड़, दूसरा जोड़, उंगली की जड़।
दाहिनी स्कंधास्थि (shoulderblade), बायीं स्कंधास्थि, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, पीठ का दाहिना हिस्सा, बायाँ हिस्सा, रीढ़ की हड्डी, गर्दन, पूरी पीठ एक साथ।
सहस्रार, माथा, दाहिनी भौंह, बायीं भौंह, दोनों भौंहों के बीच का भाग, दाहिनी कनपटी, बायीं कनपटी, दाहिनी आँख, बायीं आँख, दाहिनी आँख की पलक, बायीं आंख की पलक, दाहिना गाल, बायाँ गाल, दाहिना कान, बायाँ कान, नाक, नासिकाग्र, ऊपर का ओंठ, नीचे का ओंठ, दोनों ओंठ एक साथ, जीभ, ठुड्डी, गला।
दाहिनी छाती, बायीं छाती, दोनों छाती एक साथ, दोनों छाती के बीच का गड्ढा, हृदय, पेट, नाभि, उदर (abdomen), दाहिनी भुजा, बायीं भुजा, दाहिना पैर, बायाँ पैर, सिर, धड़।

सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर।

अपनी चेतना की जाँच करें।

यह सुनिश्चित कर लें कि आप मेरे निर्देशों को सुन रहे हैं।

आप सो नहीं रहे हैं। आप जाग रहे हैं।

अब भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें।

दाहिने हाथ के अँगूठे में भारीपन का अनुभव करें, फिर पहली उँगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी उँगली में, चौथी उँगली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, दाहिने पैर के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी उँगली में, चौथी उँगली में।

भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें— बायें हाथ के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी उँगली में, चौथी उँगली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी उँगली में, चौथी में भारीपन का अनुभव करें।

भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें। दाहिनी स्कंधास्थि में, फिर बाईं स्कंधास्थि में भारीपन का अनुभव करें।

दाहिने नितम्ब में, बायें नितम्ब में, दाहिनी पीठ में, बायीं पीठ में, रीढ़ की हड्डी में, पूरी पीठ में भारीपन का अनुभव करें।

भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें, दाहिने हाथ के अँगूठे में भारीपन का अनुभव करें; फिर पहली उँगली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, दाहिने पैर के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी में, तीसरी में और चौथी उँगली में।

भारीपन महसूस करें, बायें हाथ के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में,

कमर में, नितम्ब में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी उँगली में और चौथी उँगली में ।
बायें हाथ के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी उँगली में, चौथी उंगली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी उँगली में, चौथी उँगली में ।
भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें । दाहिनी स्कंधास्थि में, बायीं स्कंधास्थि में, दाहिने नितम्ब में, बायें नितम्ब में, दाहिनी पीठ में, बायीं पीठ में, रीढ़ की हड्डी में, पूरी पीठ में ।
भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें — दाहिने पैर में, बायें पैर में, दोनों पैरों में, दाहिनी भुजा में, बायीं भुजा में, दोनों भुजाओं में, सिर में, धड़ में ।
भारीपन का अनुभव करें, भारीपन का अनुभव करें, सम्पूर्ण शरीर में भारीपन का अनुभव करें, सम्पूर्ण शरीर में भारीपन का अनुभव करें, अपने सम्पूर्ण शरीर में भारीपन का अनुभव करें ।
अपनी चेतना की जाँच करें । यह सुनिश्चित कर लें कि आप सो नहीं रहे हैं ।
आप जाग रहे हैं और मेरे निर्देशों को सुन रहे हैं ।
अब शरीर में हलकेपन का अनुभव करें; हलकेपन का अनुभव करें; हलकेपन का अनुभव करें – अपने दाहिने हाथ के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, दाहिने पैर के अँगूठे में, पहली अंगुली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी अंगुली में ।
हलकेपन का अनुभव करें; हलकेपन का अनुभव करें; हलकेपन का अनुभव करें– बायें हाथ के अँगूठे में, पहली उंगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी उँगली में, चौथी उंगली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे

में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी उंगली में, तीसरी में, चौथी में ।

हलकेपन का अनुभव करें– दाहिनी स्कंधास्थि में, बायीं स्कंधास्थि में, दाहिने नितम्ब में, बायें नितम्ब में, दाहिनी पीठ में, बाईं पीठ में, रीढ़ की हड्डी में, पूरी पीठ में ।

हलकेपन का अनुभव करें । हलकेपन की भावना जगायें । दाहिने हाथ के अँगूठे में हलकेपन का अनुभव करें; फिर पहली उँगली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी उँगली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, दाहिने पैर के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी में, चौथी उँगली में । बायें हाथ के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अँगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी उँगली में, तीसरी उँगली में और चौथी उँगली में।

बायें हाथ के अंगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी उँगली में, हथेली में, कलाई में, कोहनी में, कंधे में, बगल में, कमर में, कूल्हे में, घुटने के पीछे की नस में, जाँघ में, घुटने में, पिंडली में, टखने में, एड़ी में, तलवे में, बायें पैर के अंगूठे में, पहली उँगली में, दूसरी में, तीसरी में, चौथी में ।

हलकेपन का अनुभव करें, हलकेपन का अनुभव करें । अपनी दाहिनी स्कंधास्थि में हलकेपन का अनुभव करें, फिर बायीं स्कंधास्थि में, दाहिने नितम्ब में, बायें नितम्ब में, दाहिनी पीठ में, बायीं पीठ में, रीढ़ की हड्डी में; पूरी पीठ में । हलकेपन का अनुभव करें, हलकेपन का अनुभव करें, दाहिने पैर में, बायें पैर में, दोनों पैरों में एक साथ । दाहिनी भुजा में, बायीं भुजा में, दोनों भुजाओं में, सिर में, धड़ में ।

हलकेपन का अनुभव करें, हलकेपन का अनुभव करें । अपने सम्पूर्ण शरीर में हलकेपन का अनुभव करें । सम्पूर्ण शरीर में । सम्पूर्ण शरीर में ।

इसके प्रति सजग हो जायें कि आप सो नहीं रहे हैं तथा मेरे निर्देशों को सुन रहे हैं। अपनी चेतना की जाँच कर लें। अपनी इच्छाशक्ति से अपने अन्दर गर्मी का अनुभव करें, गर्मी का अनुभव करें, गर्मी की कल्पना करें। भूतकाल में कभी इसी तरह का अनुभव हुआ हो तो उसकी याद करें। दाहिने तलवे में गर्मी का अनुभव करें, दाहिने तलवे में गर्मी का अनुभव करें, फिर बायें तलवे में, बायें तलवे में, फिर दाहिनी हथेली में, दाहिनी हथेली में, बायीं हथेली में, बायीं हथेली में, ओंठ में, ओंठ में, दाहिनी आँख में, दाहिनी आँख में, बायीं आँख में, बायीं आँख में, दाहिने कान में, दाहिने कान में, बायें कान में, बायें कान में।

सम्पूर्ण शरीर में गर्मी के अनुभव के प्रति सजग रहें।

सम्पूर्ण शरीर में गर्मी का अनुभव करें। यह अनुभव आपके लिए वास्तविक बन जाना चाहिये। मानसिक रूप से अनुभव करें कि गर्मी क्या है। दाहिने तलवे में गर्मी का अनुभव करें, दाहिने तलवे में गर्मी का अनुभव करें; फिर बायें तलवे में, बायें तलवे में, दाहिनी हथेली में, दाहिनी हथेली में, बायीं हथेली में, बायीं हथेली में, ओंठ में, ओंठ में, दाहिनी आँख में, दाहिनी आँख में, बायीं आँख में, बायीं आँख में, दाहिने कान में, दाहिने कान में, बायें कान में, बायें कान में।

ऐसा अनुभव करें कि आपका पूरा शरीर गर्म हो गया है। उसमें से पसीना निकल रहा है। अपनी इच्छाशक्ति से गर्मी का अनुभव करें। सम्पूर्ण शरीर में गर्मी का अनुभव करें, सम्पूर्ण शरीर में, सम्पूर्ण शरीर में।

जागते रहें। सोयें नहीं। मेरे निर्देशों को सुनते रहें।

अब ठंढक का अनुभव करें, ठंढक का अनुभव करें।

अपने शरीर में ठंढक का अनुभव करें।

अपने शरीर में ठंढक का अनुभव करें।

अब ऐसी कल्पना करें कि आप जाड़े में ठंढी जमीन पर चल रहे हैं। तब आपके शरीर को कैसा लगेगा? इस अनुभव को जागृत करें। ठंढक का अनुभव करें। ठंढक का अनुभव, ठंढक का अनुभव।

अपने दाहिने तलवे में ठंढक का अनुभव करें, दाहिने तलवे में ठंढक का अनुभव करें, फिर बायें तलवे में, बायें तलवे में, रीढ़ में, रीढ़ में,

नासिकाग्र में, नासिकाग्र में, सहस्रार में, सहस्रार में ।
पूरे शरीर में ठंढक का अनुभव करें । मानो पूरा शरीर प्रति क्षण पहले से अधिक ठंढा होता जा रहा है ।
ऐसा अनुभव करें कि आप जाड़े की रात्रि में खुले बदन मैदान में सोये हुये हैं । उस स्थिति में आपको कैसा अनुभव होगा ?
पुन: ठंढक का अनुभव करें । उसका अपने शरीर पर अनुभव करें । मन ही मन कहें– मैं ठंढक का अनुभव कर रहा हूँ । अब दाहिने तलवे में ठंढक महसूस करें, दाहिने तलवे में ठंढक महसूस करें, फिर बायें तलवे में, बायें तलवे में, रीढ़ में, रीढ़ में, नासिकाग्र में, नासिकाग्र में, सहस्रार में, सहस्रार में, सम्पूर्ण शरीर में, सम्पूर्ण शरीर में, सम्पूर्ण शरीर में, सम्पूर्ण शरीर में ठंढक महसूस करें, सम्पूर्ण शरीर में ठंढक महसूस करें । अब अपने सम्पूर्ण शरीर में ठंढक महसूस करें । ठंढक का अनुभव याद करें । ठंढक के किसी पुराने अनुभव को याद करें और उसे अपने मन-शरीर पर आरोपित करें ।
दर्द के किसी अनुभव की याद करें ।
दर्द के किसी अनुभव की याद करें ।
दर्द को स्पष्ट रूप से याद करें ।
अपनी इच्छाशक्ति से दर्द का अनुभव करें । अपनी सम्पूर्ण चेतना को दर्द के स्थान पर ले जायें और वहाँ दर्द का अनुभव करें । दर्द की याद करें और दर्द का अनुभव करें । अपने अनुभव को गहन करें । इतना गहन करें कि आप उस दर्द से व्याकुल हो जायें । जहाँ दर्द की अनुभूति हो रही है, उस स्थान पर अपने मन को जल्दी से ले जायें । दर्द महसूस करें । दर्द के प्रति अपनी जागरूकता को गहन बनायें । मन को अन्तर्मुखी बनायें । इच्छाशक्ति और मन की सहायता से दर्द महसूस करें ।
शरीर के किसी एक अंग या पूरे शरीर में दर्द महसूस करें । दर्द के प्रति अपनी जागरूकता बढ़ायें और मन को अन्तर्मुखी बनायें ।
अपनी सम्पूर्ण इच्छाशक्ति को एकाग्र करके दर्द का अनुभव करें ।
अब आनन्द की भावना का चिन्तन करें ।
आनन्द की अनुभूति का स्मरण करें ।
भूतकाल की किसी आनन्दानुभूति का स्मरण करें । यह आनन्द आपके

किसी भी ज्ञानेंद्रिय (स्वाद, श्रवण, दृष्टि आदि) से संबंधित हो सकता है। आनन्द के किसी भी अनुभव पर विचार करें। आनन्द के किसी भी अनुभव पर विचार करें। इतना अधिक विचार करें कि आनन्द तथा उसकी अनुभूति एक हो जायें। चेतना की गहराई में जायें और अपनी इच्छाशक्ति से भूतकाल की किसी आनन्दानुभूति या इच्छित आनन्दानुभूति के प्रति जागरूक हो जायें।

आनन्द की अनुभूति को शीघ्रता से मन के सामने लायें और इससे तादात्म्य स्थापित करें। चेतना की गहराई में उतरें और समग्र इच्छाशक्ति से आनन्द की अनुभूति करें। अपनी चेतना की जाँच करें–

क्या आप जाग रहे हैं?

क्या आप सो रहे हैं?

या मेरी बातों को ध्यान से सुन रहे हैं?

अब अपने शरीर के अतीन्द्रिय केन्द्रों (चक्रों) का अनुसन्धान करें।

मूलाधार गुदाद्वार एवं मूत्रेन्द्रिय के बीच या योनि के ठीक नीचे है।

स्वाधिष्ठान रीढ़ की हड्डी के सबसे निचले भाग में है।

मणिपुर नाभि के ठीक पीछे मेरुदण्ड में है।

अनाहत छाती के पीछे मेरुदण्ड में है।

विशुद्धि गर्दन में है, उस जगह जहाँ से प्रमस्तिष्क संरचना (cerebral structure) का प्रारंभ होता है।

आज्ञा भ्रूमध्य के पीछे है जहाँ रीढ़ की हड्डी का सबसे ऊपरी सिरा है। यह ज्ञान का केन्द्रस्थल है।

बिन्दु सिर के पीछे है जहाँ चोटी रहती है।

सहस्रार सिर के सबसे ऊपरी भाग में है।

अब इन केन्द्रों में चित्त को एकाग्र करें।

सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।

मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।

सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।

मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।
सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
इन चक्रों के सूक्ष्म प्रतीकों पर मन को एकाग्र करें।
मैं इन प्रतीकों के नाम लूंगा। आप इन केन्द्रों की स्थिति का पता स्वयं लगायेंगे।
एक लाल रंग का उल्टा त्रिकोण। उसके अन्दर एक गुलाबी रंग का साँप है जिसका फन नीचे की ओर त्रिकोण से थोड़ा बाहर निकला हुआ है। वह साढ़े तीन कुण्डली मारे बैठा हुआ है। उसके विषदन्तों से ज्वाला निकल रही है।
फिर, अचेतन अवस्था। एक निद्राजनक भूरी शून्यता।
फिर, पीला चमकीला कमल का फूल जिससे गर्मी निकल रही है।
फिर, एक अकेली, छोटी ज्योति।
फिर, अमृत की बूंदें, शीतलता की अनुभूति।
फिर, अर्द्धनिद्रा और मदहोशी की मनःस्थिति।
फिर, एक बहुत बड़ा कमल का फूल जिसमें असंख्य पंखुड़ियाँ हैं। मध्य में अंडे की आकृति का शिवलिंग स्थापित है।

इन प्रतीकों को पुनः दुहरायें–
एक लाल रंग का उल्टा त्रिकोण। गुलाबी रंग का साँप। वह साढ़े तीन कुण्डली मारे हुये बैठा है।
अचेतन अवस्था। पीला चमकीला कमल का फूल।
एक अकेली छोटी ज्योति।
अमृत की बूंदें और शीतलता की अनुभूति।
अर्द्ध चेतन अवस्था, बालचन्द्र और चाँदनी रात।
एक बहुत बड़ा असंख्य दलों वाला कमल जिसके अन्दर एक शिवलिंग है।
अब मैं इन चक्रों के नाम के साथ उनके बीज मंत्रों को बोलूँगा। आप उनका मानसदर्शन करने का प्रयत्न करें।
मूलाधार लं, स्वाधिष्ठान वं, मणिपुर रं, अनाहत यं, विशुद्धि हं, आज्ञा ॐ, बिन्दु ॐ, सहस्रार ॐ।
सहस्रार ॐ, बिन्दु ॐ, आज्ञा ॐ, विशुद्धि हं, अनाहत यं, मणिपुर रं, स्वाधिष्ठान वं, मूलाधार लं।
अब मैं कुछ बिम्बों के नाम लूँगा। उनके प्रति जागरूक हो जायें। शिवलिंग, खड़े हुये ईसामसीह, टिमटिमाता हुआ एक चिराग, आम का बड़ा पेड़, ताड़ का लम्बा वृक्ष, सड़क पर दौड़ती हुई मोटर गाड़ी, जलती हुई आग, रंग बिरंगे बादल, पीले बादल, सफेद बादल, नीले बादल, तारों से भरा हुआ आकाश, चाँदनी रात, पूर्णिमा का चन्द्रमा, खड़ा हुआ एक कुत्ता, लेटी हुई बिल्ली, दौड़ता हुआ घोड़ा, छलाँग मारता हुआ हिरण, चलता हुआ हाथी, डूबता हुआ सूरज, उदय होता हुआ सूरज, समुद्र की लहरें, गिरजाघर में बजती हुई घण्टियाँ, गिरिजाघर के ऊपर क्रॉस का चिन्ह, गिरजाघर के अन्दर घुटने के बल बैठा हुआ पादरी, पूजा करता हुआ एक भक्त, हवाई जहाज, बालू से भरा हुआ समुद्र का किनारा, गरम बालू पर विश्राम करते हुए लोग, एक लाल त्रिकोण, 'राम नाम सत्य है' की आवाज करते हुये एक जन समूह मृतक शरीर को अर्थी पर लिये श्मशान घाट की ओर जा रहा है; श्मशान घाट में जलती हुई चिता, एक अति दुर्बल वृद्ध व्यक्ति, एक मोटर दुर्घटना, लाल त्रिकोण, सुनहला मकड़ी का जाला।
अब अपने शरीर को बिना कपड़े पहने हुये जमीन पर लेटे हुये देखें।

अब अपने भौतिक शरीर से बाहर अपना पारदर्शक शरीर देखें। अपने शरीर को देखें जो धूम्र वर्ण का हो गया है।
अब अपने प्रकाशयुक्त शरीर को देखें।
अब अपने मस्तिष्क के अन्दर जायें, मस्तिष्क की गहराई में प्रवेश करें। वहाँ एक छोटे सुनहले अंडे, प्रकाशयुक्त सुनहले अंडे को देखें। अब देखें– एक सुनहली चिड़िया, नदी का किनारा, नाव, नदी में चलती हुई नाव, खेते हुये मल्लाह, स्वच्छ जल, जल की लहरें, एक बड़ी झील में नीला कमल, एक बड़ी झील में लाल कमल, एक बड़ी झील में सफेद कमल, एक बड़ी झील में पीला कमल, एक पुराना घर, चिमनी से निकलता हुआ धुआँ, जाड़े के दिनों में एक घर में जलती हुई आग, एक मगर, एक बड़ा चीता, स्वच्छ जल में तैरती हुई मछली, एक हाथी, एक भयंकर काला सर्प, एक झील में नील कमल।
अब ऐसा अनुभव करें कि आपकी नाभि से एक स्वर्णिम डोरी निकल रही है। उसके अंतिम छोर पर आपका पारदर्शी शरीर स्थित है।
अपने भौतिक शरीर से पारदर्शी शरीर को देखने की कोशिश करें।
अपने पारदर्शी शरीर से भौतिक शरीर को देखने की कोशिश करें।
इसे बार-बार देखें।
अब अपनी रीढ़ की हड्डी के भीतर सुषुम्ना को देखें।
अनुभव करें कि रीढ़ की हड्डी में कोई चीज ऊपर की ओर सरक रही है।
अपने शरीर को देखें जैसे मैं आपके शरीर को बाहर से देखता हूँ।
अपने सम्पूर्ण शरीर को चोटी से एड़ी तक देखें।
अपने सम्पूर्ण शरीर को चोटी से एड़ी तक देखें।
अपने सम्पूर्ण शरीर को चोटी से एड़ी तक देखें– एक-एक अंग को देखें।
शरीर के प्रत्येक अंग को देखें–
सिर, धड़, गर्दन, दाहिनी भुजा, बायीं भुजा, दाहिना पैर, बायाँ पैर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर।
अपने सम्पूर्ण शरीर को देखने की कोशिश करें। जैसे मैं आपके शरीर को देख रहा हूँ।
अब पुनः अपने भौतिक शरीर से स्वर्णिम डोरी के अन्तिम छोर में अपने पारदर्शी शरीर को देखें।

पारदर्शी शरीर में आँख, नाक, कान आदि की स्पष्ट रूपरेखा नहीं है। बस, एक सामान्य रूपरेखा है इस शरीर की।

इस पारदर्शी शरीर में से प्रकाश भी देखा जा सकता है।

अपने पारदर्शी शरीर से अपना भौतिक शरीर देखने का प्रयत्न करें।

अपने पारदर्शी शरीर से अपना भौतिक शरीर देखने का प्रयत्न करें।

मानो आप अपने भौतिक शरीर को उससे बाहर रहकर देखने का प्रयत्न कर रहे हैं।

अपने सिर को देखें, छाती को, उदर को, हाथों को, पैरों को देखें। पूरे शरीर को देखें।

अब ऐसा अनुभव करें कि आप अपने भौतिक शरीर को उसके बाहर से, अपने पारदर्शक शरीर से देख रहे हैं। आप अपने भौतिक शरीर को उसके बाहर से, अपने पारदर्शक शरीर से देख रहे हैं।

अब अपने भौतिक शरीर से स्वर्णिम डोरी के अंतिम सिरे को देखें।

अंतिम सिरे पर अपना पारदर्शी शरीर देखने की कोशिश करें।

उसमें आंख, कान आदि की स्पष्ट रूपरेखा नहीं है। शरीर की सामान्य रूपरेखा को देखें।

इस पारदर्शी शरीर के आगे आकाश भी देखा जा सकता है।

अब अपने आपको विभिन्न आसनों का अभ्यास करते हुए देखें।

योगमुद्रा, शशांकासन, सुप्तवज्रासन, भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, सर्वांगासन, हलासन, मत्स्यासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, शीर्षासन, शवासन, पद्मासन।

अब अपने आपको चिदाकाश पर ध्यान करते हुये देखें।

अब अपने-आपको पद्मासन में बैठे हुए चिदाकाश पर ध्यान करते हुए देखें।

अब देखें एक ध्यानस्थ योगी को, गेरुए वस्त्र पहिने हुए एक संन्यासी को, पद्मासन में बैठे हुए बुद्ध भगवान को, खड़े हुए ईसामसीह को, घुटने के बल बैठी हुइ मरियम को, प्रकाशयुक्त सलीब (क्रास) को।

अब अपने भौतिक शरीर में आ जायें।

अब अपने भौतिक शरीर में आ जायें।

अब अपनी जीवन-शक्ति का पता लगायें।

अपनी जीवन-शक्ति के प्रति जागरूक हो जायें।
अपने प्राण-शक्ति के प्रति सजग रहें।
प्राण-शक्ति के प्रति सजग रहें।
प्राण-शक्ति का अनुभव ताप के रूप में करें।
गति के रूप में इसका अनुभव करें।
अपने चेहरे के चारों तरफ अपने प्रभामण्डल (aureola) को देखें– चाहे शरीर के बाहर से या अन्दर से।
प्रभामण्डल को पहचानें।
इसका रंग पीला है या हरा? बैंगनी? सफेद? गहरा पीला? क्या सुनहरा पीला, गुलाबी, लाल, भूरा या काला?
अपने प्रभामण्डल को स्पष्ट रूप से देखने की कोशिश करें।
अपने को विभिन्न कोणों से देखें।
मेरुदण्ड और उसके अन्दर इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना को देखें जो लाल सफेद और नीले रंग में हैं।
अब देखें कि कौन नाड़ी कहाँ है? कौन सी नाड़ी लाल है? कौन सफेद है और कौन नीली? कौन नाड़ी किस तरफ है?
अब अपने बिन्दु चक्र पर आयें। वहाँ 'नाद' का पता लगायें।
उस नाद को सुनने की कोशिश करें।
अनंत विशाल समुद्र, हर भरा जंगल जहाँ काले सर्प, सिंह और बकरियाँ बड़े प्रेम से साथ-साथ रहते हैं। वहीं एक झोपड़ी है। वहीं एक झोपड़ी है। उसके सामने एक ऋषि समाधिस्थ अवस्था में बैठे हुए हैं।
ॐ का अनुभव करें।
सर्वत्र ॐकार ध्वनि का अनुभव करें।
सर्वत्र ॐकार ध्वनि का अनुभव करें।
ॐ के रूप पर चित्त को एकाग्र करें।
ॐ के रूप पर चित्त को एकाग्र करें।
ॐ के रूप पर चित्त को एकाग्र करें।
ॐकार की ध्वनि सुनें।
अब यज्ञाग्नि का ख्याल करें। अग्निकुण्ड से धुआँ उड़ रहा है; फूल तथा अन्य द्रव्यों की मनमोहक सुगंध।

अपने आप के प्रति सजग हो जायें और अपने से प्रश्न करें–
'क्या मैं अपने आप के प्रति सजग हूँ ?
क्या मैं सो रहा हूँ ?
क्या मेरी चेतना स्वामी जी की चेतना के साथ मिली हुई है ?'
अब अपने शरीर का ख्याल करें।
अंग-प्रत्यंग को देखें, सम्पूर्ण शरीर को देखें।
दाहिने हाथ का अँगूठा, पहली अंगुली, दूसरी, तीसरी और चौथी अंगुली। हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, बगल, कमर, कूल्हा, घुटने के पीछे की नस, जांघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर की अंगुलियाँ, पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी अंगुली।
अब अपने सम्पूर्ण शरीर को ऊपर से देखें। अपने सम्पूर्ण शरीर को ऊपर से देखें।
अपना चेहरा, नाक, आँख, भौंहें, सिर, दांत, आपका शरीर।
शरीर के ऊपर और नीचे का भाग।
इन्हें स्पष्टता से देखें जैसे कि मैं स्पष्टता से देख रहा हूँ।
अब अपनी इन्द्रियों को देखें।
पांच कर्मेन्द्रियाँ– दाहिना हाथ, बायाँ हाथ, दाहिना पैर, बायाँ पैर, जबान, गुदा, प्रजनन अंग।
पांच ज्ञानेन्द्रियाँ– दाहिनी आँख, बायीं आँख, दाहिना कान, बायाँ कान, नाक, जिह्वा, त्वचा जो पूरे शरीर पर है।
अब अपने मन के बारे में सजग हो जायें। मन जिसके द्वारा आप सब कुछ जानते हैं, उसके प्रति सजग हो जायें। अपनी जागरूकता के प्रति सजग हो जायें।
अपने प्रति सजग हो जायें। अपने प्रति सजग हो जायें। इस बात के प्रति सजग हो जायें कि आप योग निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं। इस बात के प्रति सजग हो जायें कि आप योग निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं। अपने अन्दर देखें तथा अपने शरीर में प्राणशक्ति की सत्ता के प्रति जागरूक हो जायें। प्राणशक्ति के रूप हैं ताप और गति। फिर अपने अन्दर की ओर देखें और चेतना की सत्ता के प्रति जागरूक हो जायें। चेतना द्वारा ही आप योग निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं। अपने

अन्दर की ओर देखें और चेतना की सत्ता के प्रति जागरूक हो जायें जिसके द्वारा आप योग निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं।
अपने अन्दर देखें और जागरूक हो जायें अपने मस्तिष्क के केन्द्र में एक सुनहरे अंडे के प्रति– एक सुनहरा अंडा जो बहुत छोटा है, बहुत छोटा है तथा जो मानव की सर्वोच्च चेतना का केन्द्र है। सुनहरा अंडा, अत्यन्त छोटा, बहुत छोटा अंडा– जो सर्वोच्च चेतना का केन्द्र है। सुनहरा अंडा– बड़ा नहीं, बहुत छोटा जो मानव की सर्वोच्च चेतना का केन्द्र है।
अब अपने आपको साक्षी भाव से देखने की कोशिश करें।
अपने आप को साक्षी भाव से देखने की कोशिश करें।
अपने आप से कहें– 'मैं यह शरीर नहीं हूँ, मैं इन्द्रियाँ नहीं हूँ, मैं मन नहीं हूँ, मैं प्राण नहीं हूँ, मैं विचार नहीं हूँ, मैं जागरूकता नहीं हूँ, मैं यह शरीर नहीं हूँ, मैं भारीपन नहीं हूँ, मैं पीड़ा नहीं हूँ, मैं ठंढक नहीं हूँ। मैं मन नहीं हूँ, मैं कर्म नहीं हूँ, मैं शरीर नहीं हूँ, मैं इंद्रियाँ नहीं हूँ, मैं मन नहीं हूँ, मैं चेतना नहीं हूँ, मैं प्राण नहीं हूँ, मैं भावना नहीं हूँ, मैं अनुभव नहीं हूँ, शारीरिक, मानसिक, अतीन्द्रिय, अचेतन– कोई भी वस्तु मैं नहीं हूँ।
मैं अमर आत्मा हूँ।'
बार-बार अपने मस्तिष्क की गहराई में जायें और अपने अंदर उस सुनहरे अंडे को देखें।
अपने को उस अंडे में देखने का प्रयत्न करें।
बार-बार अपने मस्तिष्क की गहराई में जाने का प्रयत्न करें। उस सुनहरे अंडे के अन्दर देखें तथा उसके और अपने बीच तादात्म्य स्थापित करें।
अपने अन्दर उस अंडे को देखें।
अपने को उस अंडे की तरह देखें।
दुबारा अपने से कहें–
मन, शरीर, इन्द्रियाँ, कर्म, प्रकृति और प्रत्येक वस्तु जो शारीरिक, मानसिक, अतीन्द्रिय या अचेतन है– इन सबसे परे मैं इस सुनहरे अंडे के रूप में हूँ।
अपने भौतिक शरीर के प्रति जागरूक हो जायें। अपने भौतिक शरीर से बाहर होकर, अलग होकर इसे (भौतिक शरीर को) देखें। अपने

भौतिक शरीर को इस प्रकार देखें, मानो आप इसे बाहर से देख रहे हैं। अपने मस्तिष्क के अन्दर जायें। अपने मस्तिष्क के केन्द्र में जायें। चमकदार सुनहरा अंडा आपके अन्दर की वैश्व चेतना है। उस पर मन को एकाग्र करें तथा उसके प्रति जागरूक हो जायें।

अपनी सत्ता के केन्द्र में इस सुनहरे अंडे को देखें। इसके प्रति जागरूक हो जायें और अपने से कहें–

मैं वही हूँ, मैं वही ब्रह्म हूँ, सोहं।

अपने संकल्प को तीन बार दुहरायें।

(विराम)

हरि ओम् तत्सत्।

हरि ओम् तत्सत्।

योग निद्रा का अभ्यास समाप्त हुआ।

सत्तरहवाँ अध्याय

अन्तर्मौन

संस्कृत में 'अंत:' का अर्थ है– अन्दर और 'मौन' का अर्थ है– शान्त। अन्दर में शान्त रहने की कला का नाम है– अन्तर्मौन। अन्तर्मौन एक उच्च कोटि की साधना है। इसमें साधक आंतरिक शांति प्राप्त करने के साथ-साथ उस आन्तरिक कोलाहल के प्रति भी सजग हो जाता है जिससे उसे शान्ति प्राप्त करने में बाधा पहुँचती है।

दैनिक जीवन में हमारा मस्तिष्क निरंतर बहिर्मुखी रहता है। हम अपने से बाहर की ही चीजों को देखने-सुनने में लगे रहते हैं। अपने अन्दर घटित होने वाली बातों को समझ ही नहीं पाते। अन्तर्मौन का अभ्यास इस स्थिति को उलट देता है। तब हम (चाहे थोड़े ही समय के लिए) अपने मन की क्रियाओं को देख-समझ सकते हैं। अन्तर्मौन उन स्थायी साधनाओं में से एक है जिसका अभ्यास साधक सहज ही चौबीसों घंटे कर सकता है। अपने आंतरिक परिवेश, विचार तथा संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं के प्रति जागरूक रहकर मनुष्य अपने व्यक्तिगत विकास की अधिकतम सीमा तक पहुँच सकता है। इससे वह अपने विवेकी और अविवेकी मन की क्रियाओं को भी समझ लेता है। साथ ही इस बात की भी असलियत समझ में आ जाती है कि कोई व्यक्ति कैसे सोचता है और कैसे विभिन्न क्रियाकलाप करता है।

अन्तर्मौन अपने आन्तरिक व्यक्तित्व को समझने का पहला कदम है। यद्यपि यह अभ्यास प्रतिदिन अधिक से अधिक एक घंटे ही किया जाता है पर अभ्यास के बाद भी इसका प्रभाव बना रहता है और व्यक्ति अपने'अव्यक्त व्यक्तित्व' को स्वत: जानने लगता है। वह यह समझ जाता है कि जीवन की विभिन्न परिस्थितियाँ उसके लिए क्या-क्या अर्थ रखती हैं तथा उन परिस्थतियों के प्रति वह ईमानदारी से कौन-कौन सी प्रतिक्रियायें व्यक्त करता है।

अन्तर्मौन का अभ्यास अनेक अवस्थाओं में बाँटा जा सकता है यथा–

क. आसपास की आवाजों और घटनाओं के प्रति सजग होना।

ख. बाह्य वातावरण के उद्दीपनों से अपने को विरत करके मन की कार्यप्रणाली को समझना– मन क्या सोच रहा है, किस प्रकार प्रतिक्रियायें कर रहा है? अवचेतन मन से किस तरह के प्रतिबिम्ब आ रहे हैं?

ग. साधक इच्छानुसार कभी उपर्युक्त पहली अवस्था में रहता है और कभी दूसरी अवस्था में।

घ. साधक इच्छानुसार विचारों का सर्जन और विसर्जन (विघटन) करता है।

ङ. सभी विचारों का दमन तथा शून्य की अनुभूति।

च. सहज ध्यान।

अन्तर्मौन अपनी जागरूकता को प्रशिक्षित करने की विधि है। इसके द्वारा व्यक्ति मन की प्रक्रियाओं को समझता तथा उन पर नियंत्रण रखना सीखता है। 'मैं क्या सोच रहा हूँ? मेरे मनःक्षेत्र में क्या घट रहा है? इन प्रश्नों पर चिन्तन करके अन्तर्मौन का अभ्यास शुरू किया जा सकता है।

दिन में इसका बार-बार अभ्यास करने पर साधक को साक्षी भाव से रहने की स्वभाविक आदत बन जाती है। तब उसे मैं कौन हूँ, मैं क्या कर रहा हूँ– आदि प्रश्नों के उत्तर स्वतः मिलने लगते हैं।

इस अभ्यास में साधक अपने आन्तरिक कोलाहल के प्रति सजग हो कर नीरवता की उस वाणी को, ध्वनि को जानने-समझने लगता जो शाश्वतत्व के गीत गाती है।

अन्तर्मौन का सम्पूर्ण कक्षा प्रतिलेखन

पहली अवस्था—

अन्तर्मौन का अभ्यास प्रारम्भ होता है।

कृपया अपनी आँखें बन्द कर लें और इन्हें पूरे समय तक बन्द रखें।

आसन स्थिर, शारीरिक स्थिति स्थिर, आँखें बन्द और मेरुदण्ड सीधा रखें । मैं अंतर्मौन के लिए तैयार हूँ– ऐसी होनी चाहिए आपकी मन:स्थिति । प्राथमिक अभ्यास में आन्तरिक चीजों के प्रति सजगता नहीं, बल्कि विभिन्न बाह्य ध्वनियों तथा विभिन्न संवेदनाओं, विभिन्न इन्द्रियग्राह्य अनुभवों के प्रति सजगता होगी ।

बाह्य ध्वनियों और संवेदनाओं पर एकाग्र होने की कोशिश करें और यह न सोचें कि ये ध्यान में बाधक हैं ।

पूरी एकाग्रता एवं बाह्य सजगता के साथ आप यह अभ्यास तब तक करें जब तक आपको अपने मस्तिष्क के वातावरण में परिवर्तन न लगने लगे । अपनी इन्द्रियों के साथ लड़ाई नहीं करें, अपनी ऐन्द्रिय अभिव्यक्तियों और अनुभवों के साथ भी लड़ाई न करें । सजग होकर उनके द्रष्टा बने रहें । आपको इन बातों के प्रति भी सजग रहना होगा कि 'मैं सजग हूँ, मैं सुन रहा हूँ । मैं स्वामीजी के निर्देशों को सुन रहा हूँ' आदि ।

इस प्रकार मन तथा इन्द्रियों को इंद्रियानुभवों से अप्रभावित रहने का प्रशिक्षण देना होगा ।

ध्वनि, स्वाद, स्पर्श अथवा कोई भी प्रतिक्रिया किसी भी कीमत पर आपको बाधा नहीं पहुँचाने पाये, चाहे आप बाहरी ध्वनियाँ सुनें या भौतिक शरीर में विभिन्न संवेदनाओं (खुजली, आलस्य आदि) का अनुभव करें । साधना का यह पहलू प्रत्याहार के नाम से जाना जाता है । यह राजयोग की पाँचवीं अवस्था है ।

प्रत्याहार का अर्थ है– इन्द्रियों को अन्दर समेट लेना । गीता के दूसरे अध्याय में कहा गया है–

"जैसे कछुआ अपने शरीर को ढांचे (shell) में समेट लेता है, उसी प्रकार अपनी इन्द्रियों को भी समेटना चाहिये ।"

इन्द्रियों को बलात् नहीं समेटना है, बल्कि एक विधि द्वारा उन्हें उनके विषयों से हटा लेना चाहिये । इन्द्रियों का शमन द्रष्टा या साक्षी भाव के साथ किया जाना चाहिये ।

इन्द्रियों को इस भाव से शान्त करना चाहिये– 'मैं कान और ध्वनि के बीच घट रहे अनुभवों का द्रष्टा मात्र हूँ' ।

'मैं' इस प्रक्रिया में एक अन्य व्यक्ति है ।

पहला व्यक्ति है कान; अनुभव किया जाने वाला पदार्थ (ध्वनि आदि) दूसरा व्यक्ति है और 'मैं' तीसरा व्यक्ति है, जो इन्द्रियानुभव की इस प्रक्रिया का साक्षी है।

अन्तर्मौन की इस प्रथम अवस्था में आपको शांतिपूर्वक अत्यन्त स्पष्टता से तीन आयामों वाली इस सजगता को विकसित करना है– अनुभव करने वाला, अनुभव का विषय और दोनों का द्रष्टा।

कान और ध्वनियाँ, आँख और रूप, त्वचा और स्पर्श, जिह्वा और स्वाद, नासिका और गंध– इनमें अनुभव करने वाले हैं कान, आँख, त्वचा, जिह्वा और नासिका तथा उनके अनुभव के विषय हैं क्रमश: ध्वनि, रूप, स्पर्श, स्वाद और गंध। आपको इन्हें (विषयों को) ठीक-ठीक साक्षी की भाँति देखना है।

यह आपके इन्द्रियानुभव की अंतर्मुखता है और इसे आप किसी भी समय कर सकते हैं। बाह्य अनुभवों से तनिक भी घृणा नहीं करना है। उन्हें सिर्फ द्रष्टा भाव से देखते जायें, साक्षी का मनोभाव लेकर। कुछ क्षण के भीतर आप सुख, शान्ति और आनन्द का अनुभव करेंगे। ध्यान के लिए आप अपने को तैयार कर लेंगे।

इसका अभ्यास आप रात में करें, शाम को करें, दिन में करें, घर पर करें, कार में बैठे-बैठे करें, रिक्शे में बैठे-बैठे करें, मित्रों के बीच करें, या अकेले में करें।

इसके अभ्यास के लिए शांति या नीरवता की आवश्यकता नहीं है। शोर होने दें, व्यवधानों को उपस्थित रहने दें। शरीर स्थिर न हो, तब भी कोई बात नहीं– बस, आप मूक साक्षी बने रहें।

द्वितीय अवस्था—

अंतर्मौन की दूसरी अवस्था में आपको अपनी विचार प्रक्रिया के प्रति सजग होना है।

आप को सहज विचार प्रक्रिया, स्वयं से आने-जाने वाले विचारों के प्रति सजग होना चाहिये।

आपको कोई विचारधारा निर्मित नहीं करनी है।

उसे स्वत: आने-जाने दें।

आपको अपने मन से होकर गुजरने वाले प्रत्येक विचार का एक मूक साक्षी बने रहना है और जब आप एक विशेष विचार के प्रति सजग होते हैं तो आपको अपने मन से कहना है–'हाँ, मैं अमुक बात के विषय में सोच रहा हूँ'।

और अगर मस्तिष्क उस विचार से मुक्त हो गया हो तो आपको उस स्थिति से भी अवगत रहने की कोशिश करनी चाहिये।

प्रारंभिक अभ्यासी विचार-शून्यता की स्थिति का अनुभव कर सकते हैं। आप अपने विचारों की प्रक्रिया को देख रहे हैं। आप को गुजरते हुये विचारों के प्रति भी निश्चित जानकारी रखनी है। आपको पूरे समय सतर्क रहना है। इसका उद्देश्य विचारों को रोकना नहीं, उन्हें जानना है। यदि कभी आप अन्यमनस्क हो गये हों तो आप अपनी चेतना को इस प्रकार पुनर्जागृत करें -

'मैं कुछ समय के लिये अन्यमनस्क हो गया था, इस बीच मैं अमुक बात सोच रहा था';

लेकिन जितने भी विचार स्वत: आ रहे हैं, आपकी चेतना के स्तर पर उतर रहे हैं, उन सब के प्रति सजग रहने की कोशिश करें।

वे विचार अच्छे हो सकते हैं, बुरे भी हो सकते हैं।

परंतु, वे कहीं बाहर से नहीं आ रहे हैं।

वे आपके आंतरिक व्यक्तित्व की ही अभिव्यक्तियाँ हैं।

वे आपकी ही अभिव्यक्तियाँ हैं।

पहली क्रिया में, पहले अभ्यास में इन्द्रियानुभव बाहर से आये थे।

इस क्रिया में विचार आपके ही आंतरिक व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति हैं। इसलिये, जब आप अपने ही विचारों को देख पाते हैं, तो आप अपने व्यक्तित्व में अंतर्निहित तथ्यों से भी परिचित हो जाते हैं।

यदि देर तक लगातार बुरे विचार आपके चेतन मस्तिष्क पर नहीं उभरते तब आप या तो जीवमुक्त संत बन गये हैं या आप अपने विचारों को शक्ति लगा कर दमित कर रहे हैं। अवचेतन मन के दमन की जंजीरें अभी तक नहीं खुली हैं।

इसलिए याद रखें कि आप एक साधक हैं।

याद रखें कि आप धारणा के अभ्यासी हैं।

याद रखें कि आप प्रत्याहार के अभ्यासी हैं।
बुरे विचार, अच्छे विचार आयेंगे ही।
उन्हें आना चाहिये और आपको उन्हें आने देना चाहिये।
यदि विचार आयें, तो उन्हें उदासीनता से देखें, एक दर्शक या साक्षी की भाँति, पूर्ण तटस्थता के साथ।
यह अन्तर्मौन की दूसरी अवस्था है। यही राजयोग के अन्तर्गत प्रत्याहार का अभ्यास है।
राजयोग का प्रथम चरण है यम, तब नियम, फिर आसन, तब प्राणायाम और बाद में प्रत्याहार।
प्रत्याहार का अर्थ है वापस होना, प्रत्याहार माने वापसी, प्रत्याहार का अर्थ हुआ समेटना।
मैं आपसे स्पष्ट कहता हूँ। ध्यान से सुनें।
यदि आपके मन में बुरे विचार आयें तो उन्हें रोकें नहीं, तुरन्त सतर्क हो जायें। इस बात के प्रति सजग हो जायें कि आप हत्या, बदला, डकैती आदि के विषय में सोच रहे हैं।
यदि बुरे विचार आते हैं और आप उन्हें एक ओर हटा देते हैं, उनका दमन कर देते हैं तो वे दूसरी बार और अधिक शक्ति के साथ आक्रमण करेंगे।

तृतीय अवस्था—
जो कुछ भी आप सोचना चाहते हों, सोचें।
अपनी रुचि के विचार को इच्छा पूर्वक मन में लायें, उसके सहज आगमन की प्रतीक्षा न करें।
उस पर कुछ देर सोचें, फिर उसकी उपेक्षा कर दें।
सहज विचारों को अभिव्यक्त न होने दें।
अपनी इच्छा से किसी विचार को मन में लायें, उस पर कुछ देर तक सोचें और फिर अचानक एक झटके के साथ उसे अपने से दूर फेंक दें।
अगर कोई सहज विचार– अच्छा या बुरा, मनोरंजक या प्रेरक, अपने को प्रकट करना चाहे तो उसे प्रकट न होने दें। कहें–'नहीं, मैं तुम्हें अभी नहीं चाहता।

तब दूसरा विचार इच्छापूर्वक लायें, उसे कुछ देर तक रहने दें, उस पर कुछ देर तक सोचें और फिर अचानक हटा दें।

तब तीसरे विचार को इच्छापूर्वक लायें। उसे कुछ देर तक रहने दें। और जब आप इस पर कुछ देर सोच चुकें, तब इसे हटाकर स्वेच्छा से दूसरे विचार मन में ले आयें।

मैं व्यक्तिगत रूप से अनुभव करता हूँ कि अच्छे विचारों से मुक्त होना कठिन नहीं है, पर बुरे विचार बड़े हठीले होते हैं। एक बार दिन में अगर आपके मन में बुरे विचार आ गये तब उनसे पीछा छुड़ा पाना बड़ा कठिन है। इसलिये मानसिक प्रशिक्षण इस प्रकार का होना चाहिये– आप स्वेच्छा से एक बुरा विचार उत्पन्न करें, इस पर एक मिनट तक मनन करें, फिर एकाएक उसे हटा दें।

यदि आप कुछ दिन या एक महीने तक यह अभ्यास करें तो आपका मन निश्चित रूप से, अवचेतन की गहराइयों से उभर कर आनें वाले बुरे विचारों को हटा कर फेंक देने का आदी बन जाएगा।

यह बहुत महत्वपूर्ण बात है।

अन्तर्मौन के इस महत्वपूर्ण अभ्यास का ज्ञान कम लोगों को है।

यह वास्तव में बहुत बड़ी बात है यदि साधक बुरे विचारों के मन में आते ही उन्हें हटा देने की क्षमता प्राप्त कर ले।

मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ कि अच्छे विचारों को जागृत करना नये आध्यात्मिक साधकों के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि नहीं है, परतु बुरे विचारों को मन की सतह पर उभरते ही हटा देना सचमुच एक बड़ी उपलब्धि है। और बुरे विचार तो निश्चित रूप से आते हैं।

चतुर्थ अवस्था–

इस अवस्था में सहज विचारों को जागृत करना है। अब आप अपनी इच्छा से विचार नहीं ला रहे हैं, (जैसा कि आप ने अभ्यास की तीसरी अवस्था में किया था)।

अब आप विचारों को सहजतापूर्वक आने दें और उन पर कुछ देर तक सोचें। जब उन्हें दूर करने की बात सामने आये तो उन्हें स्वेच्छा से दूर करें, सहजता से न जाने दें।

केवल उनका आगमन ही सहज होगा, वे अपने आप नहीं, वरन् आपकी इच्छा से जायेंगे। यह चौथी अवस्था है।

इस अभ्यास में मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूँ कि सिर्फ बुरे विचारों को ही आने दें।

अच्छे और बुरे, हर तरह के विचारों को आपके अवचेतन मन से ऊपर चेतन मन के तल पर सहज ढंग से आने की अनुमति मिलनी चाहिये।

राजयोग में अन्तर्मौन को प्रत्याहार कहते हैं।

और जब आप अंतर्मौन का अभ्यास भली प्रकार करने लगें तब धारणा का अभ्यास प्रारम्भ कर सकते हैं। इन्द्रियों को उनके विषयों से समेटे बिना किसी भी व्यक्ति के लिए ध्यान कर पाना असम्भव है। प्रत्याहार का अभ्यास पूरा किये बिना न तो कोई ध्यान कर सकता है और न ही उसे इसकी चेष्टा करनी चाहिये। जब प्रत्याहार पूरा हो जाता है तब धारणा शुरू होती है। धारणा के पूरा होने पर ही हम ध्यान की बात सोच सकते हैं। जिस क्षण ध्यान का उदय होता है, समाधि जीवन की देहरी पर ही खड़ी हो जाती है—आपके बहुत निकट।

पंचम अवस्था—

यह अंतर्मौन की पाँचवी अवस्था है।

अब अपने अन्दर देखें।

चिदाकाश के प्रति आन्तरिक आकाश के प्रति सजग हो जायें।

चिदाकाश के प्रति सजग हो जायें जो एक निराकार रंगहीन आकाश है मानस (Psychie) का।

अब विचारों के प्रति सजग हो जायें।

यदि मन में कोई विचार आये, तो बिना उस पर सोचे हुये उसे तुरन्त हटा दें।

सतर्क रहें—इसलिए कि जैसे ही कोई विचार आये उसे आप तुरन्त हटा दें।

आप विचार पर मनन न करें, उसे पहचानें ही नहीं।

एक विचार आता है, उसे हटा दें। उसे निकाल फेंकें।

यह वह स्थिति है जिसमें विचार-शून्यता का अभ्यास किया जाता है।

कोई विचार जो आपके चिदाकाश में आता है, कोई विचार जो अन्दर से अभिव्यक्त होता है, उसे हटा दें।

यदि विचारों के स्थान पर बिम्ब आदि आपकी चेतना पर उभरें, तो एक अन्य विधि अपनानी होगी और वह है आकार को आकारहीनता में बदलना।

मान लें कि आप चिदाकाश में देख रहे हैं। वहाँ न रंग है, न रूप। लेकिन बिम्बों की तरह, स्वप्न की तरह कुछ आकार चेतना की सतह पर स्पष्ट उभरते हैं। निश्चित ही वे आपके विचार नहीं हैं।

मान लें यह पक्षी, स्त्री, पेड़ या भू-खण्ड का दृश्य है।

मानो कैन्वस (canvas) पर बने हुये एक चित्र पर आपने एक बूँद जल डाल कर पूरे चित्र को मिटा दिया हो, उसी प्रकार इन आकारों को भी मिटा देना है।

इस तरह इस अवस्था में दो तरह की साधनायें हैं।

एक तो यह है कि आप चिदाकाश के प्रति सजग हैं और दूसरी यह कि यदि चिन्तन या कल्पना के रूप में कोई विचार आता है, तो आप उसे तुरन्त हटा दें। विचार-शून्यता की स्थिति बनाये रखें।

विचार-शून्यता की स्थिति बनाये रखें और इस बात के प्रति सतर्क रहें कि 'मैं कुछ नहीं सोचूंगा।'

यह अंतर्मौन की सच्ची स्थिति है जिसमें सभी विचार जो मन की सतह पर उभरना चाहते हैं, तुरंत हटा दिये जाते हैं। उन्हें अभिव्यक्त नहीं होने दिया जाता।

और आकार तथा बिम्ब जो चेतना की सतह पर प्रवाहित हो रहे हैं, उन्हें सही ढंग से चिदाकाश (जो आपका अतीन्द्रिय व्यक्तित्व है) की रूपहीनता में विलीन कर दें।

आपको एक ही बात के प्रति जागरूक रहना है–मैं कोई विचार नहीं चाहता, मैं कोई विचार नहीं चाहता, मैं किसी विचार के बारे में सोचना नहीं चाहता।

आपकी चेतना में मात्र एक विचार रह सकता है–'मेरे पास विचार नहीं हैं।'

अन्तर्मौन की प्रथम अवस्था में सामान्य रूप से, नितान्त उदासीन रहते

हुये तथा साक्षी भाव बनाये रखते हुये इन्द्रियानुभवों के प्रति सजग रहना है ।

दूसरी अवस्था में, विचारों का सतत आना-जाना ।

तीसरी अवस्था में, इच्छापूर्वक विचारों को बुलाना और इच्छापूर्वक हटा देना ।

चौथी अवस्था में, विचारों का सजग ढंग से आना परंतु उन्हें इच्छापूर्वक हटा देना ।

पाँचवी अवस्था में, कोई विचार प्रक्रिया नहीं । अपनी चेतना पर उभरने वाले प्रत्येक विचार को आप शीघ्र ही हटा देते हैं ।

आप अपने मन को कुछ भी सोचने की अनुमति नहीं दें ।

यदि मन ऐसा करना चाहे तो उसको रोक दें ।

यह पूर्ण अन्तर्मौन है ।

अपनी आँखें खोलें और शरीर को शिथिल रखें ।

अन्तर्मौन का संक्षिप्त कक्षा प्रतिलेखन

आराम से बैठें या लेट जायें ।

किसी प्रकार का मानसिक अवरोधन (inhibition) न होने दें ।

किसी अनुभव से घृणा न करें, किसी अनुभव के प्रति राग न उत्पन होने दें । किसी अनुभव के प्रति प्रतिक्रिया न व्यक्त करें ।

किसी प्रिय अनुभव या अनुभूति के प्रति प्रतिक्रिया न व्यक्त करें । इन्द्रियों की क्षमताओं को स्वतंत्र रूप से प्रवाहित होने दें ।

मन को विघ्नों से खींचें नहीं, बल्कि विचारों, ध्वनियों या अन्य किसी प्रकार के विघ्नों के पीछे मन को ले जायें ।

आपके मन की गहराइयों से विचार उत्तेजित होकर स्वत: स्फूर्त होते हैं ।

बिना उद्दीपन के विचार अथवा बाह्य ध्वनियों से उद्दीपित विचार ।

किसी भी बाधक ध्वनि को सजगता और एकाग्रता से सुनें ।

प्रत्येक विचार को एक साक्षी की तरह देखें मानो उन्हें आप अपने मस्तिष्क के एक कोने से देख रहे हों ।

'मैं सोच रहा हूँ ..., मैं सुन रहा हूँ.., मुझे यह संवेदना हो रही है' ।

अपनी एकाग्रता की प्रक्रिया को सुनते और साक्षी भाव से देखते जायें। आप अपने अतीत की पृष्ठभूमि से उद्दीपन तथा उत्तेजना रहित विचारों को उभरते हुए देखेंगे। महत्वहीन झाँकियाँ पलक मारते ही दिखेंगी। आप अगर सजग साक्षी नहीं हैं तो आपके लिये अपनी चेतना की द्रुत गति का अनुगमन कर पाना सम्भव नहीं होगा।

आप अपनी चेतना के स्वच्छन्द प्रवाह का अनुगमन करेंगे।

सहज, वांछित, अवांछित।

कभी-कभी मानसिक अवरोध होने के कारण कोई विचार नहीं आता। इसका यह अर्थ है कि चेतना अपने को अभिव्यक्त नहीं कर रही है। मन सोचता रहता है।

अभी भी आप सोच रहे हैं, हालांकि आप यह देख नहीं पाते।

विचार प्रक्रिया पर एक परदा पड़ा हुआ है। उसे हटा दें और एक के बाद दूसरे विचारों को देखते जायें।

वे भूत, वर्तमान आदि विभिन्न संदर्भों से सम्बन्धित हैं और बिजली की तरह प्रकट होंगे।

जब कोई विचार आता है तो उसे देखें और अपने मस्तिष्क में अंकित करें।

अनेक ऐसे विचार हैं जिन्हें आप याद नहीं करना चाहते, जिनसे आप दूर भागना चाहते हैं।

यह बहुत स्वाभाविक है।

विचारों से भागना हमारी मनोवैज्ञानिक प्रकृति है।

स्मृति या अतीत– प्रत्येक चीज दमित है।

यदि पर्दा उठा दिया जाय तो वह अपने को प्रकट कर सकती है और तब हर्ष और आनन्द की स्थिति आती है।

यदि अतीत की अभिव्यक्ति तटस्थ साक्षी भाव के अभ्यास के समय होती है तब आप कष्ट और लगाव से मुक्त रहते हैं।

सबसे मुख्य बात है अपने को देखना।

दूसरी है स्वतंत्रता को आने देना।

अभिव्यक्ति की सम्पूर्ण प्रक्रिया।

किसी विचार का विरोध न करें, हिचकें नहीं, किसी विचार के प्रति

अपराध की भावना न लायें।
विचारों पर स्वतंत्र परन्तु चौकस दृष्टि रखें।
आप विचार नहीं, बल्कि विचार के साक्षी हैं।
आपको पूर्ण तटस्थता की चेष्टा करनी होगी।
अपने को किसी विचार के साथ संयुक्त न करें, अपने को विचारों के साक्षी तथा अनुभवों के द्रष्टा की तरह अलग रखें।
आप विचार नहीं हैं, आप अपनी चेतना की ऊर्जा नहीं हैं। आप किसी विचार से घृणा नहीं करते। आप किसी विचार से लगाव नहीं रखते, आप किसी विचार को पसंद नहीं करते, आप किसी विचार को नापसंद भी नहीं करते। आप केवल उन्हें अभिव्यक्त होने देते हैं।
आप अपने को सोचते हुये नहीं देखते हैं।
अपने को सोचते हुये देखना कठिन है।
अचेतन रहकर सोचना आसान है। चेतन होकर सोचना कठिन है।
विचार प्रक्रिया सहज होती है।
कभी-कभी यह प्रक्रिया बाह्य प्रभावों से उत्तेजित होती है।
आपके व्यक्तित्व की गहराई से सहज विचार आते हैं।
मानसिक अवरोधन का पर्दा उठा दें, तब विचार सहज ही आयेंगे।
लेकिन अगर वे सहज ही नहीं आते, तब आप चिन्तन प्रक्रिया को उत्तेजित करें। जब चेतना उन्मुक्त होकर अपने को प्रकट करती है, जब मानसिक अवरोधन का आवरण पूर्णतः या अंशतः उठ जाता है, तब पहले भयानक विचार आते हैं।
अच्छे विचार बाद में आते हैं। यदि वे प्रारम्भ में ही आयें तो उसका श्रेय आपके सामाजिक व्यवहार और वातावरण को है; इस बात को है कि आपको भला और दयालु बनने की शिक्षा दी गई है।
लेकिन यह आपकी चेतना की सच्ची अभिव्यक्ति नहीं है।
यह आपकी चेतना, आपके व्यक्तित्व, आपके अतीत का नकारात्मक पक्ष है। इसे तो आना ही है अगर यह विचारों में न आया तो क्रियाओं में उभरेगा।
लज्जित या दुखी न हों। सम्पूर्ण प्रक्रिया के प्रति साक्षी बने रहें।
किसी विचार के साथ तादात्म्य स्थापित न करें। तटस्थ साक्षी बनें

रहें, चाहे सोने का विचार हो, उनींदेपन का विचार हो या कोई बाहरी विचार या किसी ध्वनि का विचार हो।

हमेशा कहें मैं 'एक साक्षी हूँ–मन में उठने वाले विचारों, आवाजों या इस वर्तमान अभ्यास के विचार का साक्षी हूँ।'

'कहें–'मैं जो कुछ सोच रहा हूँ, उसका मैं साक्षी हूँ'।

किसी भी विचार, किसी भी मूर्खतापूर्ण विचार के साक्षी बनें।

अपने अंदर या बाहर की, आपके चेतन मन या अवचेतन मन की किसी भी बात के प्रति अनवरत सजगता। आपके अंदर साक्षी चेतना है।

आपके अंदर साक्षी चेतना है। आपके अंदर साक्षी होने के प्रति सतत जागरूकता है।

जितना ही आप उस आंतरिक चेतना के निकट आते जायेंगे उतना ही आप द्रष्टा बनते जायेंगे।

यदि आप अपनी आन्तरिक चेतना को एक साक्षी के रूप में जागृत कर सकने में समर्थ हैं, तब आपके मन की कोई भी चीज आपकी दृष्टि से नहीं बच पायेगी। यहाँ तक कि पलकों का झपकना, खुजलाहट या ऐसे छोटे-मोटे विचार– सब कुछ आपके द्वारा देखे जा सकेंगे।

यदि आप अपनी आन्तरिक चेतना को सतर्क रख सकेंगे, तब आपसे सम्बन्धित कोई भी दृश्य आपकी दृष्टि से नहीं बच पायेंगे।

आपकी सम्पूर्ण चेतना आपके सामने प्रकट हो जायेगी।

सर्वाधिक प्रमुख बातें ये हैं–

आंतरिक चेतना को स्थिर रखें। आपको स्वयं अपने विचारों और अनुभवों को प्रकट करना चाहिये।

आपकी आंतरिक चेतना अनवरत रूप से सतर्क रहे। उसे शान्ति-अशांति, बाधाओं, वांछित-अवांछित विचारों पर निगाह रखनी चाहिये।

उसे बाहरी-भीतरी सभी अनुभूतियों, विचारों और चेतना के सभी आयामों पर दृष्टि रखनी चाहिये।

आपका मन जिस किसी भी चीज को सोचे, आपकी आन्तरिक चेतना को उसका द्रष्टा बनना है।

और यदि विचार किसी मानसिक अवरोध के कारण रुक गये हों, या कुछ भी मन में नहीं आता हो, तब भी आप इस बात के प्रति जागरूक

रहें कि विचार नहीं आ रहे हैं।

कोई पीड़ादायक स्थिति सामने आ सकती है– इसके साक्षी बने रहें। आप जो भी देख-सुन, जान-बूझ रहे हों उसके प्रति सजग रहें। सोचें–'मैं जानता हूँ, मैं अनुभव करता हूँ, मैं सुनता हूं, मैं देखता हूँ' आदि। यह अपने को पवित्र करने, अपने को देखने तथा आत्म-विश्लेषण का एक चमत्कार-पूर्ण अनुभव होगा जिसमें मन मुक्त होगा और चेतना जागरूक होगी। सोचते और देखते जायें। अपने विचारों के द्वार खोल दें। अपने अवचेतन मन को खोल दें। इसे देखते जायें। अब इस स्वतंत्रता के क्षेत्र से अपने मन को हटा लें क्योंकि अंतर्मौन का अभ्यास समाप्त हो गया है।

हरिः ॐ तत्सत्

अठारहवाँ अध्याय

अन्तर्धारणा

एकाग्रता क्या है ? अपनी मानसिक जागरूकता को एक बिन्दु पर स्थिर करने का नाम एकाग्रता है। इसी की पूर्णता है ध्यान। एकाग्रता में मन ध्येय वस्तु के अतिरिक्त अन्य चीजों के प्रति सजग नहीं होता।

एकाग्रता में एक शक्ति है। इसे हम एक उदाहरण से समझेंगे। एक औसत मनुष्य के मस्तिष्क की तुलना हम एक बल्ब से करें। बल्ब की किरणें सभी दिशाओं में जाती हैं। उसकी ऊर्जा फैलती है। यदि कोई बल्ब से पाँच फुट की दूरी पर है तो वह प्रकाश देखता है, परन्तु गर्मी महसूस नहीं करता यद्यपि बल्ब में प्रचुर ताप है। इसी तरह एक औसत मस्तिष्क में विशाल शक्ति अन्तर्निहित रहती है, परन्तु वह शक्ति बिखरी हुई होती है। ठहर कर एक विषय पर गहराई से चिन्तन करने के बदले मन एक के बाद दूसरी विभिन्न वस्तुओं पर दौड़ता रहता है। अधिकांश व्यक्ति इस शक्ति को उपयोग में लाना नहीं जानते।

हाल ही में विज्ञान ने एक यन्त्र का आविष्कार किया है जिसकी चर्चा अब तक विज्ञान की कहानियों में ही होती रही है। इसे लेसर कहते हैं। इसमें प्रकाश की किरणें एक साथ एक ही दिशा में जाती हैं। वे सब एक-दूसरे के अनुरूप ही तरंगित होती हैं। इनके प्रकाश का मूल स्रोत किसी बल्ब से अधिक शक्तिशाली नहीं होता लेकिन अगर हम लेसर किरणों से पांच फुट की दूरी पर भी खड़े हों तो भी यह किरणें हमारे शरीर के आर-पार छिद्र बना सकती हैं। यह संकेन्द्रित (concentrated) शक्ति है। संकेन्द्रित विचारशक्ति में भी बहुत शक्ति होती है। इससे उच्च-स्तरीय बोध होता है। इसमें दृश्यप्रपंचों के भीतर छिपे सत्य को देखने की भी शक्ति होती है। इसमें असम्भव की सीमा तक कार्य करने की क्षमता होती है। एकाग्र मन से कोई भी कार्य करना सम्भव

है। एकाग्र मन तनावों से भी मुक्त रहता है। पाठक स्वयं इसका अनुभव कर चुके होंगे। जब कोई किसी काम में तल्लीन हो जाता है, (उदाहरण के लिये किताब लें) तो उसे पूरा करने के बाद मन शान्त और तनाव-मुक्त हो जाता है।

ध्यान के संदर्भ में एकाग्रता सर्वथा अनिवार्य है क्योंकि यह मन को अकारण इधर-उधर नहीं भटकने देती। हमारे जीवन के प्रत्येक क्रिया-कलाप के लिए एकाग्रता का बहुत महत्व है क्योंकि उसके बिना किसी लक्ष्य पर नहीं पहुँचा जा सकता। इस कथन की सत्यता हम अपने आस-पास देखते ही हैं। एकाग्र मन से व्यक्ति सभी कार्यों को पूरी निपुणता के साथ सम्पन्न कर सकता है। केवल यही नहीं, एकाग्र मन से किया गया कोई भी कार्य आनन्ददायक हो जाता है।

जिस व्यक्ति में एकाग्रता की कमी है, जो एक कार्य करते समय दूसरी बातों को सोचता है, उससे भूलें होती हैं और काम पूरा करने में अधिक समय लगता है और यदि वह काम पूरा कर भी ले तो सदैव मानसिक द्वन्द्व की स्थिति में वह क्षुब्ध रहता है। उसे लगता है कि उससे समय काटे नहीं कट रहा है। वह कभी भोजन के समय के बारे में सोचता है, कभी अपनी दूसरी समस्याओं के बारे में। सारांश यह कि एकाग्रता की कमी से अप्रासंगिक विषयों पर हमारा समय व्यर्थ नष्ट होता है। अत: दैनिक कार्यकलापों और ध्यान दोनों में ही एकाग्रता की आवश्यकता है। अनेक अर्थों में हम औसत मनुष्य के मन की तुलना बिल्ली के बच्चे से कर सकते हैं। वह काठ की गेंद के पीछे दौड़ेगा, उसे छोड़ देगा फिर अपनी ही पूँछ पकड़ने की कोशिश करेगा, फिर अकारण ही दूसरी ओर भाग जायेगा और फिर वापस आकर अपने खेल में संलग्न हो जायेगा। हमारा मन सामान्य स्थिति में इसी मनमौजी तरीके से चलता रहता है। अपने को रूपांतरित करने की आवश्यकता अनुभव करने पर और अभ्यास करके हम अधिक एकाग्र हो सकते हैं।

किसी भी रूप में एकाग्रता हमें तथ्यों के पीछे छिपी वास्तविकता को अधिक स्पष्टता से देख पाने की शक्ति प्रदान करती है। हमारा मन क्षण-क्षण परिवर्तित घटनाओं के जाल में उलझा हुआ है। यह एक घटना से दूसरी घटना पर बिना देखे-समझे कूदता रहता है। जब हम

एकाग्र होते हैं तो मन की चिन्तन-शक्ति एक निश्चित क्षेत्र में और एक ही धारा में बहती है। इस प्रकार दूसरी वस्तुओं से उसका सम्पर्क कट-सा जाता है। (दूसरी वस्तुओं से एक साथ सम्पर्क रखने का बुरा परिणाम यह है कि हम किसी को भी उसके वास्तविक प्रकाश में नहीं देख पाते।) इसके साथ ही मन के शान्त हो जाने से चेतना उसमें परम प्रकाशयुक्त होकर चमकने लगती है। तब व्यक्ति दृश्य जगत के गहरे अर्थों को समझने की योग्यता प्राप्त कर लेता है।

अब हम एकाग्रता को विकसित करने के विभिन्न अभ्यासों की चर्चा करेंगे।

धारणा–

यह सभी धर्मों के असंख्य व्यक्तियों द्वारा किये जाने वाले अत्यन्त प्रचलित ध्यान का अभ्यास है। सामान्यतः इसे भी एकाग्रता ही कहते हैं। यह अनेक प्रकार से किया जा सकता है।

शरीर के विभिन्न केन्द्रों (चिदाकाश, हृदयाकाश, दहराकाश आदि) या चक्रों में या शरीर के बाहर और सामने पदार्थों का मानस-दर्शन किया जा सकता है। साधक अपने ही शरीर के विभिन्न अंगों को, शारीरिक प्रक्रियाओं को, शरीर की निश्चलता, शिथिलन या तनाव को एकाग्रता का विषय बना सकता है। अनेक साधक श्वास को ही एकाग्रता का विषय बना लेते हैं।

योग पद्धति की शिक्षा यह है कि कोई भी पदार्थ एकाग्रता का आधार बन सकता है। परन्तु उसे सार्थक होना चाहिए और उसी पर नियमित रूप से ध्यान एकाग्र करना चाहिए। उसका ध्यान सहज रूप से आना चाहिये। वह पदार्थ इष्ट देवता भी हो सकता है जो साधक के लिए समग्र अस्तित्व का प्रतीक बन जाता है।

कुछ लोग ध्यान के लिए उपयोगी वस्तुओं को बिम्ब के रूप में देख कर उस पर अपना मन एकाग्र कर लेते हैं। कुछ लोगों को अपने लिए मानसदर्शन हेतु उपयुक्त अतींद्रिय प्रतीकों को निश्चित कर पाना कठिन होता है। ऐसे लोगों की सुविधा के लिए हम प्रतीकों की एक सूची दे रहे हैं। निम्नलिखित प्रतीक उदाहरण मात्र हैं। हमारा

सुझाव है कि साधक इस सूची को देख लें। सम्भव है कि कोई प्रतीक उन्हें अपने लिए उपयुक्त दीख पड़ जाये। यदि इस सूची में कोई उपयुक्त प्रतीक नहीं भी दिखाई पड़ता है तो भी इतना निश्चित है कि इसमें अंकित शब्द साधक की स्मृति और कल्पना को जागृत कर देंगे। तब मन में उपयुक्त प्रतीक सहज रूप से आयेंगे। यदि ऐसा तुरंत घटित न हो, तो पूर्ण शिथिलन के किसी क्षण में ऐसा बोध अवश्य ही होगा।

देवता, मनुष्य और शरीर के अवयव–

ब्रह्मा, विष्णु, शिव, त्रिमूर्ति, राम, सीता, राधा, वीणा बजाती हुई सरस्वती, पार्वती, रथारूढ़ अर्जुन, शारदा, पंख फैलाये हुये गरुड़, कुन्ती, गणेश, दीर्घकाय हनुमान, लक्ष्मी, शेरवाहिनी दुर्गा, मुंडालिनी काली, वरुण, वायु, इन्द्र, महाकाली, जरतुश्त खड़े हुये ईसा, जेहोवा, प्रणत जोसेफ, बैठी हुई मेरी, पद्मासन में बैठे हुये बुद्ध, अब्राहम, लाओत्से, कन्फ्यूसियस, पहाड़ पर खड़े हुये मूसा, मिलरेपा, नारोपा, आदिगुरु शंकराचार्य, चैतन्य महाप्रभु, सन्त तुलसीदास, कबीर दास, सूरदास, मीरा, परमहंस रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, सन्त तुकाराम, गुरु नानक, सन्त ज्ञानेश्वर, स्वामी शिवानन्द, अन्य सभी देवी-देवता और सन्त, आपके गुरु, आपके माता-पिता, पति, पत्नी, पुत्र, पुत्री, संबंधी-मित्र, ज्ञानचक्षु, गुरुजी के पदकमल, किसी मुद्रा में हाथ, नासिकाग्र, मस्तक, ठुड्ढी, भ्रूमध्य केन्द्र।

पवित्र प्रतीक–

शिवलिंग, शिव का त्रिशूल, शालिग्राम, अखण्ड ज्योति, अनेक रूपों में क्रास, एक माला, वेदी, किसी मंदिर का झरोखा जिससे सूरज की किरणें अंदर आ रही हैं, परम प्रसाद यज्ञपात्र, बौद्धों का सस्वर घूमता हुआ प्रार्थना चक्र, जलती हुई मोमबत्ती की लौ, दीपाधार, स्फटिक की गेंद, रंगीन वस्त्र में पुजारी, पूजा का आसन, प्रसन्न मुद्रा मे देवी-मूर्तियाँ, नतमस्तक भक्तजन, गेरू वस्त्र में एक संन्यासी, स्वर्णिम अक्षर से लिखा हुआ 'ॐ', श्री चक्र, अर्धचन्द्र, शंख, कमल का फूल, स्वस्तिक चिह्न, मस्तक की रेखायें, आपके इष्टदेव वरदहस्त मुद्रा में और कुंडलिनी।

आकृतियाँ और दृश्यप्रपंच–

गिरजाघर, मठ, मसजिद, सुनहरे लाल रंग का मंदिर, एक पर्ण-कुटीर, विशाल पर्वत, उतार-चढ़ाव वाली पहाड़ी, श्मशान घाट का भयानक वातावरण, जलती हुई चिता, अजन्ता-एलोरा की गुफाएँ, साँची का स्तूप, कोणार्क का सूर्य मंदिर, पुरी में जगन्नाथ का मंदिर, संगमरमर की चट्टान, काई से युक्त समुद्री किनारा, रेगिस्तान, हिमाच्छादित चोटियाँ, ढलान, बालू के पहाड़, रजतवर्णी सागर तट, हरा शीतल जंगल, शान्त उपवन, धूप में सूखते धान के खेत, मन्द-मन्द झूमते वृक्ष, घनघोर घटाओं से घिरा आकाश, वर्षा, कुहासा, आँधी, ओला, चक्रवात, गरजता हुआ अशान्त समुद्र, ज्वार-भाटा, वर्षा की झड़ी, तलाब में खिले हुये कमल, छायादार वनपथ, पेड़ों से छनकर आती हुई धूप, पहाड़ से नीचे का दृश्य, समुद्र में ऊँची उठी भूमि, बहती हुई नाव, गहरा अँधेरा कुआँ, झील की तरंगें, चट्टानों पर बहता हुआ झरना, धरती से फूटा हुआ झरना, जलाशय, हरी-भरी घाटी ।

जीवित प्राणी–

हाथी, मृग, प्रतीक्षा में बैठा हुआ बाघ, बंदर, चरती हुई सफेद गाय, कान खड़े करके आहट लेता हुआ हिरण, बाज, उड़ता हुआ गिद्ध पक्षी, जल पर मंद-मंद तैरता हुआ हंस, नीलकंठ, लोमड़ी, कोमल पत्ती पर बैठी हुई तितली, अभिमान से अपने पंखों का प्रदर्शन करता हुआ मयूर, जलपरी, दरियाई घोड़ा, दौड़ता हुआ खरगोश, गैंडा, धूप में बदन सेंकता हुआ घड़ियाल, कुंडली मारे बैठा हुआ सर्प, पीत कमल, गेंदे का फूल, वैजयन्ती का फूल, पीला कनेर का फूल, लाल कनेर का फूल, केले का पेड़, नारियल का पेड़, ताड़ का पेड़, नव विकसित गुलाब, टेसू का फूल, जंगली सूअर, शुतुर्मुर्ग, कंगारू, ऊँट, वृहदाकार सूर्यमुखी, हरी पत्तियाँ, बोधिवृक्ष, पीपल का वृक्ष, गीली काई, सफेद लिली के फूल ।

भौतिक जगत–

भौतिक तत्व– भूमि, अग्नि, हवा, जल, और आकाश ।

तामसिक, राजसिक और सात्विक तत्व ।

राशि मंडल–कुम्भ, मीन, कन्या, तुला, मिथुन, मकर, धनु, वृश्चिक, सिंह, वृष, कर्क, मेष, मानिक की ज्योति, सुलेमानी गोमेद, नीलम में प्रतिबिम्बित तारा, हीरे पर चमकती सूर्य किरण, सूर्यकान्त मणि, पुखराज, स्फटिक में छिपे रहस्य, जम्बुमणि, दूधिया की चमक, संगयशब (Jade) की मनमोहक शीतलता, गार्नेट, मोती की मंद आभा, लहसुनियाँ, जस्ता, लोहा, सोने की चमक, टीन, पीतल, चाँदी का रुपहलापन, ताँबे की द्युतिहीन चमक, पृथ्वी का चक्कर लगाने वाले अनेक ग्रह, मंगल, शुक्र, शनि, वृहस्पति, वरुण, बुध, रहस्यात्मक यूरेनस और एकाकी प्लूटो।

रंग और आकार–

लाल रंग, स्वच्छ अकाश का नीला रंग, कोमल घास का हरा रंग, पीला नीला, जोगिया, सफेद, काला, संध्या के आकाश का गुलाबी रंग बैंगनी रंग, गर्मी की धूप का रंग, रात में चाँद का फीका रंग, सूर्योदय और सूर्यास्त के समय आकाश के रंग, पेड़ों से छनकर आती हुई धूप, अँधेरे में चमकती आग, स्थिर जलती मोमबत्ती, विद्युत (lightning), रात्रि के आकाश में चमकता एक तारा, एक वृत्त, एक बिन्दु, निम्नमुखी त्रिकोण, आयत, षट्कोण, अनेक बिन्दुओं वाला तारा, मानव हृदय के आकार की गुलाब की पंखुड़ी, पुष्प पंखुड़ी, पेड़ की पत्ती, सुनहरा छोटा अंडा, पीपल का पत्ता, संस्कृत के अनेक बीज मंत्र, चक्र, प्राणों से ओतप्रोत इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियाँ विभिन्न चक्रों पर एक-दूसरे को काटती हुई।

त्राटक–

त्राटक पर अध्याय २० में चर्चा की जायेगी। एकाग्रता विकसित करने की यह एक सशक्त विधि है। इसमें मन को किसी आंतरिक या बाह्य पदार्थ पर केन्द्रित किया जाता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि यह अन्तर्धारणा विकसित करने की एक उत्तम विधि है। बन्द आँखों के आगे किसी वस्तु को देख सकना और उसके बिम्ब को बनाए रखना ध्यान के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

विचार के साथ सम्बद्धता—

प्रतिदिन दस मिनट का अभ्यास पर्याप्त होगा। एक मनमोहक पदार्थ लीजिये— कोई चित्र या पशु। इस पर मन को एकाग्र करने का प्रयत्न कीजिये। उदाहरण के लिए कुत्ते को लीजिये। कुत्ते के ही विचार में मन को मत डूबने दीजिये बल्कि उससे सम्बंधित विचार मन में लाइये। इनसे भिन्न बातों पर मन को नहीं भागने दीजिये। कुत्ते के आकार-प्रकारों को याद कीजिये। पुनः कुत्ते पर मन को लाइये। कुत्ते के भोजन की बात सोचिये। मनुष्य और कुत्ते के बीच के संबंधों के बारे में सोचिये। फिर कुत्ते के बारे में सोचिये। इसी तरह विभिन्न सम्बन्धित बातें सोचते हुये केन्द्र पर बने रहिये। कुत्ते के मुख्य विचार से असम्बद्ध कोई बात मत सोचिये।

विभिन्न वस्तुओं को इसी तरह चुनकर उन पर अभ्यास किया जा सकता है। विचारों को इच्छानुसार नियंत्रित कर सकने तथा मानसिक शक्ति बढ़ाने के लिए यह अत्युत्तम पद्धति है। मन को एक निश्चित पथ का अनुसरण करने की शिक्षा देने की यह अमूल्य विधि है। इससे मन की एक पदार्थ से दूसरे असम्बद्ध पदार्थों पर कूद पड़ने की आदत बन्द हो जाती है। यह मन को ध्यान का अभ्यास करने तथा साथ ही दैनिक कार्यों को एकाग्रतापूर्वक सम्पन्न करने का भी प्रशिक्षण देता है।

पुनः मानसदर्शन करके पुरानी बातों का स्मरण करना—

यह अभ्यास एकाग्रता, स्मृति और अंतर्धारणा को विकसित करता है। इस अभ्यास को प्रतिदिन दस मिनट तक दुहराया जा सकता है। जब मन में इधर-उधर के विचार न हों तब किसी भी स्थिति में— यात्रादि में— इसे किया जा सकता है। इसमें सिर्फ फुर्सत से बैठने की जरूरत है। इसकी सम्भावनायें अपरिमित हैं।

मित्र के घर का मार्ग याद कीजिये। उस यात्रा की जितनी भी बातें हैं, उन्हें बन्द आँखों से देखिये। मकान कैसे थे? प्रत्येक घर को मन की आँखों से देखिये। रास्ते में खड़ी गाड़ियाँ, लोग... सबको देखिये। एक-एक चीज की याद कीजिए और उसका मानसदर्शन कीजिये या

जब आप कमरे में हों तब चारों ओर दृष्टि दौड़ाइये। फिर आँखें बन्द करके देखी हुई प्रत्येक चीज को देखने की चेष्टा कीजिये।

किसी किताब को पढ़ने के बाद आँखें बन्द करके किताब में वर्णित विषय को चित्र की तरह स्पष्ट देखने का प्रयत्न कीजिये।

एक से बीस तक गिनती गिनिये। आँखें बन्द करके गिनतियों को दुहराइये और हर गिनती को तस्वीर की तरह देखिये। यह पद्धति आंतरिक जागरूकता को बढ़ाकर स्मरण शक्ति को तीव्र करती है।

दृश्यों का संकुचन एवं विस्तार—

यह विधि अंतर्धारणा और स्मृति को विकसित करने के लिए बहुत उपयोगी है। एक सुन्दर दृश्य की तस्वीर लीजिये। इसके केन्द्र में कोई प्रमुख वस्तु होनी चाहिए। चित्र के बदले वास्तविक दृश्य हो तो और भी अच्छा है। तब तक दृश्य का अध्ययन कीजिए जब तक आप उसके प्रत्येक अंकन (वस्तु) से, मूल से परिचित न हो जायें। अब आँखें बन्द कर उसी दृश्य का मानसदर्शन कीजिये। साफ-साफ देखने की कोशिश कीजिये। क्रमशः पृष्ठभूमि से एक-एक करके दृश्यों को हटाते जाइये। उदाहरणार्थ— आकाश की घटायें, वृक्ष या जो भी दृश्य दिखाई दे रहे हों उन्हें एक-एक करके हटा दीजिये। उन चीजों को भी हटा दीजिये जो दृश्य की प्रमुख वस्तु को घेरे हुये हैं। फ़लतः अब आप वह प्रमुख वस्तु ही देखेंगे। चेतना को कुछ देर तक इसी वस्तु पर केन्द्रित कीजिये। तब जिस क्रम में दृश्यों को हटाते गये थे, उसी क्रम से जोड़ते जाइये। अब पुनः सम्पूर्ण चित्र का मानसदर्शन कीजिये।

इच्छानुसार पदार्थ का मानसदर्शन—

यह सरल अभ्यास दिन में कभी भी किया जा सकता है। यह भी अंतः दर्शन की क्षमता का विकास करता है।

आँखें बंद कर लीजिये और अपनी बंद आँखों के सामने के शून्य क्षेत्र को देखिए। किसी वस्तु के विषय में सोचिये और उसे एक बिम्ब की तरह चित्रित करने की कोशिश कीजिये। लगभग आधे मिनट बाद दूसरी वस्तु के विषय में सोचिए और उसके भी चित्र की कल्पना

कीजिये। इसे समयानुसार लम्बी अवधि तक करते जाइये। कोई भी वस्तु— मोमबत्ती, वृक्ष, कमल, फूल या कुछ भी इसके लिए चुनी जा सकती है।

दृष्टिकोण का संकुचन और प्रसारण—

इससे कल्पना शक्ति और मानसदर्शन की क्षमता का विकास होता है। किसी खोखले पदार्थ को चुन लीजिये जैसे– कार्डबोर्ड, दियासलाई, पेंसिल बॉक्स, घड़ा आदि। पहले कल्पना कीजिये कि आप उसके अंदर हैं। आपने अपना आकार इतना छोटा बना लिया है और उसके अंदर बीचोंबीच बैठे हुये हैं। अब अंदर की वस्तुओं को वहीं बैठे-बैठे देखिये। इस दृष्टिकोण से क्या दिखाई पड़ता है? इस अभ्यास को कुछ मिनटों तक कीजिये।

अब अपने दृष्टिकोण का विस्तार कीजिये। अब अपने आकार को उस वस्तु से बहुत बड़ा मान लीजिये। फिर उस वस्तु को एकाग्रतापूर्वक विभिन्न पहलुओं से– नीचे-ऊपर, आगे-पीछे, अगल-बगल, हर ओर से देखिये। पुनः अपने को लघुरूप में देखिये और उस पदार्थ के अंदर बिठला दीजिये। इस क्रिया को कई बार दुहराइये। जब किसी एक वस्तु के साथ यह क्रिया भली प्रकार होने लगे तब दूसरी वस्तु चुन लीजिये।

सामान्य बातें—

यदि आपको ये अभ्यास कठिन मालूम पड़ें तो निराश न होइये। यह कोई अस्वाभाविक बात नहीं है। हममें से अधिकांश शब्दों के माध्यम से सोचने के इतने आदी हो गये हैं कि मानसदर्शन करने की हमारी क्षमता समाप्त हो गई है। इन विधियों का एक उद्देश्य मनुष्य की इस सीमा को समाप्त करना है। बहुत से लोग इस तरह जीवन यापन करते हैं, मानो दिवा स्वप्न देख रहे हों। हम अपने आस-पास की चीजों को देखते हैं लेकिन सचमुच में हम उन्हें नहीं देखते। उदाहरणार्थ हम एक वृक्ष को देखते हैं पर उससे सम्बंधित सभी बातें हमारे मस्तिष्क में अंकित नहीं हो पातीं। जब कोई दृश्य पदार्थ हमारे लिए कोई विशेष अर्थ रखता है तभी हम उससे संबंधित सारी बातों पर ध्यान देते हैं।

मन के साथ लड़िये नहीं–

एकाग्रता में किसी तरह का तनाव नहीं होना चाहिए। कुछ लोगों को यह बात विरोधाभास पूर्ण लगती है क्योंकि वे ध्यान के लिए कठिन प्रयत्न करते हैं। शायद जब भी वे किसी ध्यानस्थ व्यक्ति की कल्पना करते हैं तो उनके सामने दाँत पीसते, प्रतिशोध की भावना से भौंहें चढ़ाये व नाखून काटते व्यक्ति का मानसिक चित्र उभर कर आता है। पर ये अभिव्यक्तियाँ किसी न किसी प्रकार के मानसिक संघर्ष और तनाव की हैं। ये गहन एकाग्रता की परिचायक नहीं हैं।

गहरे ध्यान की स्थिति तभी प्राप्त हो सकती है जब तनाव मुक्ति के साथ-साथ गहरी एकाग्रता हो। इसके लिए मन से संघर्ष नहीं करना है। ध्यान में उन्मुक्तता और आनन्द है। इसकी जड़ तनाव पूर्ण मन में नहीं हो सकती। मन को प्रशिक्षित कीजिए, समझाइये, सिखाइये परन्तु उसके साथ लड़िये नहीं।

जब आप यह अभ्यास करें तो यह आशा न कीजिए कि पहले ही प्रयास में आप उन्हें ठीक ढंग से करना सीख जायेंगे। यदि ऐसा होता है तो आप सचमुच बड़े भाग्यशाली हैं। अधिकांश लोगों को तो अवचेतन की क्रियाओं को उद्दीप्त करना पड़ा है। फिर उन क्रियाओं को बिम्ब निर्माण करने के लिए प्रशिक्षित करना पड़ता है।

इसमें समय लगता है। लेकिन अन्ततः नियमित अभ्यास करते रहने से कुछ दिनों या सप्ताहों के बाद अवचेतन स्वतः आपके कहने पर बिम्ब प्रस्तुत करने लगता है।

अन्तर्धारणा का कक्षा प्रतिलेखन

अपनी आँखें बन्द कर लीजिए।

शारीरिक हलचल बन्द करके निर्देशों की प्रतीक्षा कीजिए।

शारीरिक हलचल बन्द करके निर्देशों की प्रतीक्षा कीजिए।

चिदाकाश के प्रति सजग हो जाइए।

चिदाकाश के प्रति सजग हो जाइए।

इस हॉल के श्यामपट को देखिये, इस हॉल के श्यामपट को देखिये और

उस श्यामपट पर चाक से स्पष्ट मानसिक अतींद्रिय लेख लिखिये।
आपके लिए यह कठिन नहीं होगा।
मैं आपको यहाँ से निर्देश दूँगा।
ऐसा होना चाहिए कि आप जो भी लिखें उसे आप मेरे बताये हुये चाक के रंग में लिखा हुआ देख सकें। सजग हो जाइए और श्यामपट पर देखिये। चाक पकड़ लीजिए और मैं जो कहता हूँ उसे लिखना शुरू कीजिये।
गिनतियाँ—१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १० चाक से लिखिये।
आपको लिखना है उसका मानसदर्शन नहीं करना है। आपको लिखना और देखना है। श्यामपट पर जैसी क्रिया आप करते हैं, वैसी ही क्रिया करनी है।
उस पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिए।
फिर चाक से लिखिये— ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २०।
उस पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिए।
अब दूसरी पंक्ति लिखने के लिये तैयार हो जाइए।
पहले लिखिये— *सो-ना-न-हीं*, सोना नहीं।
अब अपने हाथ की चाक से दूसरी पंक्ति लिखिए—
मैं-सो-न-हीं-र-हा-हूँ, मैं सो नहीं रहा हूँ।
एक-एक अक्षर को पूरी सावधानी से लिखिए।
दोनों पंक्तियाँ साफ कर दीजिये।
फिर गिनतियाँ लिखने के लिये तैयार हो जाइये—
लिखिए—२१, २२, २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०।
उस पंक्ति को कपड़े से साफ करके श्यामपट की ओर देखिये।
याद रखिये, आपको चाक से श्यामपट पर लिखना है।
याद रखिये, आपको चाक से श्यामपट पर लिखना है।
आप अपने हाथ से लिख रहे हैं।
श्यामपट के इस छोर से उस छोर तक एक लहरदार रेखा खींचना शुरू कीजिये।
श्यामपट के इस छोर से उस छोर तक एक लहरदार रेखा खींचना शुरू

कीजिये ।

जब आप एक रेखा खींच चुकें तो दूसरी लहरदार रेखा खींचिए ।

इसी तरह लहरदार रेखायें खींचते जाइये ।

अब उन रेखाओं को कपड़े से साफ कर दीजिये ।

जो भी रेखायें आपने खीचीं हैं, उन सबको कपड़े से साफ कर दीजिये ।

अब पुन: गिनतियों को साफ-साफ लिखिये । हाथ में चाक लेकर श्यामपट पर सुन्दरता से लिखिये– ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५० ।

अब कपड़े से इस पंक्ति को साफ कर दीजिये । अब गुलाबी चाक लेकर श्यामपट पर लिखिये– ५१ डैश, यह एक लम्बा चिन्ह है । यह एक हाइफन का दुगुना होता है । फिर से लिखिये–५२–५३–५४–५५–५६–५७–५८ ५९–६० ।

इस पंक्ति को कपड़े से साफकर फिर से गुलाबी चाक लीजिये ।

श्यामपट पर गुलाबी चाक से महत्वपूर्ण वाक्य लिखिये सो–*ना–न–हीं* सोना नहीं ।

गुलाबी चाक से दूसरी पंक्ति लिखिये– *मैं* रिक्त स्थान, सो रिक्त स्थान, *न–हीं* रिक्त स्थान, र–हा रिक्त स्थान, हूँ पूर्ण विराम का चिन्ह । मैं सो नहीं रहा हूँ ।

गुलाबी चाक से लिखी हुई पूरी लाइन पढ़िये– मैं सो नहीं रहा हूँ ।

इन दोनों पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिये । जिस श्यामपट पर आपको लिखना है, उसे देखिये ।

आप इस हॉल में गुलाबी चाक से श्यामपट पर लिख रहे हैं–६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ६८, ६९, ७० ।

इस पक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिये और पीली चाक लेकर शून्यों को बार-बार लिखिये –०–० ।

लिखते जाइये –०–०–०–०–०–० ।

दूसरी पंक्ति में पीली चाक से लिखिये –०–०–०–०–०–०–०–०–० ।

पंक्ति बदलिये–०–०–०–० ।

मन को स्थिर रखिये । श्यामपट देखिये ।

पीली चाक लीजिये–०–०–०–०–०–०–०–०–०–० ।

कपड़े से सभी शून्यों को साफ कर दीजिए।

पुन: पीली चाक लीजिये, पुन: पीली चाक लीजिये और श्यामपट पर एक छोटा सा त्रिकोण बनाइये, एक त्रिकोण बनाइये, एक त्रिकोण बनाइये, दूसरा त्रिकोण बनाइये, तीसरा त्रिकोण बनाइये, चौथा त्रिकोण बनाइये, पाँचवा त्रिकोण बनाइये, छठवाँ त्रिकोण बनाइये।

पंक्ति बदल दीजिए। पीली चाक से एक और त्रिकोण बनाइये। दूसरा त्रिकोण, तीसरा त्रिकोण बनाइयें।

कपड़े से सभी पंक्तियों को मिटा दीजिये। सभी पंक्तियों को मिटा दीजिये– पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी, पाँचवीं, सभी पंक्तियां।

कपड़े से सभी पंक्तियाँ साफ कर दीजिये और सफेद चाक से बनाइये।

अब श्यामपट पर सफेद चाक से बनाइये।

पहले गुणा का चिन्ह। आप गणित के चिन्ह जानते हैं। गुणा का चिन्ह– क्रास के चिन्ह की तरह। एक और गुणा का चिन्ह। और एक ऐसा ही चिन्ह सफेद चाक से, एक और ऐसा ही चिन्ह बनाइये।

पंक्ति बदलिये। गुणा का एक और चिन्ह बनाइये। एक और बनाइए। एक और बनाइए। एक और क्रास बनाइए।

इन दोनों पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिए।

सफेद चाक लीजिए, अपने सामने के श्यामपट पर लिखने के लिए तैयार हो जाइए। श्यामपट याद रखिए। चाक का रंग याद रखिए।

आप श्यामपट पर लिख रहे हैं, आप श्यामपट पर लिख रहे हैं, आप श्यामपट पर लिख रहे हैं, आप श्यामपट पर सफेद चाक से लिख रहे हैं– ९०, ८९, ८८, ८७, ८६, ८५, ८४, ८३, ८२, ८१, ८०, ७९, ७८, ७७, ७६, ७५, ७४, ७३, ७२, ७१।

इस पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिए, इस पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिए।

सफेद चाक लीजिए, सफेद चाक लीजिए और श्यामपट के एक छोर से दूसरे छोर तक सीधी रेखायें खींच लीजिए। एक रेखा के नीचे दूसरी रेखा खींचिये। सफेद चाक से एक रेखा के बाद दूसरी रेखा, एक छोर से दूसरे छोर तक खींचते जाइए। जब एक रेखा पूरी हो जाए तो दूसरी खींचिए।

सफेद चाक लीजिए । और सीधी रेखायें खींचिए, रेखायें खींचिए ।
कपड़े से रेखाओं को साफ कर दीजिए ।
सफेद चाक लीजिए और लहरदार रेखायें खींचिए ।
रेखाओं को कपड़े से साफ कर दीजिए ।
गुलाबी चाक लेकर श्यामपट पर लिखिए-०-०-०-०-०-०-०-० ।
दूसरी पंक्ति में गुलाबी चाक से लिखिए-७-७-७-७-७-७-७-७-७-७ ।
अब पंक्ति बदल कर एक बिन्दु अंकित कीजिये, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु, एक और बिन्दु । पंक्ति बदलिये ।
गुलाबी चाक से एक तारा बनाइये । आप जानते हैं कि तारे में अनेक कोण होते हैं । एक तारा, एक तारा अंकित करें ।
दूसरा तारा, तीसरा तारा, चौथा तारा, पाँचवाँ तारा, छठवाँ तारा ।
पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिये ।
गुलाबी चाक से श्यामपट पर अपना नाम लिखिए । स्पष्ट अक्षरों में श्यामपट पर अपना नाम लिखिए ।
कपड़े से पंक्ति को साफ कर दीजिये और ॐ लिखिये । दूसरा ॐ भी ।
गुलाबी चाक से शीघ्रता के साथ ॐ लिखिये । एक और ॐ, एक और ॐ, एक और ॐ, एक और ॐ लिखिये ।
पंक्ति बदलें ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ शरीर और मन स्थिर रखिये । ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ तेजी से लिखते जाइये ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ एक दूसरा ॐ एक दूसरा ॐ, एक दूसरा ॐ ।
पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिये ।
पीली चाक लेकर एक बड़ा सा त्रिकोण खींचिये । उसका आधार श्यामपट की चौड़ाई के बराबर हो, उसका आधार श्यामपट की चौड़ाई के बराबर हो । श्यामपट का ऊपरी भाग त्रिकोण का ऊपरी बिन्दु हो ।
पीली चाक से इतना बड़ा त्रिकोण खींच रहे हैं, इतना बड़ा त्रिकोण कि जिसका आकार श्यामपट के आकार के बराबर है ।
अब एक उलटा त्रिकोण खींचिये । इसका आधार श्यामपट का ऊपरी सिरा हो । इस तरह आप देखते हैं कि दोनों त्रिकोण एक-दूसरे को काट

रहे हैं। प्रत्येक त्रिकोण का ऊपरी भाग दूसरे त्रिकोण के आधार के मध्य में रहा है।

इन त्रिकोणों को कपड़े से साफ कर दीजिये।

सफेद चाक लीजिये। पीली चाक हटा दीजिये। एक त्रिकोण खींचिये। इसका आधार श्यामपट का आधार है।

सफेद चाक लीजिये, एक दूसरा उलटा त्रिकोण खींचिये जिसका आधार ऊपर की ओर है। ये दोनों त्रिकोण एक-दूसरे को काटते हैं, एक त्रिकोण का सिरा दूसरे त्रिकोण के आधार पर रहेगा।

इन्हें कपड़े से साफ कर दीजिये।

सफेद चाक लीजिये और श्यामपट पर समानान्तर रेखायें खींचिये। यथा संभव सीधी रेखाएँ खींचिये।

अब श्यामपट के सिरे से उसके आधार तक समानान्तर रेखायें, एक छोर से दूसरे छोर तक खींचिये।

जब एक रेखा पूरी हो जाये, तब दूसरी खींचिये, एक रेखा से दूसरी रेखा के बीच की दूरी लगभग एक इंच रहे।

खींचते जाइये, खींचते जाइये।

समानान्तर रेखाओं को मिटा दीजिये और श्यामपट पर सफेद चाक से किसी भाषा में अपना नाम लिखिये। धीरे-धीरे एक-एक अक्षर लिखिये।

सफेद चाक से 'ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ, ॐ' लिखिये।

सफेद चाक से दूसरी पंक्ति–०–०–०–०–०–०–०।

पंक्ति बदल लीजिये–०–०–०–०–०–०–०।

पंक्ति बदल लीजिये–०–०–०–०–०–०–०।

इन्हें कपड़े से साफ कर दीजिये।

मन और शरीर को स्थिर कीजिये और श्यामपट की ओर देखिये।

सफेद चाक लेकर फिर लिखिये १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०।

पंक्ति बदल दीजिये। साफ-साफ लिखिये– ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २०।

पंक्ति बदलिये– २१, २२, २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०।

पंक्ति को कपड़े से साफ कर दीजिए।

श्यामपट की ओर देखिये।

सफेद चाक हटा दीजिये । पीली चाक लीजिये और श्यामपट पर अपना नाम लिखिये ।

दूसरी पंक्ति– ॐ, ॐ, ॐ, ॐ ।

इन पंक्तियों को कपड़े से मिटा दीजिये ।

गुलाबी चाक लीजिये और एक छोटा सा वृत्त बनाइये । इसे इस प्रकार बढ़ाते जाइये कि यह बड़ा होता जाये और श्यामपट को पूरी तरह घेर ले । पीली चाक लीजिये । छोटे वृत्त से शुरू करके वृत्त को बड़ा करते जाइये । वृत्तों को साफ-साफ खींचिये । वृत्त सारे श्यामपट को घेर लें । वृत्तों को कपड़े से साफ कर दीजिये ।

अब सफेद चाक लीजिये । अब सफेद चाक लीजिये और श्यामपट पर अनेक त्रिकोण खींचिये, उसमें कुछ उल्टे भी हों ।

इन त्रिकोणों को बनाते जाइये ।

त्रिकोणों को कपड़े से साफ कर दीजिये, कपड़े से साफ कर दीजिए ।

अब हरी चाक लीजिये और श्यामपट पर गिनतियाँ लिखते जाइये । बीच में अर्ध विराम का चिन्ह (,) रहेगा ।

स्वतंत्र रूप से अभ्यास जारी रखिये, अभ्यास जारी रखिये ।

चाक हरी है, श्यामपट काला है । आप गिनती 'एक' का स्पष्ट अंकन कर रहे हैं, लिखते जाइये तथा स्वयं कहिये 'एक' । बीच में विराम चिन्ह (,) देते हुए यथा स्थान पंक्ति बदलते जाइये ।

अभ्यास जारी रखिये ।

हरी चाक से श्यामपट पर गिनतियाँ लिखते जाइए ।

हरी चाक से श्यामपट पर अंक लिखते जाइये ।

हरी चाक से श्यामपट पर बीच में विराम चिन्ह अंकित करते हुए गिनतियाँ लिखते जाइये ।

यथा स्थान पंक्ति बदलिये ।

गिनतियों को कपड़े से साफ कर दीजिये और अब सफेद चाक लेकर तैयार हो जाइये ।

सफेद चाक से एक त्रिकोण बनाइये । उस त्रिकोण को मिटा दीजिये । अब गुलाबी चाक लेकर श्यामपट पर मोटी पंक्तियों में त्रिकोण खींचिए । कपड़े से त्रिकोण को मिटा दीजिए ।

पीली चाक लीजिये। पीली चाक से मोटी पंक्तियों में श्यामपट पर एक त्रिकोण खींचिये।
कपड़े से त्रिकोण को मिटा दीजिये।
नीली चाक लीजिये। नीली चाक लीजिये और श्यामपट पर नीली चाक से एक त्रिकोण बनाइये।
त्रिकोण को कपड़े से साफ कर दीजिये।
अब हरी चाक लीजिये और हरी चाक से श्यामपट पर गहरी रेखाओं में एक त्रिकोण खींचिए।
त्रिकोण को कपड़े से मिटा दीजिए। त्रिकोण को कपड़े से मिटा दीजिए।
अब गहरे लाल रंग की चाक लीजिए और एक त्रिकोण खींचिये।
कपड़े से त्रिकोण साफ कर दीजिये।
अब एक बैगनी रंग की चाक लीजिये।
श्यामपट पर मोटी रेखाओं में बैगनी चाक से एक त्रिकोण बनाइये।
कपड़े से त्रिकोण को साफ कर दीजिये।
अब गेरु रंग की एक चाक लीजिये। यह रंग संन्यासियों के वस्त्र का रंग होता है। आप में से भी अनेक इस रंग के कपड़े पहनते हैं। इस चाक से श्यामपट पर मोटी रेखाओं में एक त्रिकोण बनाइये।
त्रिकोण को कपड़े से साफ कर दीजिये। त्रिकोण को कपड़े से साफ कर दीजिये।
श्यामपट पर एक डैश खींचिये।
डैश क्या है ?
दो हाइफनों से एक डैश बनता है।
सफेद चाक से एक डैश खींचिये। दूसरा डैश भी सफेद चाक से बनाइये।
और तीसरा डैश सफेद चाक से बनाइये।
गुलाबी चाक लीजिये– डैश, डैश, डैश।
पीली चाक लीजिये और खींचिए–डैश, डैश, डैश, डैश।
हरी चाक लीजिए और खींचिये– डैश, डैश, डैश।
लाल चाक लीजिए और खींचिये– डैश, डैश, डैश।
नीली चाक लीजिए और खींचिये– डैश, डैश, डैश,।

गेरु रंग की चाक लीजिए और खींचिये– डैश, डैश, डैश ।
बैगनी चाक लीजिए और खींचिये– डैश, डैश, डैश ।
इसे ऊपर से देखने की कोशिश कीजिये, पहली लाइन सफेद डैशों की फिर गुलाबी डैशों की, तीसरी लाइन पीले डैशों की, फिर हरे डैश, लाल डैश, नीले डैश, गेरु डैश और बैगनी डैश ।
फिर ऊपर से देखिए और सिर्फ पहली पंक्ति को देखिये– सफेद रंग के डैश । दूसरी पंक्ति जिसे आपने गुलाबी रंग से खींचा है । तीसरी पंक्ति पीली, चौथी पंक्ति हरी, पाँचवीं लाल, छठवीं नीली, सातवीं गेरु और आठवीं बैगनी ।
सभी रेखाओं को कपड़े से साफ कर दीजिये ।
सभी रेखाओं को कपड़े से साफ करके तुरंत एक सफेद चाक लीजिये और एक सीधी रेखा खींचिये ।
फिर एक गुलाबी चाक लीजिये और एक गुलाबी सीधी रेखा खींचिये । फिर एक पीली चाक लीजिये और सीधी पीली रेखा खींचिए–रेखा मोटी होनी चाहिये । फिर एक हरी चाक लीजिए और सीधी हरी रेखा खींचिये ।
अब एक लाल चाक लेकर सीधी लाल रेखा खींचिए । रेखा मोटी होनी चाहिए । फिर एक नीली चाक लीजिए और सीधी नीली रेखा खींचिए । एक बैगनी चाक लीजिए और एक बैगनी रंग की सीधी रेखा खींचिये ।
श्यामपट की ओर देखिये ।
उन सभी पंक्तियों को कपड़े से साफ कर दीजिये ।
सफेद चाक से लिखिये –०–०–० ०–० ।
सफेद चाक से लिखते जाइये –०–०–०–०–० ।
जब आवश्यक समझें, पंक्ति बदल दीजिये ।
लिखते जाइये ०–०–०–०–०–०–० ।
सफेद चाक से लिखते जाइये ०–०–०–०–०–०–० । उपयुक्त स्थानों पर पंक्ति बदलते जाइये और कपड़े से सभी पंक्तियाँ साफ कर दीजिये, कपड़े से सभी पंक्तियाँ साफ कर दीजिये ।
हरि ॐ तत् सत् ।

उन्नीसवाँ अध्याय

चिदाकाश धारणा

यद्यपि चिदाकाश धारणा एक प्रकार की विशुद्ध मानसदर्शन करने की विधि है, पर साथ ही यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण ध्यान की विधि भी है।

चिदाकाश का अर्थ है– चेतना का आकाश। चिदाकाश आज्ञा चक्र का पर्दा (Screen) है। भौतिक मन की सुविधा के लिए यहीं विभिन्न प्रकार के अतीन्द्रिय दृश्य प्रगट होते हैं। मनुष्य के चेतन, अचेतन तथा उच्च चेतना के बीच की कड़ी यही है। अधिकांशत: यह वह बिन्दु है जहाँ साधकों को ध्येय वस्तु का दर्शन अत्यन्त ही सुगमता से होता है।

चिदाकाश का मानसदर्शन एक अंधकारमय कमरे के रूप में किया जाता है जिसकी चार दीवारें हैं, छत है और फर्श है। चिदाकाश के फर्श में पीछे की दीवार के केन्द्र के पास में एक छेद है जिससे होकर एक रास्ता नीचे की तरफ गया हुआ है। यह रास्ता निम्न चक्रों से होकर नीचे की ओर जाता हुआ सुषुम्ना नाड़ी है। सामने की दीवार में एक पर्दा है। यदि आप अपनी चेतना के तनावों तथा कुंठाओं को शांत कर सकें तो आपको उस परदे पर कुछ बिम्ब दृष्टिगोचर होंगे। चिदाकाश धारणा जागरूकता के अनदेखे सूक्ष्म क्षेत्रों के द्वार खोल देती है। इसके माध्यम से चेतना तथा मन की उन विभिन्न अवस्थाओं का भी पता चलता है जो हमारी भौतिक दृष्टि से परे हैं तथा जिनके बारे में हम ज्यादा नहीं जानते।

इस क्रिया में पारंगत व्यक्ति को भौतिक दृष्टि की सीमाओं से अप्रभावित विशुद्ध प्रज्ञा तथा ज्ञानालोक की प्राप्ति होती है, जो साधक के लिए एक बड़ी उपलब्धि है।

चिदाकाश धारणा का कक्षा प्रतिलेखन

किसी सुविधाजनक आसन में बैठ जाइये ।
मेरुदण्ड तथा सिर सीधा रखिये ।
हाथ गोद में बंधे हुए या ज्ञानमुद्रा अथवा चिन्मुद्रा में रखिये ।
अपने आपको व्यवस्थित कर लीजिये ताकि आप शरीर में बिना कोई तनाव अनुभव किये हुये कुछ देर तक स्थिर बैठ सकें ।
अपने आसपास कुछ ध्वनियों के प्रति सजग रहिये, जैसे— घड़ी की टिक-टिक, घूमते हुये पंखे की आवाज, निर्देश के रूप में आप तक पहुँचता हुआ मेरा स्वर, चिड़ियों के गीत और मधुर संगीत का गुंजता हुआ लयबद्ध स्वर ।
अब तुरंत अपने शरीर के प्रति सजग हो जाइये ।
सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर का ख्याल ।
अपनी शारीरिक स्थिति के प्रति पूर्ण तथा अनवरत सजगता बनाये रखिये ।
भौतिक शरीर के प्रति सजगता का सतत् प्रवाह बनाये रखिये ।
ध्यान रखिये कि आप भौतिक शरीर के प्रति सजग हैं ।
किसी विशेष अंग के प्रति नहीं, बल्कि सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग रहिये ।
जितना ही आप अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग होते जायेंगे, उतना ही आपका मन स्थिर होता जायेगा ।
शरीर के किसी विशेष अंग के प्रति नहीं, बल्कि समग्र शरीर के प्रति सजगता ।
अब अपनी श्वसन प्रक्रिया के प्रति सजग होइये लेकिन शारीरिक सजगता भी बनाये रखिये ।
शरीर के प्रति सजगता का सतत् प्रवाह बना रहे, साथ ही श्वसन प्रक्रिया के प्रति जागरूकता भी रहे ।
श्वसन प्रक्रिया सहज और प्रयास रहित होनी चाहिए— कभी छोटी श्वास, कभी गहरी लम्बी श्वास । श्वास के प्रति सजग रहिये और साथ ही साथ शरीर के प्रति भी ।

अब तुरन्त अपनी चेतना को चिदाकाश में ले आइये, आपमें निहित चिदाकाश।

वह आकाश जो आपकी भौतिक एवं मानसिक सत्ता के प्रत्येक अणु में व्याप्त है। वह मात्र आपके अंदर या बाहर नहीं, बल्कि हर स्थान पर है। वह आपके ललाट के सम्मुख का आकाश नहीं, यह मस्तक के ऊपर का आकाश नहीं, आपके मस्तक के पीछे का आकाश नहीं, यह हृदयाकाश नहीं, यह पेट या नाभि का आकाश नहीं, यह शरीर के अधोभाग का आकाश नहीं, बल्कि वह एक समग्र आकाश है जिसमें सम्पूर्ण भौतिक सत्ता समाई हुई है।

जब आप चिदाकाश के प्रति सजग होते हैं तब आप उस आकाश के प्रति सजग हैं जो शरीर में है, सारे शरीर में है, सम्पूर्ण शरीर के आरपार है, सारा शरीर जिसमें समाहित है।

इसका संबध शरीर के किसी विशेष हिस्से से नहीं है।

चिदाकाश के प्रति सजग हो जाइये। यह आपकी निराकार सत्ता की समग्रता है, इसमें आपका शरीर अवस्थित है।

यह काले रंग का है, यह निराकार है।

चिदाकाश के रंग की सजगता बनाये रखने की कोशिश कीजिये।

चिदाकाश का रंग क्या है?

यह काला है, हल्का काला या और कोई रंग?

इसका रंग क्षण-क्षण बदलता है।

चिदाकाश का रंग परिवर्तित होता रहता है।

यदि आप सूक्ष्मता से इसका अवलोकन करें तो आप देखेंगे कि ये रंग बड़ी तीव्र गति से बदलते रहते हैं।

कभी-कभी तो बदलते हुये रंगों और उनके स्पन्दनों की गति का अनुसरण कर पाना कठिन हो जाता है। उन्हें समझ पाना कठिन है।

उनके निहित अर्थों को समझ पाना कठिन है। कभी तो रंग स्पष्ट होते हैं और कभी अस्पष्ट।

प्रतिदिन ये रंग एक से नहीं रहते।

अभी आपके चिदाकाश का जो रंग है कल इस समय वह रंग नहीं रहेगा। इन परिवर्तनशील रंगों के प्रति सजग रहिये।

रंग विभिन्न बादलों की तरह आपके चिदाकाश में इधर से उधर जा रहे हैं।
आपकी भौतिक सत्ता को सहारा देने वाला चिदाकाश निराकार है, पर इसमें रंग है।
यदि आप इसे ध्यान से देखें, यदि आप इसके प्रति सजग रहेंगे तो आप रंग परिवर्तनों की द्रुतगति का अनुभव कर सकेंगे।
ये रंग आपकी जीवनी शक्ति के प्रतीक हैं।
इन रंगों के प्रति सजग होने का प्रयत्न कीजिये।
इन रंगों के आधार पर ही अंततः एक नवीन विज्ञान का ज्ञान प्राप्त किया जाता है।
चिदाकाश आपकी भौतिक सत्ता की निराकार स्थिति, आकारहीन सार-वस्तु तथा निराकार वास्तविकता है।
अपने ललाट के सम्मुख आप जो देखते हैं, वह चिदाकाश नहीं है।
अपने सिर के ऊपर जो आप देख रहे हैं वह चिदाकाश नहीं है।
सिर के पीछे चिदाकाश नहीं है।
हृदय क्षेत्र, नाभि या पीठ पर चिदाकाश नहीं है।
आपके शरीर के अधोभाग में चिदाकाश नहीं है।
यह प्रत्येक केन्द्र का चिदाकाश है
सम्पूर्ण चिदाकाश।
और इसी के प्रति आपको सजग होना है।
अब रंग के प्रति सजग हो जाइये और कहिये—
'मैं रंगों का अन्वेषण कर रहा हूँ, उन्हें देख रहा हूँ, उन्हें रिकार्ड कर रहा हूँ।' यदि आप रंगों को स्पष्ट अनुभव कर सकते हैं तो मानसिक रूप से कहिये—लाल, नीला, बैगनी ....इत्यादि।
यदि आप रंगों का अनुभव नहीं कर सकते हों तो कहिये—
'मैं' नहीं समझ सकता हूँ।
कभी-कभी रंग इतने अस्पष्ट होते हैं कि उन्हें समझना असंभव होता है। परन्तु रंगों को आप समझ सकते हों या नहीं, उनके प्रति आपको सजग रहना है। चिदाकाश के प्रति अपनी सजगता को सतत्, अटूट, अबाध और अनवरत बनाये रखने की कोशिश कीजिये।

अपनी मानसिक सजगता को बीच में टूटने मत दीजिये।
सतत्, अबाध, अटूट और अनवरत सजगता उस चिदाकाश के प्रति जिसके अन्दर अब तक अज्ञात के सभी पक्ष समाये हुये हैं। इस निराकार आकाश में आपका भौतिक शरीर अवस्थित है। चिदाकाश शरीर में नहीं है, बल्कि शरीर चिदाकाश में है।
चिदाकाश के अभ्यास के दौरान आप अनेक प्रकार के प्रकाशों, प्रकाश पुंजों, पदार्थों, विचारों या वस्तुओं को देखेंगे।
लेकिन इन सारी चीजों के साथ सम्पूर्ण चिदाकाश की सजगता आपको बनाये रखनी चाहिये।
यदि ललाट के सम्मुख के आकाश में मन उलझता हो तो आप उसे कहें– 'मैं सम्पूर्ण चिदाकाश के प्रति सजग होना चाहता हूँ।'
सर्वप्रथम आपको चिदाकाश को समझ लेना हैं।
इसके बाद आप रंगों को देखते जायेंगे।
जब आप रंगों को पढ़ लेंगे तब आप अपनी सजगता को भ्रूमध्य केन्द्र में ले जाइये और वहाँ अन्दर या नीचे की ओर जाने वाली एक गोलाकार गुफा और उसके गोलाकार द्वार के प्रति सजग हो जाइये। और आप इस बात के प्रति सजग हों कि एक गुफा है परन्तु आप उसमें प्रवेश नहीं कर पा रहे हैं।
सम्पूर्ण चिदाकाश को फिर दुहराइये।
अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग रहिये।
अपने भौतिक अस्तित्व के प्रति सजग रहिये।
भौतिक शरीर के प्रति अपनी सजगता को गहन कीजिए।
शरीर के प्रति सजगता को तीव्र कीजिये।
सजगता को तब तक बढ़ाते जाइये जब तक आप अपनी समग्र शारीरिक सत्ता के प्रति पूर्णतः सजग न हो जायें।
अब सामान्य सहज श्वास प्रक्रिया के प्रति सजग होइये।
इसे अटूट सजगता से देखिये। श्वास क्रिया के प्रति अटूट सजगता होनी चाहिये।
लेकिन साथ ही साथ शरीर के प्रति सम्पूर्ण सजगता द्वारा उत्पन्न प्रभावों को भी बना रहना चाहिये।

आपको अपनी श्वास के प्रति सजग रहने का अभ्यास पूरी सावधानी के साथ करना है ।

अब एक झटके के साथ चिदाकाश के प्रति सजग हो जाइए— निराकार आकाश, अंदर का आकाश, बाहर का आकाश, जो आपके भौतिक शरीर के चारों ओर फैला हुआ है; जो अनिर्वचनीय है ।

आप उसी आकाश के अन्दर हैं ।

रंगों को ढूंढिये, रंगों के प्रति सजग हो जाइये ।

यदि आप तेजी से बदलते हुये रंगों का ख्याल नहीं कर पाते हैं तो अभी कोई हर्ज नहीं है ।

परंतु इस बात के प्रति सजग रहिये कि रंग बहुत तेज गति से क्षण-क्षण परिवर्तित हो रहे हैं ।

रंग बदलते हैं; उन्हें आपको सावधानी और सजगता से देखना है, अनुभव करना है ।

शरीर के प्रत्येक भाग में रंगों को देखना है, उन्हें अंकित करना है, उन्हें ध्यान से पढ़ना है ।

अभी आपकी चेतना का मुख्य विषय केवल चिदाकाश दर्शन है ।

याद रखिये, जब मैं चिदाकाश कहता हूँ तो मेरा तात्पर्य ललाट के सम्मुख या सिर के ऊपर, सिर के पीछे या पीठ पर या सामने या नीचे के अंधकारमय क्षेत्र या आन्तरिक आकाश से नहीं है । मेरा संकेत समग्र चिदाकाश की ओर है ।

चिदाकाश की सजगता के अभिरूपों की समग्रता ।

यदि आप इसे कर सकते हैं तब आप एक महत् कार्य करने की क्षमता रखते हैं ।

यदि आप चिदाकाश समझ सकते हैं, तब आप अपने शरीर का सार समझ सकते हैं ।

यदि आप इसे समझ सकते हैं, तब आप मानव व्यक्तित्व के अतीन्द्रिय सिद्धान्त का अनुभव कर सकते हैं ।

अब भ्रूमध्य पर जाइये, इसमें प्रवेश करके एक ऐसी गोलाकार गुफा का मानसिक रूप से निर्माण कीजिये जिसका द्वार भी गोलाकार है । कुछ दूर से इस पर दृष्टिपात कीजिए ।

आपको यह अंधकारपूर्ण दिखाई देता है।
आप उस द्वार के निकट जाकर अंदर झाँकिये।
ओह ! सचमुच यहाँ बड़ा अन्धेरा है– न कुछ देखा जा सकता है, न समझा जा सकता है।
और यदि संयोग से आप इसमें चले भी जायें, तो अपने आप को भी नहीं देख सकेंगे।
यही चिदाकाश का गूढ़ पक्ष है।
अब 'ॐ' का सात बार उच्चारण कीजिये।
'ॐ' का उच्चारण करते समय शरीर के प्रति सजग होने के स्थान पर चिदाकाश में अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व के प्रति सजग होइये और इस प्रकार ॐ की ध्वनि-लहरियों को सूक्ष्म अतीन्द्रिय तरंगों में बदल दीजिये।
इसी सजगता के साथ ॐ का उच्चारण कीजिये लेकिन निराकार अंधकारमय चिदाकाश की सजगता को टूटने मत दीजिए।
इस बीच अपने शरीर की सत्ता के प्रति सजगता की झाँकी भी मिलती रहेगी।
इसकी कल्पना इस प्रकार कीजिए– चारों ओर, हर जगह, अन्दर-बाहर चिदाकाश है।
इसे समझिये।
शरीर सजगता का एक रूप प्रतीत होता है।
शरीर सजगता का एक रूप प्रतीत होता है।
'ॐकार' के अभ्यास के साथ यह करना चाहिये–
ॐ....ॐ....ॐ....ॐ....ॐ....ॐ....ॐ....ॐ....
धीरे-धीरे अपने मन को बाहर लाइए।
अपने भौतिक शरीर एवं बाहरी वातावरण के प्रति सजग हो जाइए।
अपनी सजगता को बाहर की ओर प्रसारित कीजिए।
बाहरी आवाजों, अपने आसपास बैठे लोगों की हलचलों और मेरे निर्देशों के प्रति सजग हो जाइए।
अच्छी तरह अनुभव कीजिये कि आप बहिर्मुखी हो रहे हैं।
आप बाह्य वस्तुओं के प्रति सजग हैं।
क्या आपको संगीत, पंखे की आवाज, मेरे स्वर, पास बैठे हुये अन्य

साधकों और स्वयं अपनी बैठी हुई शारीरिक स्थिति के प्रति सजगता है ?
अब तक आप चिदाकाश का अभ्यास कर रहे थे ।
अब आप अपने सिर, शरीर, हाथ, पैर– सब को तनाव रहित कर आँखें खोल दीजिये ।
हरि ॐ तत्सत् ।

चिदाकाश धारणा का दूसरा प्रतिलेखन

अब मेरी ओर सिर करके लेट जाइये ।
आँखें बन्द कर लीजिए । शरीर स्थिर रखिये ।
अपने शरीर की स्थिति ठीक कर लीजिये ताकि आपको अगले तीस मिनटों तक हिलना-डुलना न पड़े ।
ध्यान में मुख्य बात यह है कि आप अपने को इस प्रकार रखिये कि ध्यान करते समय बाहरी वातावरण आपको बाधा न पहुँचा सके ।
एक बार विश्रामदायक स्थिति में आने के बाद बिल्कुल स्थिर हो जाइये ।
ध्यान के अभ्यास की पूरी अवधि में इस बात का ध्यान रखें कि आप सो नहीं रहे हैं; आप जाग रहे हैं ।
भौतिक शरीर का ख्याल कीजिये ।
एड़ी से चोटी तक सम्पूर्ण शरीर का ख्याल कीजिये ।
जब आप अपने शरीर के प्रति सजग होते हैं तो किसी विशेष भाग के प्रति नहीं बल्कि एड़ी से चोटी तक सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग होते हैं।
पूरा शरीर भूमि पर पड़ा हुआ है और आपकी समांगी (homogeneous) सजगता उस पूरे शरीर के प्रति है ।
यह सिर, बाँह, पैर, पीठ या उंगलियों के प्रति सजगता नहीं है, यह समांगी सजगता है जो पूरे शरीर को एक झलक में समेट लेती है ।
जब आप अपने पूरे शरीर के प्रति एकाग्र होते हैं तो अपने आप को यह सुझाव भी देते जाइये– 'सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर, सम्पूर्ण शरीर'।
साथ ही साथ आप भूमि पर पड़े शरीर के प्रति भी सजग हैं ।
भौतिक शरीर पर चित्त को केन्द्रित कीजिए ।
और साथ-साथ शारीरिक स्थिरता के प्रति भी सजग रहिये ।

यदि कोई शारीरिक गति हो भी जाये तो उस गति के प्रति भी आपको सजग होना चाहिये ।
वह गति आपकी जानकारी के बिना नहीं होनी चाहिये ।
लेकिन आप अपनी ओर से कोशिश अवश्य कीजिये कि आपका शरीर तनिक भी न हिले । यह आंतरिक योग का पहला पाठ है ।
यह बात महत्वपूर्ण नहीं है कि आप अपने मन को एकाग्र नहीं कर पाते ।
परन्तु यह अत्यन्त महत्वपूर्ण बात है कि आप अपने पूरे शरीर को स्थिर रखते हुए उसके प्रति सजग हैं ।
जब आप पूरे शरीर के प्रति सजग होते हैं और अपने शरीर को स्थिर रखते हैं, तब एक अनुभव प्राप्त होता है ।
इस अनुभव को आकाशगामिता (levitation) कहते हैं।
ऐसा लगता है कि पूरा शरीर धरती से ऊपर उठ रहा है ।
वास्तव में ऐसा होता नहीं है पर यह एक सूक्ष्म अनुभव है ।
आपको किसी वस्तु पर अपने मन को एकाग्र नहीं करना है, आपको बस अपने शरीर के प्रति सजग रहना है ।
यह ध्यान की सर्वप्रमुख मूल बात है ।
आप धार्मिक दृष्टिकोण से या पद्मासन में, वज्रासन में या लेटकर—किसी भी तरह ध्यान करें, अधिक अन्तर नहीं पड़ता। परन्तु इन सब में एक सामान्य नियम यह है कि शरीर को तनिक भी हिलने-डुलने मत दीजिए ।
प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक आदत जुड़ी हुई है, और वह आदत है अन-जाने में शरीर को हिलाना ।
शरीर द्वारा अनजाने में की गई उंगलियों, सिर, आँखों आदि की गति को जागरूकता के अंकुश से नियंत्रित करना है ।
जब आप पूरे शरीर के प्रति जागरूक होंगे, तब आपको शरीर के मूर्ति-वत् स्थिर होने का अनुभव होगा ।
प्रत्येक मनुष्य में शरीर के अंगों को हिलाने-डुलाने की आदत है, ऐसा करना उन्हें अच्छा लगता है लेकिन आपको जागरूक होकर इस आदत को नियंत्रित करना होगा ।

यदि आप अपनी शारीरिक हलचल को नियंत्रित करने में समर्थ हैं तो वास्तव में आप अपने मस्तिष्क के कुछ भागों और कुछ हद तक मन को भी नियंत्रित करने में समर्थ हैं ।

आप शरीर को हिलाना चाहते हैं पर आप इसके प्रति सजग हो जाते हैं और अपने से कहते हैं–शरीर को हिलाना नहीं है । और जब आप पूरे शरीर के प्रति जागरूक होते हैं, प्रत्येक शारीरिक गति के प्रति जागरूक होते हैं– उन गतियों के प्रति भी जो कुछ देर बाद होने वाली हैं, तब शरीर मूर्तिवत् हो जाता है और चेतना बदल जाती है तथा आकाशगामिता का अनुभव भी होने लगता है ।

अब आप पूरे शरीर के प्रति जागरूक होते हैं तथा शरीर एवं नाड़ियों की गतियों को सजगतापूर्वक नियंत्रित करते हैं तब आपका मस्तिष्क तनावमुक्त और शिथिल होने लगता है ।

अब किसी तरह की कोई गति नहीं होनी चाहिए । अपने शरीर को गतिहीन होने के लिए बाध्य कीजिए ।

एक ही तथ्य के प्रति सजग रहिये– क्या मैं स्थिर हूँ या क्या मैं हिल रहा हूँ ?

अब आपको अपने अँगूठे तक को नहीं हिलाना है । अपनी आँखों, नाक, होंठों, उंगलियों या किसी भी अंग को थोड़ा-सा भी नहीं हिलाना है । इस आवेग को नियंत्रित कीजिए ।

जब आप इसके प्रति सजग रहेंगे, तभी यह सरल हो पायेगा ।

यह ध्यान का पहला भाग है ।

और यह योग का सर्वप्रमुख मूल अभ्यास है ।

मन को नियंत्रित करने के पूर्व आपमें अपने शरीर को नियंत्रित करने की क्षमता आनी चाहिए । सूक्ष्म वस्तुओं पर एकाग्र होने की चेष्टा करने के पूर्व आपको अपने स्थूल शरीर पर पूर्ण रूप से एकाग्र होना चाहिए ।

आप में स्थूल शरीर पर एकाग्र होने की क्षमता होनी चाहिये ।

यह सरल होना चाहिये क्योंकि आप अपने शरीर को जानते हैं, आप अपने शरीर का अनुभव कर सकते हैं, आप अपने पूरे शरीर के प्रति सजगता को विकसित कर सकते हैं और इसलिए आपके लिए अपने

शरीर पर एकाग्र होना आसान होना चाहिये, क्योंकि शरीर स्थूल है। इसे देखा जा सकता है। इसका अनुभव किया जा सकता है।
शरीर की अपेक्षा सूक्ष्म है– श्वास।
अपनी श्वास का ख्याल कीजिये
अपनी स्वाभाविक श्वास का ख्याल कीजिये।
अपने नासिकाछिद्रों में प्रवाहित होने वाली स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग हो जाइये।
अपने श्वास के प्रति इस प्रकार सजग होइये—
'मैं श्वास ले रहा हूँ, मैं श्वास छोड़ रहा हूँ'।
अपनी स्वाभाविक श्वास का ख्याल कीजिये।
सोचिये—आपकी श्वास सहज है।
आपकी श्वास स्वाभाविक है।
जब आप श्वास लें तो आपको पता होना चाहिये कि आप श्वास ले रहे हैं।
जब आप श्वास छोड़ें, तब आपको पता होना चाहिये कि आप श्वास छोड़ रहे हैं।
श्वसन क्रिया के प्रति अनवरत सतत् जागरूकता।
आपकी श्वास सहज और स्वाभाविक है तथा आपके नासिका छिद्रों में हो कर प्रवाहित हो रही है।
यह दोनों नासिका छिद्रों से प्रवेश करती है तथा भ्रूमध्य बिन्दु में पहुँच कर एक हो जाती है।
श्वास एक त्रिकोण बनाती है।
उस त्रिकोण का ऊपरी सिरा है भ्रूमध्य केन्द्र।
त्रिकोण की शक्ल के प्रवाह-पथ से श्वास नासिका छिद्रों से अन्दर जाती है और बाहर आती है।
इसलिये आपको श्वास के प्रति सजगता का अभ्यास करना है, श्वास के प्रवाह-पथ दोनों नासिका छिद्रों तथा भ्रूमध्य बिन्दु के बीच के श्वास-प्रवाह-पथ के प्रति सजग होना है।
श्वास के प्रति सतत् जागरूकता बनाये रखिये।
त्रिकोण की शक्ल में बने मार्ग से बहती हुई श्वास के प्रति सतत्

जागरूकता का विकास कीजिये ।
श्वास का ख्याल करते जाइये ।
अपने आप को श्वास के निकट ले आइये ।
अपने आपको श्वास के निकट ले आइये ।
अब आप श्वास-प्रश्वास के साथ ॐ मंत्र का अनुभव कीजिये ।
आपको केवल 'ॐ' का अनुभव करना है ।
आपको केवल श्वास-प्रश्वास के साथ 'ॐ' का अनुभव करना है ।
अब आपको इसके साथ-साथ एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अभ्यास करना है।
एक तो आपको इस बात के प्रति सजग रहना है कि आप भ्रूमध्य केन्द्र तक नासिका छिद्रों से श्वास ले रहे हैं और छोड़ रहे हैं।
दूसरे, आपको मंत्र के प्रति सजग रहना है ।
श्वास लेते और छोड़ते समय आप दोनों नासिकाओं द्वारा भ्रूमध्य तक एक त्रिकोण बनाते हैं ।
दोनों नासिका छिद्रों से श्वास त्रिकोण के आकार के प्रवाह-पथ से भ्रूमध्य केन्द्र तक जाती है। इसके प्रति सजग होने के साथ आप इस बात के प्रति सजग हैं कि आपके प्रत्येक श्वास-प्रवाह के साथ ॐ जुड़ा हुआ है।
इसके प्रति सजगता बनाये रखिये ।
इसके प्रति सजगता बनाये रखिये ।
इस अभ्यास को दो मिनट तक कीजिये ।
मेरी आवाज से अपना ध्यान हटा लीजिये और इस अभ्यास को जारी रखिये ।
और अगले दो मिनटों तक इसकी चिन्ता न कीजिये कि मैं क्या कह रहा हूँ ।
मेरी ओर से अपना ध्यान पूरी तरह से हटा लीजिये ।
आपकी श्वास-क्रिया और ॐ एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं ।
थोड़ी देर के लिये मुझे भूल जाइये और अपनी ओर ध्यान दीजिये ।
मैं बोलता रहूँ तो भी आपको मेरे निर्देशों से कुछ लेना-देना नहीं है।
मैं बोलता रहूँ तो भी आपको मेरे निर्देशों से कुछ लेना-देना नहीं है ।
अपनी श्वास और मंत्र के अधिकाधिक निकट होते जाइये ।

पूर्ण रूप से सजग रहिये।
सोइये नहीं।
यह महत्वपूर्ण बात है।
मंत्र और त्रिकोणीय पथ पर प्रवाहित होने वाली श्वास के प्रति सजग बने रहिये।
मात्र एक मिनट और।
अब अपने ललाट के अन्दर का ख्याल कीजिये।
ललाट का अन्दर से ख्याल कीजिये, मानो आप किसी दीवार के आंतरिक भाग को देख रहे हैं।
पूरा मस्तिष्क, पूरा कपाल (skull) एक कमरे की तरह प्रतीत हो सकता है और ललाट सामने की दीवार की तरह। आप इस दीवार के अन्दर देखना चाहते हैं।
ललाट के भीतरी भाग को देखते जाइये।
और जब आप ललाट के भीतरी भाग का ख्याल करते हैं तब आप शून्य आकाश के प्रति सजग होते हैं।
यह आन्तरिक शून्य या आन्तरिक आकाश है। यही चिदाकाश है।
जब आप इस आन्तरिक शून्य के प्रति सजग हों, जब आप इस आंतरिक शून्य के प्रति सजग हों, तब अपनी सजगता को तनावमुक्त और शिथिल रखें।
आपका मस्तिष्क, आपका कपाल (skull) एक घर के समान है, एक कमरे के समान है और ललाट सामने की दीवार है।
दाहिनी कनपटी दाहिनी दीवार है।
बायीं कनपटी बायीं दीवार है।
सिर का पिछला हिस्सा पीछे की दीवार है।
सिर का ऊपरी हिस्सा कमरे की छत है।
अब इस कमरे की भीतरी दीवारों को मेरे निर्देश के अनुसार देखने की कोशिश कीजिये।
सामने की दीवार के भीतरी हिस्से का ख्याल कीजिये।
अब अपने मन को दाहिनी दीवार की ओर ले आइये और इस दीवार को अन्दर से देखने की कोशिश कीजिये।

अब अपने मन को बायीं दीवार की ओर ले जाइये और इस दीवार को अन्दर से देखने की कोशिश कीजिये।
अपने मन को पिछले हिस्से की दीवार की ओर ले आइये और इस दीवार को अन्दर से देखने की कोशिश कीजिये।
अपने मन को ललाट के ऊपरी हिस्से की ओर ले जाइये और इस छत को भीतर से देखने की कोशिश कीजिये।
ललाट सामने की दीवार है; दाहिनी कनपटी— दाहिनी दीवार, बायीं कनपटी— बायीं दीवार; पृष्ठ भाग— पिछली दीवार और ऊपरी हिस्सा छत है। आपको इस आकाश का उसके अन्दर से ख्याल करना है, मानो आप एक कमरे के बीच बैठे हों और वहाँ बैठकर दीवारों को अन्दर से देखने की कोशिश कर रहे हों।
जैसा मैं कह रहा हूँ, उसका अनुसरण कीजिए।
सामने, सामने, सामने
दायें, दायें, दायें
बायें, बायें, बायें
पीछे, पीछे, पीछे
ऊपर, ऊपर, ऊपर
सामने, सामने, सामने
दायें, दायें, दायें
बायें, बायें, बायें
पीछे, पीछे, पीछे
अंदर से छत को देखिये–
ऊपर, ऊपर, ऊपर
सामने, सामने, सामने
दाहिने, दाहिने, दाहिने
बायें, बायें, बायें
पीछे, पीछे, पीछे
ऊपर, ऊपर, ऊपर
अब पूरे आकाश के प्रति सजग हो जाइये जो चार दीवारों और अन्दरूनी छत से घिरा हुआ है।

अब तक आप इस आकाश में सामने, दायें-बायें, ऊपर और पीछे के स्थानों को देखने का अभ्यास करते आये हैं। अब आपको अपने अंदर के समांगी (homogeneous) आकाश के प्रति जागरूक होना है। इस आकाश को देखें और अपने को उसके अन्दर अनुभव करें।

विराम

हरि ॐ तत्सत्।

चिदाकाश धारणा का अभ्यास पूरा हुआ।

बीसवाँ अध्याय

त्राटक और अन्तर्त्राटक

त्राटक का अर्थ है– लगातार टकटकी लगाकर देखना। त्राटक के अभ्यास से एकाग्रता बढ़ती है। मन की शक्ति बहुत बड़ी है; लेकिन इच्छाओं और ऊर्जा को नष्ट करने वाले खेल-तमाशों आदि के माध्यम से मन की यह शक्ति चारों ओर बिखर गई है। यदि हम इस बिखरी हुई मानसिक शक्ति को आध्यात्मिक या भौतिक किसी एक उद्देश्य की पूर्ति के लिये इस्तेमाल करें तो हमें निश्चित रूप से सफलता मिलेगी।

हम निरन्तर ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त सूचनाओं के विस्फोट की चपेट में रहते हैं। अनगिनत विचार हमारे मन से होकर गुजरते रहते हैं और उनके प्रति हम अनभिज्ञ ही रहते हैं। अपनी मानसिक क्रियाशीलता के प्रति हम तभी जागरूक होते हैं जब हम कुछ हद तक इन्द्रियों के प्रति अपनी जागरूकता या उन्मुखता को कम कर देते हैं।

आंतरिक या बाह्य किसी एक वस्तु पर एकाग्र होने के लिए मन को नियंत्रण में रखना होगा ताकि वह विभ्रान्त (distracted) न हो सके। इसका एक उपाय यह है कि एकाग्रता के लिए किसी ऐसी चीज का चुनाव कर लें जो मन को शान्ति दे और उसे स्थिर बनाये। इस उद्देश्य से 'ॐ' मंत्र, फूल, गुरु का चित्र, कोई देवी-देवता या मोमबत्ती की लौ में से कुछ भी चुना जा सकता है। त्राटक का अभ्यास प्रारम्भ करने के लिए मोमबत्ती की लौ सर्वाधिक आसान और व्यावहारिक है।

त्राटक की दो अवस्थायें हैं– १. त्राटक और २. अन्तर्त्राटक।

त्राटक : इसमें मन को बाह्य पदार्थ पर एकाग्र किया जाता है। अप्रशिक्षित मन के लिये यही आसान है क्योंकि मन बाह्य पदार्थों से जुड़ा रहना अधिक पसन्द करता है। जब हम किसी आंतरिक प्रतीक या बिन्दु पर ध्यानस्थ होते हैं तब मन तुरन्त ऊब कर विचलित होने लगता है।

अन्तर्त्राटक : इसमें मन को अन्तर्मुख होने का प्रशिक्षण दिया जाता है। इन्द्रियों के माध्यम से कार्य करते रहने पर मन की शक्ति व्यय होती है। लेकिन जब इन्द्रियों से हटाकर आंतरिक वस्तु पर उसे केन्द्रित किया जाय तब उसे शक्ति प्राप्त होती है।

त्राटक के अभ्यास से अनेक लाभदायक प्रभाव होते हैं। ध्यान और स्मरण शक्ति बढ़ाने में त्राटक का नियमित अभ्यास मदद करता है। यह आँखों की मांसपेशियों को सुदृढ़ बनाकर दृष्टि-शक्ति बढ़ाता है। त्राटक से आंतरिक ऊर्जा का भंडार खुल जाता है। भारत में रहस्यमय गुप्त शक्तियाँ प्राप्त करने के लिये त्राटक सबसे महत्वपूर्ण अभ्यास माना जाता है। ईसाइयों में भी प्रतिमाओं, पवित्र चित्रों और धार्मिक प्रतीकों पर त्राटक किया जाता है, यद्यपि वे इस तथ्य के प्रति जागरूक नहीं हैं।

त्राटक से एकाग्रता बढ़ती है क्योंकि इससे चेतन ऊर्जा को एक बिन्दु– ध्यान के केन्द्र बिन्दु की ओर उन्मुख किया जाता है। यह अभ्यास स्वत: ध्यान की ओर ले जाता है। प्रारम्भिक अभ्यासियों को भी कम समय में ही इस प्रकार के अनुभव होने लगते हैं।

त्राटक का अभ्यास अधिकतम स्थिर आसन में करना चाहिये। यद्यपि कुर्सी पर बैठकर या सुखासन में भी यह अभ्यास किया जा सकता है परन्तु अधिकाधिक स्थिर होकर सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में ही इसका अभ्यास करना श्रेयस्कर है। त्राटक बाह्य हो या आंतरिक– इसका अभ्यास करते समय पलकों को झपकाना नहीं चाहिए। दृष्टि भी बिल्कुल स्थिर रहनी चाहिए। प्रारम्भ में यह भले ही कठिन प्रतीत हो, पर अभ्यास से बहुत सरल हो जाता है। इसमें महत्वपूर्ण बात है कि आंखों को तनावरहित रहना चाहिये। आंतरिक बिम्बों को देखने के लिये यह आवश्यक है। मन को सिर्फ वस्तु या बिम्ब पर ही टिकाये रखना है। यदि मन अन्य बातें सोचता हो तो धीरे से उसे खींच कर एकाग्रता के पदार्थ पर ले आना चाहिये।

कोई भी वस्तु एकाग्रता के लिये उपयोग में लाई जा सकती है। निम्नांकित चीजों का उल्लेख सुझाव के तौर पर किया जा रहा है–

मोमबत्ती की लौ, काला बिन्दु, स्फटिक, नासिकाग्र, भ्रूमध्य बिन्दु, शिवलिंग, आकाश, जल, चाँद, तारा, अपनी ही छाया, अन्धकार, शून्य,

आईना, यन्त्र या मण्डल। इष्टदेवता या आपका अतीन्द्रिक (psychic) प्रतीक।

इस पुस्तक में जो विधि दी गई है उसमें त्राटक के लिए मोमबत्ती व्यवहार में लाई जायेगी। इसे कई कारणों से उपयोगी मानते हैं। यह विशेष रूप से प्रभावकारी होती है क्योंकि यह आँखों और मन के लिए चुम्बक का काम करती है। इसमें चमक होती है अत: अन्तर्त्राटक का अभ्यास करते समय आँखें बन्द करने के बाद इसका बिम्ब बहुत स्पष्ट दिखलाई पड़ता है। पहले बाह्य त्राटक किया जाता है, इसके बाद अंतर्त्राटक। बाह्य त्राटक का अभ्यास करते समय बन्द आँखों से जो बिम्ब दिखाई पड़ता है, उसी को अंतर्त्राटक में इस्तेमाल किया जाता है। त्राटक में एकाग्रता के लिए आप जो भी चीज चुनें यथा मोमबत्ती, उसे आँखों की सीध में दो फुट की दूरी पर रखिये। अगर दृष्टिदोष हो तो मोमबत्ती को ऐसी जगह पर रखिये कि वहाँ दो न दिखाई पड़े। अभ्यास करते समय आँखें बन्द करने के बाद बिम्ब इधर-उधर, ऊपर-नीचे भागेगा इसे किसी एक स्थान पर या अधिकांशत: भ्रूमध्य बिन्दु पर केन्द्रित करें।

त्राटक

विधि–

मोमबत्ती को लगभग दो फुट की दूरी पर अपने शरीर के सामने आंखों की सीध में रखिये।

सामने मोमबत्ती जलाइये।

पीठ, गर्दन और सिर को सुविधाजनक स्थिति में सीधा रखिये।

आँखें बन्द कर लीजिये।

अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जाइये।

अपने शरीर को इस तरह व्यवस्थित कर लीजिये कि अभ्यास के बीच में हिलना न पड़े।

शरीर की दृढ़ता का अनुभव कीजिये।

इस स्थिति में दो-तीन मिनट रहिये।

सात बार ॐ का उच्चारण कीजिए।

अपने पूरे शरीर तथा मस्तिष्क में इसकी स्वर-लहरियों को हिलोर लेते हुये अनुभव कीजिये ।
अपनी आँखें खोलकर सिर्फ मोमबत्ती की वर्तिका (wick) को देखिये ।
आँखें पूरी तरह से खुली हुई हों पर उन्हें खोलने में अनावश्यक जोर मत लगाइये ।
आँखों के स्नायुओं को तनाव रहित रखने की कोशिश कीजिये ।
यथा संभव आँखें खुली रखिये, पलकें झपकने न पावें ।
यदि कष्ट हो रहा हो तो पलकें झपका कर अभ्यास फिर जारी कीजिये ।
आँखों की पुतलियों को मत घुमाइये ।
यदि आपका मन भटकता है, तो धीरे से वापस ले आइये ।
इसे तीन मिनट या जितनी देर तक कर सकते हों, कीजिये ।
फिर आँखें बन्द कर लीजिये ।
मोमबत्ती की लौ के बिम्ब का भ्रूमध्य में मानसिक दर्शन कीजिये ।
अपने मन को उसी प्रतिबिम्ब पर टिकाइये ।
यदि कोई अनुभव हो रहा हो तो साक्षी-भाव से देखिये ।
जब तक प्रतिबिम्ब स्पष्ट रहे, इसी प्रकार उसका मानसिक दर्शन करते रहिये ।
पुन: आँखें खोलकर वर्तिका के उपरी बिन्दु को देखिये ।
आपकी सम्पूर्ण जागरूकता इसी बिन्दु पर केन्द्रित होनी चाहिये ।
इसे तीन मिनट या सुविधानुसार कुछ अधिक समय तक जारी रखिये ।
फिर आँखें बन्दकर के बिम्ब पर ध्यान एकाग्र कीजिये ।
जब तक बिम्ब स्पष्ट रहे तब तक ऐसा करते रहिये ।
इस क्रिया को बार-बार दुहराइये ।
कुछ देर आँखें बन्द कर मन की क्रियाओं या मन की निष्क्रियता को देखिये ।
अन्त में आँखें खोलकर मोमबत्ती बुझा दीजिये ।

अन्तर्त्राटक

अब हम लोग पूर्णत: अतीन्द्रिय अभ्यास की चर्चा करेंगे जिसमें हमारी चेतना किसी बाह्य पदार्थ पर नहीं बल्कि एक आन्तरिक वस्तु या

बिन्दु पर टिकती है। इस अभ्यास के लिये मन की शान्ति और शारीरिक स्थिरता की आवश्यकता होती है।

विधि–

सर्वप्रथम काया स्थैर्यम् का अभ्यास कीजिये– पूर्ण शारीरिक स्थिरता। मेरुदण्ड सीधा, सिर सीधा और नेत्र बंद।

मानसिक रूप से सभी मांसपेशियों एवं जोड़ों को तनाव रहित करके सम्पूर्ण शरीर के प्रति जागरूक हो जाइये।

शरीर को मूर्तिवत् स्थिर बना लीजिये।

धीरे-धीरे शरीर भारहीन होता जायेगा।

शरीर सूक्ष्म (subtle) रूप से कड़ा होता जायेगा।

मन को शान्त करने के लिए काया स्थैर्यम् एक सशक्त साधन है।

अब सूक्ष्म श्वसन क्रिया के प्रति सजग हो जाइये।

इसे अन्दर जाते और बाहर आते हुये देखिये।

शरीर में किसी भी तरह का तनाव न रहे। ऐसा होने से श्वास की गति मन्द हो जायेगी। फिर यह बिल्कुल कम हो जायेगी। धीरे-धीरे आप देखेंगे कि सूक्ष्म श्वास कंठ-क्षेत्र में से बह रही है।

अब सात बार 'ॐ' का उच्चारण कीजिये। यह उच्चारण दीर्घ और स्पष्ट होना चाहिये। 'म्' ध्वनि धीरे-धीरे कम हो जाये।

चेतना को भ्रूमध्य बिन्दु पर केन्द्रित कीजिये।

ऐसा सजगतापूर्वक धीरे-धीरे कीजिये; तनावपूर्ण प्रयत्न करके नहीं।

यदि यह कठिन लगे तो अपनी अनामिका उँगली को मुँह में डालकर थूक से भिगो लीजिये, भ्रूमध्य में उससे टीका लगाइये। इस उँगली को थोड़ी देर तक भ्रूमध्य पर टिका रहने दीजिये। फिर उसे वहाँ से हटा लीजिये।

अपनी जागरूकता को भ्रूमध्य केन्द्र पर टिकाकर रखिये और यदि संभव हो तो वहाँ एक छोटा-सा तारा देखने की कोशिश कीजिये। यदि नहीं दिखे तो उसकी कल्पना कीजिये।

शायद यह कुछ देर के लिये प्रकट होगा, फिर लुप्त हो जायेगा। परन्तु यह कभी प्रकट होकर लुप्त हो जाय तो चिन्ता की बात नहीं, उसकी

ओर देखते रहिये ।
यदि यह नहीं दिखाई पड़े तो आप इसकी कल्पना कर सकते हैं ।
आकाश में तारे की कल्पना कीजिये– सीमाहीन आकाश के बीच एक छोटे से तारे की कल्पना कीजिये । यह अचानक टिमटिमाने लगा है ।
लम्बे अभ्यास के पश्चात् यह आंतरिक तारा स्वाभाविक रूप से प्रकट होने लगेगा । यह आपकी आध्यात्मिक कल्पना का विकास है ।
यदि आप भ्रूमध्य में उस तारे को देख सकें तो एक अतीन्द्रिय सूक्ष्म घटना है ।
इसका मतलब है कि आपमें एक नई दृष्टि का विकास हुआ है ।
भ्रूमध्य में आप एक नेत्र के प्रति सजग हो गये हैं।
यह तीसरा नेत्र है । यह मनुष्य में अनवरत वैश्व चेतना का प्रतीक है ।
भ्रूमध्य के प्रति अनवरत जागरूकता को बनाये रखिये ।
यही अन्तर्त्राटक है जिसमें आन्तरिक बिन्दु पर मन को एकाग्र करते हैं ।

त्राटक का कक्षा-प्रतिलेखन

मैं चाहता हूँ कि आप सबसे पहले अपनी शारीरिक स्थिति ठीक कर लीजिये । आप मोमबत्ती की लौ से लगभग एक हाथ दूरी पर रहें ।
लौ को आपकी आँख की सीध में रहना चाहिये । यदि यह ऊँची होगी तो इससे जोर पड़ेगा ।
इसे आपकी आँख की सीध में रहना चाहिये ।
आँखें बन्द करिये । आपको विश्रामदायक स्थिति में होना चाहिये ।
तीन बार 'ॐ' का उच्चारण कीजिये । पूरक कीजिये ॐ....ॐ....ॐ.... ।
आँखें बन्द रखिये ।
अपने शरीर के प्रति जागरूक हो जाइये ।
आप अपने पूरे शरीर का मानसिक दर्शन कीजिये । शरीर के प्रति जागरूक होइये ।
आप अपने शरीर को पेड़ की तरह धरती से उगता हुआ अनुभव कीजिये ।
आपका पूरा शरीर एक वृक्ष की तरह दृढ़ है ।
आपके पैर जड़ हैं और शरीर का बाकी हिस्सा तना है ।

मैं चाहता हूँ कि आप अपने शरीर की दृढ़ता का अनुभव करें। आपका सारा शरीर धरती में गड़ा हुआ है। यह धरती का ही एक हिस्सा है। आपके शरीर और धरती में कोई अन्तर नहीं है। आपका शरीर पृथ्वी से उग रहा है। इसका अनुभव करने की कोशिश कीजिये। अपने पूरे शरीर और धरती पर उसकी दृढ़ता के प्रति जागरूक हो जाइये। आपका सम्पूर्ण शरीर धरती में दृढ़ता से गड़ा हुआ है।

अपने शरीर के प्रति पूर्ण सजगता।

अपने दाहिने पैर के प्रति सजग होइये।

अपने बायें पैर के प्रति सजग हो जाइये या उसका मानसिक चित्र देखिये, या दोनों ही– जैसा आप चाहें।

आपका दायाँ घुटना– पूर्ण जागरूकता।

आपका बायाँ घुटना।

आपकी दायीं जाँघ, बायीं जाँघ।

आपका दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब।

आपकी पूरी पीठ– सजग रहिये।

आपका उदर, आपकी छाती।

आपकी दाहिनी बाँह– पूर्ण सजगता।

आपकी बायीं बाँह।

आपका सिर।

आपका सम्पूर्ण शरीर।

अपने पूरे शरीर के प्रति सजग रहिये।

अपने पूरे शरीर के प्रति सजग रहिये।

मैं चाहता हूँ कि आप मात्र अपने शरीर के प्रति सजग रहें– अन्य किसी चीज के प्रति नहीं।

अब अपनी आँखें खोल लीजिए।

मैं चाहता हूँ कि आप लौ के बीच में देखें, वर्तिका को देखें।

लौ के बीच में देखें, वर्तिका के ऊपरी बिन्दु को देखें।

इस बात की कोशिश कीजिये कि आपकी पलकें नहीं झपकें।

लेकिन इसमें अनावश्यक जोर न लगायें।

आँखों को तनावरहित रखिये।

आप लौ के बीच में वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर दृष्टि जमाइये।
मैं चाहता हूँ कि आप अपना पूरा ध्यान वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर लगाएँ।
इस ऊपरी बिन्दु के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।
यदि पलकें झपकने लगें तो झपका लीजिए, बलात् जोर डालते हुए आँखों को खोले न रखिये। परन्तु मैं चाहता हूँ कि आप बिना पलकें झपकाये हुए जितनी देर तक हो सके, वर्तिका के ऊपरी बिन्दु को देखते जाइए। आपकी पूरी दृष्टि इस बिन्दु पर केन्द्रित रहनी चाहिये।
(दीर्घ विराम)
अपनी दृष्टि द्वारा इस ऊपरी बिन्दु को भेदने की कोशिश कीजिये।
पूर्ण एकाग्रता।
(दीर्घ विराम)
अपनी दृष्टि वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर केन्द्रित कीजिये।
इस बिन्दु के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।
यह बिन्दु आपकी दृष्टि को चुम्बक की तरह खींच रहा है।
अनुभव कीजिए कि आपकी दृष्टि, आपका ध्यान वर्तिका के ऊपरी बिन्दु की ओर खिंचा जा रहा है।
यह आपकी इच्छा पर निर्भर नहीं है। आपका ध्यान इस बिन्दु से जकड़ गया है।
(दीर्घ विराम)
अब अपनी आँखें बन्द कर लीजिये।
मैं चाहता हूँ कि यदि सम्भव हो तो अब आप मोमबत्ती का बिम्ब (after-image) देखिये।
यदि आप इसे देख सकते हैं, तो साक्षी भाव से देखिये।
यदि आप इसे नहीं देख सकते हैं तो चिन्ता न कीजिये। जो कुछ आपकी बन्द आँखों के आगे घटित हो रहा है, केवल उस पर ध्यान दीजिये। आप साक्षी की तरह रहिये। बन्द आँखों के आगे होने वाली घटनाओं के साथ अपने को जोड़िये नहीं।
आपकी बन्द आँखों के आगे जो घटित हो रहा है, उससे अपने को अलग रखिये। उसे भिन्न समझिये, मानो वह सब बाहर घट रहा है।

सजग रहिये।
(दीर्घ विराम)
जो कुछ आपकी बन्द आँखों के आगे हो रहा है उसे होने दीजिये।
उसे दबाइये नहीं।
(दीर्घ विराम)
अब अपनी आँखें खोलकर मोमबत्ती को देखिये।
मैं चाहता हूँ कि आप फिर लौ के बीच में वर्तिका के ऊपरी बिन्दु को देखिये।
आँखों को आराम की स्थिति में रखिये पर झपकाइये नहीं।
लौ के बीच में वर्तिका के ऊपर अपने चित्त को केन्द्रित करने की कोशिश कीजिये।
वर्तिका के ऊपरी बिन्दु का चुम्बकीय आकर्षण अनुभव कीजिए।
(दीर्घ विराम)
इस बिन्दु के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।
लौ के बीच में वर्तिका को देखते रहने में अपने को पूर्णतः लीन कर दीजिए।
अपनी दृष्टि द्वारा वर्तिका के ऊपरी बिन्दु का भेदन कीजिए।
अब अपनी आँखें बन्द कर लीजिये।
पुनः मोमबत्ती का बिम्ब देखिये।
यदि आप उसे नहीं देख सकते हों तो अपनी बन्द आँखों के आगे के आकाश में देखिये कि वहाँ क्या घट रहा है।
आपको सिर्फ एक प्रेक्षक, एक साक्षी की तरह रहना है।
जो कुछ घट रहा है उसके साथ भावनात्मक सम्बन्ध मत बनाइये।
सिर्फ देखिये, और कुछ नहीं।
(दीर्घ विराम)
यदि आप मोमबत्ती का स्पष्ट बिम्ब देख सकते हैं तो आप अभी भी अपना ध्यान वर्तिका पर केन्द्रित रखिये।
यदि आपकी आँखों के आगे दृश्य आवें, सुन्दर चित्र उपस्थित हों तो उन्हें इस तरह देखिये मानो आप टेलीविजन देख रहे हैं।
(दीर्घ विराम)

अब अन्तिम आवृत्ति के लिए आँखें खोलिये।
पुनः अपना पूरा ध्यान वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर लगाइये।
लौ के केन्द्र में देखिए— लौ के मध्य में देखिए।
लौ के केन्द्र में देखिए।
प्रयत्न कीजिये कि आपकी आँखें न झपकें।
आपका प्रयास जितना ही कम होगा, यह उतना ही सरल हो जायेगा।
आप यदि कठिन प्रयास करेंगे तो यह कठिन हो जाएगा।
इसलिये अपने को शिथिल रखिये। इसको अपलक देखना आसान हो जायेगा।
इसके लिए थोड़ा प्रयत्न कीजिए– अधिक नहीं।
अपना ध्यान वर्तिका के ऊपरी बिन्दु पर केन्द्रित कीजिये, किसी और वस्तु पर नहीं।
(दीर्घ विराम)
लौ के केन्द्र में देखिए। वर्तिका को देखिये।
(दीर्घ विराम)
अब अपनी आँखें बन्द कर लीजिये।
यह विधि दुहराइये।
मोमबत्ती का बिम्ब देखने की कोशिश कीजिए।
अन्यथा चिदाकाश देखिये और जो घटता है, उसे केवल साक्षी भाव से देखिये।
साक्षी बनिये, कुछ भी हो आप साक्षी से अधिक कुछ मत बनिये।
सिर्फ देखिये, हस्तक्षेप मत कीजिये।
(दीर्घ विराम)
अब पाँच बार 'ॐ' का उच्चारण कीजिये। ॐ की स्वर लहरियों का स्पन्दन अपने पूरे शरीर में अनुभव कीजिये– पूरे मस्तिष्क में, पूरे कमरे में— हर जगह अनुभव कीजिये।
अनुभव कीजिये कि आप 'ॐ' के स्पन्दन प्रसारित कर रहे हैं। आप ही उन स्पन्दनों को ग्रहण कर रहे हैं।
पूरक कीजिये–ओममम्...ओममम्...ओममम्।
एक मिनट तक आँखें बन्द रखिये और अपनी अनुभूतियों, मानसिक

स्थिति तथा चहचहाती हुई चिड़ियों या आपको जो भी रुचे, उस पर ध्यान दीजिये।
परन्तु एक मिनट तक शान्त बैठे रहिये।
(विराम)
हरि ॐ तत्सत्।

अन्तर्त्राटक का कक्षा-प्रतिलेखन

ध्यान के किसी आसन में बैठ जाइये।
इसके अतिरिक्त हर चीज भूल जाइये।
किसी प्रकार की शारीरिक गति मत कीजिये।
ओऽममम् (साथ-साथ उच्चारण करते हुए।)
ॐ का उच्चारण करते हुए ऐसा अनुभव कीजिये कि इसकी ध्वनि-तरंगें आपके सम्पूर्ण अस्तित्व में व्याप्त हो गई हैं।
ओ.........ऽ.........ऽ.........ऽ.........ऽ.........ममम् (दो बार साथ-साथ उच्चारण करते हुए।)
जब आप ॐ का उच्चारण करें तो यह अनुभव करें कि इसकी ध्वनि आपके मुँह से नहीं निकल रही है। इसकी ध्वनि-तरंगें आपके सम्पूर्ण अस्तित्व में व्याप्त हो रही हैं। मानो आप ही अपने को उनमें विलीन कर रहे हैं।
ओ....ऽ...ऽ...ऽ...ऽ...ममम् (पाँच बार साथ-साथ उच्चारण करते हुए।)
अपने शरीर के प्रति सजग हो जाइये।
शरीर स्थिर रखिये।
अपने भौतिक शरीर का ध्यान कीजिये।
ताकि आप अपने शरीर को स्थिर रख सकें।
चिदाकाश के प्रति जागरूक हो जाइये।
भ्रूमध्य बिन्दु का ध्यान कीजिये—
चाहे बाहर की ओर से, चाहे अन्दर की ओर से।
भ्रूमध्य बिन्दु का अनुभव करने के लिए अपनी उँगली से अपने थूक का टीका लगाइये।

यदि आप इस बिन्दु का आंतरिक या बाह्य अनुभव न कर सकें तो अपने ही जिह्वाग्र से थूक लेकर दोनों भौहों के बीच टीका लगाइये। बाहर या अन्दर की ओर से भ्रूमध्य बिन्दु का ध्यान कीजिये।
यदि आप उस बिन्दु का अनुभव कर सकते हों तो उस पर अपनी एकाग्रता जारी रखिये। नहीं तो अपनी उँगली से लार लगा लीजिये और दबाव बिन्दु पर ध्यान कीजिये।
भ्रूमध्य बिन्दु का ध्यान कीजिये।
एक छोटे तारे का मानसदर्शन कीजिये।
यदि आप ऐसा नहीं कर पाते हों तो उसकी कल्पना कीजिये।
कभी-कभी वर्षा ऋतु में सारा आकाश बादलों से घिरा रहता है, लेकिन किसी स्थान विशेष में कोई एक तारा चमकता रहता है। इसी तरह तारे का मानसदर्शन (या उसकी कल्पना) आपको करना है।
आप उस बीज तारे का भी मानसदर्शन कर सकते हैं जिसे आपने त्राटक के अभ्यास के पश्चात देखा था।
एक तारे का मानसदर्शन (या उसकी कल्पना) कीजिये।
यदि यह सम्भव न हो तो इस प्रकाश-गर्भ या इस आंतरिक छोटे से बिन्दु का मानसदर्शन कीजिये या इसकी कल्पना कीजिए।
अन्तर्त्राटक का अभ्यास कीजिये।
मानसिक रूप से त्राटक स्टैंड को अपने सामने रखिये।
स्टैंड को अपने सामने रखिये। इसके प्रत्येक भाग का सूक्ष्मता से मानसदर्शन कीजिये।
मानसिक रूप से इस पर मोमबत्ती रखिये।
लौ तथा वर्तिका के ऊपरी भाग का ध्यान कीजिये।
इस हॉल में भी त्राटक का अभ्यास करते हुए प्रत्येक व्यक्ति का मानसदर्शन कीजिये।
अपने आपको भी त्राटक का अभ्यास करते हुए देखिये।
स्टैंड आपके सामने है।
इसके प्रत्येक भाग का सूक्ष्मता से मानसदर्शन कीजिये।
इसके ऊपर मोमबत्ती रखिये। मोमबत्ती की लौ को देखिये।
प्रदीप्त वर्तिका के ऊपरी बिन्दु को देखिये।

लौ सुनहली है । यह झिलमिला रही है ।

अपनी ही मोमबत्ती के प्रति नहीं, बल्कि जितने लोग त्राटक का अभ्यास कर रहे हैं, उन सभी की मोमबत्तियों के प्रति जागरूक बनिये ।

अन्तर्त्राटक का अभ्यास कीजिये ।

स्टैंड, मोमबत्ती, जलती हुई वर्तिका का ऊपरी बिन्दु, लौ तथा दोनों भौहों के मध्य एक लघु तारे का मानसदर्शन कीजिये ।

अन्तर्त्राटक का बोध ।

दोनों भौहों के बीच के बिन्दु का ध्यान कीजिए ।

शिवलिंग व अण्डाकार सफेद पत्थर खंड का मानसिक दर्शन कीजिये ।

यह पत्थर आपकी सूक्ष्म चेतना का प्रतीक है ।

दोनों भौहों के बीच के बिन्दु का ध्यान कीजिये तथा दबाव बिन्दु के प्रति सजग होइये ।

मानव चक्षु का मानसदर्शन कीजिये ।

खुला हुआ मानव चक्षु ।

मानव चक्षु का मानसदर्शन कीजिये ।

जीवन्त मानव चक्षु ।

खुला हुआ चक्षु । सूक्ष्मता से इसका मानसदर्शन कीजिये ।

सूक्ष्मता से इसका मानसदर्शन कीजिये ।

सूक्ष्मता से इसका मानसदर्शन कीजिये ।

चमकता हुआ मानव चक्षु ।

चमकता हुआ मानव चक्षु ।

दोनों भौहों के बीच के बिन्दु का ध्यान कीजिये ।

ललाट के पीछे, थोड़ा भीतर ।

दोनों भौहों के मध्य, कुछ पीछे गुलाबी रंग की एक छोटी सी ग्रन्थि की कल्पना कीजिये ।

यह एक मांसल अंग है जो बन्द आँख के सदृश है । आँख खुली नहीं है । उस आँख को खोलने का सूक्ष्म, अतीन्द्रिय प्रयास कीजिये मानो आप किसी वस्तु को खोलने का प्रयास कर रहे हों ।

केवल कीजिये, इस पर ज्यादा सोचिए मत ।

तीसरी आँख को खोलने का प्रयास– भ्रूमध्य बिन्दु के ठीक पीछे ।

उस बिन्दु से बहुत दूर नहीं, बहुत दूर नहीं ।
आँख के सदृश, लेकिन बन्द आँख ।
लहसुन के छोटे टुकड़े की तरह ।
इसे खोलने के लिए आप सूक्ष्म, अतीन्द्रिय प्रयास कर रहे हैं ।
तीसरी आँख का ध्यान कीजिये ।
भ्रूमध्य के पीछे तीसरी आँख का ध्यान कीजिये ।
एक मानसिक सूक्ष्म क्रिया कीजिये ।
आप इस आँख को खोलने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं ।
आप खोलने का प्रयास करते जाइये पर उस पर अधिक सोचिये मत ।
दोनों भौहों के बीच के बिन्दु का ध्यान कीजिये ।
वहाँ एक छोटा-सा तारा है ।
उस जगह पर लघु तारे का विचार या उसके बिम्ब को अध्यारोपित कीजिये ।
खुले हुए मानव-चक्षु का मानसदर्शन कीजिए ।
दोनों भौंहों के मध्य थोड़ी गहराई में– तीसरी आँख ।
तीसरी आँख के बिम्ब का विकास कीजिये ।
एक मांसल अंग के रूप में आँख का मानस दर्शन कीजिये ।
दोनों भौहों के बीच के बिन्दु का ध्यान कीजिये ।
अपने सामने एक स्फटिक का मानसदर्शन कीजिये ।
ऐसा सोचिये कि आप उस पर त्राटक का अभ्यास कर रहे हैं ।
स्फटिक पर त्राटक का अभ्यास करते हुये अपने को देखिये ।
स्फटिक पर त्राटक का अभ्यास करते हुये अपने को देखिये ।
स्फटिक की गहराई में देखने का प्रयत्न कीजिये ।
अपनी रुचि के किसी प्रतीक का मानसदर्शन कीजिये ।
अपने इष्टदेव के बिम्ब को विकसित कीजिये ।
यह महत्वपूर्ण क्रिया है । इसे करते जाइये ।
अन्तर्त्राटक का बिम्ब विकसित कीजिये ।
अन्तर्त्राटक का बिम्ब विकसित कीजिये ।
याद कीजिये, जब आप सब प्रातः चार बजे हॉल में त्राटक का अभ्यास कर रहे थे ।

आपने त्राटक स्टैण्ड को किस प्रकार रखा था ?
उस पर मोमबत्ती किस प्रकार रखी थी ?
क्या वह जल रही थी ?
मोमबत्ती की सुनहली लौ ।
प्रदीप्त वर्तिका का ऊपरी बिन्दु जिस पर त्राटक का अभ्यास करते थे।
अन्तर्त्राटक के समांगी बिम्ब को विकसित कीजिये ।
इस हॉल में बहुत सी मोमबत्तियाँ जल रही हैं ।
इस हॉल में बहुत सी मोमबत्तियाँ जल रही हैं ।
आपकी मोमबत्ती आपके सामने है ;
और आपके सामने अनेकानेक मोमबत्तियाँ हैं जिन्हें आप देख रहे हैं।
आप मोमबत्ती, उसकी लौ और वर्तिका को सूक्ष्मता के साथ देखते रहे हैं।
फिर अन्तर्त्राटक का बिम्ब विकसित कीजिये ।
प्रात: चार बजे का समय याद कीजिए ।
उस समय आप आये और आसन पर त्राटक स्टैण्ड के सामने बैठ गये ।
फिर आपने स्टैण्ड पर मोमबत्ती रखी । उसे जलाकर फिर उसके द्वारा दूसरी मोमबत्ती को जलाया ।
कुछ देर बाद, पूरें हाल में अनेकानेक मोमबत्तियाँ और अनेकानेक त्राटक अभ्यासार्थी ।
प्रत्येक मोमबत्ती एक-एक स्टैण्ड पर रखी हुई है ।
आपके सम्मुख सुनहले रंग की प्रदीप्त वर्तिका का ऊपरी बिन्दु है ।
आपके दाहिने-बायें और पीछे अनेकानेक मोमबत्तियाँ हैं और बहुत से लोग स्थिर बैठे हुये खुली आँखों से त्राटक का अभ्यास कर रहे हैं ।
फिर वे अपनी आँखें बन्द कर लेते हैं ।
जब उनकी आँखें बन्द थीं तब वे एक छोटा सा तारा देख रहे थे ।
इस बिम्ब को विकसित कीजिये ।
मोमबत्ती और लौ, मोमबत्ती और लौ ।
दोनों भौहों के मध्य के बिन्दु का ध्यान कीजिये ।
और अपने सामने एक स्फटिक का मानसदर्शन कीजिये । गहराई में उतरिये ।
इसमें अपने इष्ट देवता का ध्यान कीजिये ।

यह एक महत्वपूर्ण क्रिया है।
अपनी उस सम्पूर्ण सत्ता का ध्यान कीजिये जो केवल शरीर ही नहीं, केवल विचार ही नहीं बल्कि 'मैं' का प्रतिनिधित्व करती है।
यह 'मैं' आपकी आत्मचेतना है।
इस 'मैं' का ध्यान कीजिए जो वर्षों से अपरिवर्तित रहा है और जो भविष्य में भी अपरिवर्तित रहेगा। शरीर का द्रष्टा 'मैं', विचारों का द्रष्टा 'मैं'। आंतरिक और बाह्य सभी वस्तुओं का द्रष्टा 'मैं'।
विचारों का द्रष्टा 'मैं'।
आन्तरिक और बाह्य सभी वस्तुओं का द्रष्टा 'मैं'।
'मैं' की समांगी धारणा।
इसे अपने ढंग से, अपने क्रम विकास के अनुकूल कीजिए। जब आप 'मैं' की समांगी जागरूकता विकसित कर लेते हैं तब सभी चीजें इसके साथ एकाकार हो जाती हैं।
इससे कुछ भी भिन्न नहीं है।
हर चीज इसमें समाई हुई है।
'मैं' की समांगी धारणा।
आत्म जागरूकता का विकास कीजिए– प्रत्येक वस्तु में 'मैं' हूँ।
चेतना को 'मैं' की इस चेतना में मिला दीजिए।
अपने प्रति जागरूक होइये।
अपनी सम्पूर्ण सत्ता के प्रति जागरूक होइये।
अपनी सम्पूर्ण सत्ता के प्रति जागरूक होइये।
अपनी जागरूकता के प्रति जागरूक होइये।
प्रत्येक वस्तु के प्रति जागरूकता।
अपने अंदर की प्रत्येक वस्तु के प्रति सजगता के प्रति जागरूक रहिये।
ओ.........ऽ.........ऽ.........ऽ.........ऽ.........म म म् (साथ-साथ इसका उच्चारण करते हुये)
विश्राम नहीं करें।
अपने से पूछिये–'मैं कौन हूँ?'
इस प्रश्न का अर्थ समझते हुए जागरूकता के साथ इसी प्रश्न को दुहराइये।

'मैं' कौन हूँ ?
'मैं' के बोध से ही प्रत्येक वस्तु यहाँ तक कि स्वयं को भी जाना जाता है ।
मैं जानता हूँ कि 'मैं हूँ' ।
मैं जानता हूँ कि 'मैं हूँ' ।
मैं केवल स्थित ही नहीं हूँ बल्कि जानता हूँ कि स्थित हूँ ।
केवल मेरा अस्तित्व ही हो ऐसी बात नहीं है । बल्कि मैं जानता हूँ कि मेरा अस्तित्व है ।
यह 'मैं' शरीर को जानता है ।
मैं जानता हूँ कि मेरा शरीर है ।
मैं जानता हूँ कि मेरा शरीर है । मैं इसका अनुभव करता हूँ ।
मैं अपने शरीर का अनुभव करता हूँ ।
मैं इसे देखता हूँ ।
मैं इसका अनुभव करता हूँ ।
मैं इसके बारे में जानता हूँ ।
मुझे याद है कि पिछले कई वर्षों से मेरे पास यह शरीर था और मुझे पता है कि मेरा यह शरीर है ।
मैं सोचता हूँ और साथ ही यह भी जानता हूँ कि मैं सोचता हूँ ।
मैं सोचने की प्रक्रिया के प्रति सजग हूँ ।
मैं अपने विचारों का द्रष्टा हूँ ।
मैं केवल सोचता ही नहीं हूँ, बल्कि जानता हूँ कि मैं सोचता हूँ ।
मैं भूतकाल के प्रति जागरूक हूँ ।
मैं अपने सम्पूर्ण अस्तित्व के प्रति जागरूक हूँ ।
मैं अपना द्रष्टा हूँ ।
मैं अपना द्रष्टा हूँ ।
अपने में इस जागरूकता के प्रति व्यावहारिक रूप से जागरूक हो जाइए ।
अपने में इस जागरूकता के द्वारा ही आप जानते हैं कि आप हैं, आपका अस्तित्व है ।
अपने क्रम-विकास के अनुकूल इसका अभ्यास अपने ढंग से कीजिए ।
सजगता का ध्यान कीजिए ।
सजगता का ध्यान कीजिए ।

सजगता का ध्यान कीजिये।
सजगता का ध्यान कीजिये।
सजगता की प्रक्रिया का ध्यान कीजिये।
ओ....ऽ....ऽ....ऽ....ममम् (एक साथ)
विश्राम नहीं।
किसी भी शर्त पर शरीर को नहीं हिलाइये।
अपने को द्रष्टा समझिए।
अपने द्रष्टा रूप का ध्यान कीजिये।
अपने शरीर के द्रष्टा के रूप में अपना ध्यान कीजिये।
हाँ! मैं शरीर के प्रति सजग हूँ।
मैं शरीर को देख रहा हूँ।
इसी तरह द्रष्टा और दृश्य के प्रति इस जागरूकता को विकसित करते जाइये।
द्रष्टा– जो अमूर्त है।
और दृश्य– एक भौतिक पार्थिव शरीर।
शरीर को देखते जाइये।
पीछे आइये और देखने की प्रक्रिया (एक मन:शक्ति जो शरीर के प्रति जागरूक थी) के प्रति जागरूक बनिये।
पुनः अंतर्मुख होइये और उस दूसरे द्रष्टा को देखने की चेष्टा कीजिये जो आपके शरीर को साक्षी के रूप में देख रहा है, जो शरीर दर्शन की पूरी प्रक्रिया के प्रति सजग है।
इसे दुहराइये– एक मिनट के अन्दर।
इसे जल्दी से पूरा कीजिये।
शरीर के प्रति सजग रह कर दूसरे द्रष्टा को देखिये।
अब इसे पुनः स्वयं कीजिये।
शीघ्रता कीजिये।
अब एक साथ ॐ कार का उच्चारण करेंगे।
ओ.ऽ...ऽ...ऽ...ममम्.....ओ...ऽ...ऽ...ऽ...ऽ...ममम्...ओ...ऽ...ऽ...ऽ...ममम्।
हरि ॐ तत्सत्।

इक्कीसवाँ अध्याय

नाद योग

'नाद' का व्युत्पत्ति मूलक अर्थ है– चेतना का प्रवाह। इसका सामान्य अर्थ है ध्वनि। ध्वनि के प्रकटीकरण के चार स्तर हैं जिनसे नाद योग की तकनीक विकसित होती है। ये निम्नांकित हैं–

परानाद : इसे अतीन्द्रिय नाद कहते हैं। इसमें इतनी अधिक कम्पन आवृत्ति होती है कि यह कम्पन के परे अनगिनत तरंग-दैर्ध्य (wave-length) वाला बन जाता है। उपनिषद में इसे 'ॐ' कहा गया है, इसकी प्रकृति को ज्योति की संज्ञा दी गई है। 'ॐ' शान्ति है। ध्यान में प्रकाश और शान्ति एक ही है। सामान्य ध्वनि से इसका अन्तर स्पष्ट करते हुए इसे 'ॐ', अनहद, सीमाहीन, निर्गुण, स्वरहीन....कहा गया है। यह आंतरिक शान्ति है, मूल ध्वनि या ध्वनि की सम्भावना है। परा समाधि से पूर्व की अंतिम स्थिति है।

पश्यन्ति : यह मानसिक नाद है जो ध्वनि की मानसिक अनुभूति है। स्वप्न में सुना हुआ संगीत या जिस ध्वनि या राग की याद बार-बार आये, वह यही है। यह ध्वनि कान की अपेक्षा मस्तिष्क के अधिक निकट है।

मध्यमा : परानाद तथा पश्यन्ति से कम तथा बैखरी से अधिक कम्पन-आवृति वाली ध्वनि। यह अश्रव्य फुसफुसाहट की ध्वनि है।

बैखरी : दो वस्तुओं के घर्षण से उत्पन्न ध्वनि यथा वाणी, संगीत आदि।

नाद योगियों का यह विश्वास है कि जगत ध्वनि-कम्पन का प्रक्षेपण (projection) है। यह वास्तविक अनुभव पर आधारित है। भारतीय शास्त्र में अंतिम अतीन्द्रिय ध्वनि वैश्व-स्रोत ब्रह्म के समकक्ष है। मुसलमान संतों ने भी ऐसा कहा है कि शब्द और रूप से ही संसार का उद्भव हुआ है। ईसाई धर्म ग्रन्थ बाईबिल में भी कहा गया है–'प्रारम्भ में शब्द था, शब्द ईश्वर के साथ था, शब्द ईश्वर था।'

प्राचीन काल में संगीत पद्धति का विकास नादयोग साधनाओं के अनुरूप ही हुआ था। नाद की विभिन्न तरंगें चेतन जागरूकता के विभिन्न स्तरों को आकर्षित करती हैं। कुछ नाद-कम्पन दिन के किसी विशेष काल के लिये अनुकूल होते हैं और कुछ प्रतिकूल। व्यक्ति-व्यक्ति पर भी इनके प्रभाव की भिन्नता होती है। संगीत में इन नाद कम्पनों को राग कहते हैं। लघु-कम्पनों वाले प्रातःकालीन भारतीय संगीत कुछेक लोगों को ही प्रभावित करते हैं। संध्या या अर्धरात्रि के लिए उपयुक्त रागों की लोकप्रियता अधिक है। संगीत का प्रभाव ग्रहण करने के लिये कई घंटों तक उसका श्रवण करना चाहिये।

नाद योग अस्तित्व को पाँच क्षेत्रों में विभाजित करता है—भौतिक, प्राणिक, मानसिक, अधिमानसिक और आत्मिक (या आनन्द)। प्रत्येक क्षेत्र का नाद एक प्रतीक है जो मन को चेतना की गहराइयों में ले जाता है। भौतिक शरीर का नाद हृदय, फेफड़े, मस्तिष्क, रक्तसंचार, चयापचय आदि की क्रियाओं में होने वाली ध्वनि है। जब भौतिक स्तर का अतिक्रमण होता है तब प्राणिक चेतना की गतिविधियों के सूक्ष्म स्वर सुनाई पड़ते हैं। नादयोगी सदा ही अपनी आंतरिक सत्ता में एक बिन्दु सदृश केन्द्र तक जाती हुई सूक्ष्मतर ध्वनियों के क्रमबद्ध प्रवाह का अनुभव करते हैं। भक्तों के लिये यह केन्द्र अनाहत चक्र में, वेदान्तियों के लिए सहस्रार में और योगियों के लिये आज्ञाचक्र में है। नाद योगी बिन्दु में एक नाद अर्थात अनवरत, सहज नीरव ध्वनि का अनुभव करते हैं। *भागवत* में नाद योग को एक अन्योक्ति के रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है—

कृष्ण अर्धरात्रि में अपना महल त्याग वन में चले गए। शरद पूर्णिमा की रात थी। वे बाँसुरी बजाने लगे। बंसी की ध्वनि शांत वातावरण में फैल गई। संगीत की ध्वनि जंगल से उठी जिसे गोपियों ने सुना। बंसी की धुन सुनते ही उन्होंने अपने घर, पति, गृहकार्य सब छोड़ दिये। वे अपना विगत जीवन ही भूल बैठीं। वे बिना कुछ सोचे उस स्थान को दौड़ पड़ीं जहाँ से ध्वनि आ रही थी। वे बंसी-वादक (कृष्ण) के चारों ओर नाचने लगीं। कुछ समय बाद प्रत्येक गोपी को ऐसा लगने लगा कि वह एक कृष्ण के साथ नृत्य कर रही है।

कृष्ण उच्चतर चेतना के प्रतीक हैं और उनका बाँसुरी-वादन है नाद साधना । गोपियाँ इन्द्रियाँ हैं जो बाह्य परिस्थितियों (घर-गृहस्थी पति-आदि) को भूलकर अंतर्मुखी हो जाती हैं और नाद बंसी-ध्वनि के चारों ओर नाचती हैं। कृष्ण चुम्बक की भाँति हैं। बंसी का स्वर पश्यन्ति अवस्था की ध्वनि है जिसे सुना नहीं जाता, बल्कि उसकी आवृत्तियों का अनुभव किया जाता है ।

कुछ लोग 'ॐ' को ही परम स्वर मानते हैं। कुछ लोगों का कहना है कि 'ॐ' का स्वर मधुमक्खियों की अनवरत गूँज की तरह है । नाद योग के अनुसार यह स्वर आनन्दमय कोश से या चेतना के तीसरे आयाम से आता है । यह वह अवस्था है जहाँ व्यक्ति उच्चतम चेतना का अनुभव नाद में करता है तथा सम्पूर्ण जगत को ध्वनि के रूप में देखता है।

नादयोग का अभ्यास–

इस विधि में मन की गहराइयों तक ध्वनि के माध्यम से पहुँचा जाता है । योग विज्ञान, अनेकानेक धर्म तथा दर्शन इस बात को मानते हैं कि बाह्य जगत का आधार शब्द ही है। विज्ञान भी इस बात से सहमत है कि ध्वनि कंपनों तथा कंपन-ऊर्जा की अनवरत क्रीड़ा है । ध्वनि और कुछ नहीं, कम्पनों की एक विशेष आकृति मात्र है । योग का विश्वास है कि मस्तिष्क और शरीर की विभिन्न स्थूल-सूक्ष्म सतहें ध्वनियों के असंख्य कम्पनों के ही घनीभूत रूप हैं ।

यह अभ्यास साधक को उत्तरोत्तर सूक्ष्म होती हुई ध्वनियों का बीच से होते हुए एक ऐसे बिन्दु पर पहुँचाता है जहाँ सूक्ष्म तथा स्थूल दोनों प्रकार की ध्वनियों का पूरा वर्णक्रम (spectrum) सुनाई पड़ता है । प्रत्याहार के लिये यह एक अत्युत्तम अभ्यास है । इससे ध्यान की स्थिति शीघ्र प्राप्त हो जाती है । जिस प्रकार संगीत मन की सूक्ष्म स्थितियों को उत्पन्न करता है, उसी प्रकार नाद भी यही कार्य करता है ।

प्रारंभ में अभ्यास के लिये एक शान्त परिवेश का चुनाव करना चाहिये । इससे बाह्य ध्वनियाँ अतरिक ध्वनियों के प्रत्यक्ष ज्ञान में बाधा नहीं पहुँचा सकेंगी । गहरी रात्रि या भोर का पहला पहर इसके लिए

उपयुक्त होगा । जब साधक सूक्ष्म ध्वनियों को सरलता से पहचानने लगे तब नाद योग का अभ्यास किसी समय, कहीं भी और बिना कान बन्द किये हुए भी किया जा सकता है। इसका अभ्यास प्रतिदिन करना चाहिये । प्रारम्भ में पन्द्रह मिनट या उससे कुछ अधिक इसके लिये दीजिये। जब कुछ अनुभव प्राप्त होने लगें, तब अपनी सुविधा के अनुसार इस समय को बढ़ा सकते हैं।

प्रारंभिक अभ्यास

नादानुसन्धान आसन में बैठिये और आँखें बन्द कर लीजिये।
पूरे शरीर और मन को शिथिल कीजिये।
अब आप पूर्ण रूप से शान्त हैं।
इस समय आप केवल ध्यान का अभ्यास करने की बात सोच रहे हैं।
गहरी साँस लीजिये और गुंजन-ध्वनि निकालिये।
ऊपर और नीचे के दाँतों को एक-दूसरे से थोड़ा दूर रखिये। मुँह बन्द रखिये।
मधुमक्खी के गुंजन की तरह आपका गुंजन होना चाहिये।
अनुभव कीजिये कि गले के नीचे के गड्ढे से इस गुंजन-ध्वनि के स्पन्दन ऊपर उठ रहे हैं और पूरे सिर के अन्दर फैल गये हैं।
लगभग तीस सेकेंड तक यह अनुभव कीजिये।
पाँच मिनट तक गुंजन-ध्वनि करते रहिए।
ध्वनि के स्पन्दनों पर ही मन लगाइये।
अब गुंजन-ध्वनि बन्द कीजिये।
अब इस ध्वनि की सूक्ष्म अभिव्यक्तियों को सुनने का प्रयास कीजिये।
किसी एक अभिव्यक्ति पर ध्यान लगाइये।
इसे सुनते जाइये।
आप देखेंगे कि वह एक अभिव्यक्ति (ध्वनि) स्पष्ट से स्पष्टतर होती जा रही है।
केवल इसी ध्वनि पर ध्यान दीजिये। सावधानी से इस ध्वनि को सुनिये।
यदि आपकी श्रवण-क्रिया अति संवेदनशील है तब आपको पृष्ठभूमि में एक दूसरी ध्वनि सुनाई पड़ेगी।

यह दूसरी ध्वनि धीमी हो सकती है परन्तु इसका अनुभव स्पष्ट होगा।
अब पहली ध्वनि पर ध्यान मत दीजिये।
इस दूसरी ध्वनि पर ध्यान दीजिये।
पहली ध्वनि से आगे निकलकर अब दूसरी ध्वनि को अपनी पूरी सजगता के साथ अनुभव कीजिये।
ऐसा करते जाइये।
यदि आपकी श्रवण-क्रिया की संवेदनशीलता पूर्ववत् है तो अब आप एक तीसरी ध्वनि को उभरता हुआ अनुभव करेंगे।
यह तीसरी ध्वनि दूसरी ध्वनि की अपेक्षा धीमी होगी।
अब इस नई ध्वनि पर ध्यान लगाइये।
अब पूरा ध्यान इस नई ध्वनि पर लगाइये।
ऐसा करते जाइये।
एक ध्वनि का अनुभव कीजिये। जब अपेक्षाकृत एक से अधिक ध्वनियों का अनुभव करने लगें तो पहले की ध्वनि पर ध्यान न दीजिये।
जितनी ही सूक्ष्म ध्वनि का अनुभव आप करेंगे, उतना ही मन की गहराइयों तक पहुंचेंगे।
यह अभ्यास करते-करते आप 'ध्यान' की अवस्था तक पहुँच जायेंगे।
यदि प्रारम्भ में आप किसी सूक्ष्म ध्वनि का अनुभव न कर सकें तो निराश न होइये।
अभ्यास करते रहेंगे तो निश्चय ही आपको सफलता मिलेगी। पहले आप बाह्य ध्वनियों से आगे जाना सीखिये; फिर धीरे-धीरे सूक्ष्म और सूक्ष्मतर ध्वनियों से भी।
सुनाई पड़ने वाली ध्वनियाँ किस प्रकार की होंगी, इसका पता साधक को ही हो सकता है। परन्तु वे ध्वनियाँ घंटी, वीणा, चिड़िया आदि की ध्वनियों की तरह हो सकती हैं।

नाद योग का कक्षा-प्रतिलेखन

अब कृपया ध्यान के लिये बैठ जाइये। मैं ध्यान के बीच ही में आपको कान बन्द कर लेने को कहूंगा।

तब आप तर्जनी या अँगूठों से सुविधानुसार कुछ समय के लिये कान बन्द कर लेंगे।

अब आँखें बन्द करके मेरुदण्ड में उज्जायी का अभ्यास कीजिये।

सब कुछ भूल जाइये। मेरुदंड में उज्जायी में साँस लीजिये और छोड़िये।

उज्जायी का अभ्यास गहन एकाग्रता के साथ कीजिये।

आँखें बन्द रखिये। मुझे ध्यानपूर्वक सुनिये।

आँखें मत खोलिये। मुझे ध्यानपूर्वक सुनिये।

अब अपने कानों को बन्द करके मधुमक्खी की भनभनाहट का स्वर निकालिये और साथ ही 'ॐ' का उच्चारण कीजिये।

आपको लय के साथ मानसिक रूप से ॐ का उच्चारण करना है।

कृपया इसे अच्छी तरह समझिये।

सबसे पहले आप अपने कान बन्द कीजिये, तब नीचे से ऊपर उज्जायी में श्वास लीजिये और मधुमक्खी की तरह लगातार गुंजन कीजिये।

अब इस प्रकार आवाज निकालते हुए लयबद्धता के साथ 'ॐ' के मानसिक विचार को गूँजने दीजिये।

जब आप गुंजन का स्वर निकालते हैं तब आप श्वास छोड़ते हैं और जब श्वास लेते हैं तब यह स्वर मेरुदंड में उज्जायी के रूप में ऊपर जाता है।

कान पूरे समय तक बन्द रहेंगे।

यदि आप थक गये हों तो अपने हाथों को कुछ देर के लिये घुटनों पर रख सकते हैं। कान खुले रहें तो भी अभ्यास जारी रखिये।

कानों को दुबारा बन्द कर लीजिये और अभ्यास जारी रखिये।

महत्वपूर्ण बात है– मेरुदंड में उज्जायी में श्वास लेना।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि आप अपने कान बन्द रखकर गुंजन-ध्वनि उत्पन्न करते हैं और मानसिक रूप से ॐ का अनुभव करते जाते हैं।

ॐ का उच्चारण मानसिक रूप से तथा लय के साथ कीजिए। लेकिन ॐ का ही उच्चारण हो, यह अनिवार्य नहीं है। यदि आपका कोई अपना मंत्र है तो उसका भी उच्चारण कर सकते हैं।

यदि आपका अपना मंत्र है तो ॐ के बदले वही कीजिए।

इसे एक बार और दुहराने के लिए मेरुदंड में उज्जायी में श्वास लीजिये।

कान बन्द रखकर ही श्वास छोड़िये । इसके साथ ॐ या अपने मंत्र के मानसिक कम्पन को भी जोड़िये ।

अब मंत्रोच्चारण बन्द कर दीजिये । गुंजन ध्वनि बन्द कर दीजिये ।

आँखें बन्द रखिये । आँखें बन्द रखिये । किसी प्रकार की आवाज न कीजिये ।

अब आप ध्यान लगाकर सुनिये ।

ध्यान लगाकर सुनिये– सहज, आन्तरिक ध्वनि को ध्यानपूर्वक सुनिये ।

(दीर्घ विराम)

कुछ देर बाद, पहली ध्वनि की पृष्ठभूमि में आप दूसरी ध्वनि सुन सकते हैं। यह ध्वनि मधुमक्खी की, मोटर की या समुद्र की हो सकती है ।

इस दूसरी ध्वनि पर ध्यान दीजिये और केवल इसी को सुनिये ।

सिर्फ इस दूसरी नई आवाज को सुनिये ।

पहली आवाज पर ध्यान मत दीजिये ।

(दीर्घ विराम)

अब फिर एक नई ध्वनि सुनाई देगी ।

सम्भव है यह पहली आवाज हो जो लौट आई हो । यह बिल्कुल नई आवाज भी हो सकती है ।

इस नई आवाज को सुनते जाइये ।

हर बार जब नई ध्वनि सुनाई दे तो उस पर ध्यान दीजिये ।

(अति दीर्घ विराम)

अपने हाथों को घुटने पर ले आइये ।

शरीर स्थिर रहे । शरीर स्थिर रखिये और आँखें बन्द ।

इस विधि को नाद योग कहते हैं । यह स्नायविक उत्तेजना को कम करके आपको किसी भी तरह के ध्यान के लिए तैयार करती है ।

आप किसी भी चीज पर ध्यानस्थ हो सकते हैं । आपको ललाट की भीतरी दीवार पर ध्यानस्थ होना है ।

आप जिस बिम्ब पर ध्यानस्थ होना चाहें वह ललाट की भीतरी दीवार पर उभरेगा, मानो ललाट की वह दीवार श्यामपट हो और आप उस पर उस बिम्ब का चित्र खींच रहे हों ।

कृपया बिम्ब का मानसिक चित्रण कीजिये।
कृपया एक ही बिम्ब पर ध्यानस्थ होइये।
मात्र तीन मिनट के लिए गहन एकाग्रता के साथ ऐसा कीजिये।
कोई तनाव या श्रम नहीं होना चाहिए। केवल गहन एकाग्रता हो।
हरि ॐ तत्सत्।

बाईसवाँ अध्याय

निराकार ध्यान

ध्यान किसी भी वस्तु का किया जा सकता है। इसकी कोई सीमा नहीं है। ध्यान पद्धति को समझने के लिए नीचे कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं। इनका अभ्यास करने के पूर्व इन्हें सावधानी से पढ़ें। इनके निहितार्थ तथा संदेश को ग्रहण करने का प्रयास करें। फिर इस समझ के साथ इनके अर्थों का अनुभव करें।

पाठक को अपनी स्वाभाविक आंतरिक रुचि के अनुरूप ध्यान-विधि चुन लेने के लिये प्रयोग करना होगा। यह अच्छा होगा कि वे विभिन्न ध्यान-विधियों का अध्ययन करके अपने लिए एक या विभिन्न विधियों का मिला-जुला रूप तय कर लें तथा आवश्यकतानुसार उसमें अपने विचार जोड़ लें ताकि वह उनके लिए बिल्कुल अनुकूल बन सके।

प्राणधारा (रवीन्द्रनाथ ठाकुर)

मेरी नस-नस में अहर्निश प्रवाहित होने वाली
प्राणधारा
वही तो है
जो संसार के एक छोर से दूसरे छोर तक
थिरक-थिरक कर नाच रही है।
इस धरा के प्रत्येक धूलि-कण में,
प्रत्येक तिनके में,
एक-एक फूल और पत्ती में,
जन्म-मरण के पालनोदधि में,
ज्वार-भाटा सदृश जीवन के उतार-चढ़ावों में,

मेरा ही प्राण तो है।
मेरे अंग-प्रत्यंग
इस सर्वव्यापी प्राण के स्पन्दन से
गौरवान्वित हो रहे हैं।
युग-युगों से प्रवाहित प्राणों के स्पन्दन की यह धारा
मेरे रक्त के साथ मिल कर
प्रसन्न हो नृत्य कर रही है।

आनन्दोदधि

प्रत्येक वस्तु एक दैवी ऊर्जा है–
जो सर्वव्यापी, असीमित, कम्पायमान और सतत् गतिशील है।
सम्पूर्ण शरीर विश्व के साथ सुमेलित होकर प्रदोलित होता है।
पूरा विश्व शरीर से सुमेलित रहता है।
असीमित ऊर्जा, प्रकाश ऊर्जा, जीव ऊर्जा,
विद्युत, स्वर–
के उदधि में डुबकी लगाओ।
नीरवता, शान्ति और कालातीतत्व की लहरों के साथ बहो।
सभी कुछ ऊर्जा है।

सम्पर्क प्रकृति के साथ

चन्द्रमा को देखो
कितना ज्योतित, कितना शान्त, कितना सुकोमल!
इसके अनगिनत प्रकाश-कण
तुम्हारे शरीर का आलिंगन कर रहे हैं–
इसका अनुभव करो।
पर्वतों पर जाओ।
गाँवों में जाओ।
प्रकृति के साथ अपने को सुमेलित करो।

शान्त हो जाओ ।
अनुभव करो कि तुम
प्रत्येक वस्तु के एक अंग हो ।
सांसारिक प्रपंचों को भूल कर
अपने को तनावमुक्त करो ।
प्रकृति और अपने बीच के सुमेल को,
सामंजस्य को
अनुभव करो ।
यह भी अनुभव करो
कि एक असीमित शक्ति ने तुम्हें आवृत्त कर लिया है ।
अपने को,
अपनी चिन्ताओं को
इस शक्ति में तिरोहित कर दो ।
यही तुम्हारी प्रेरणा का स्रोत है
यही जीवन है
यही अस्तित्व है ।
तुम और 'वह' एक ही तो हो ।

जीवन-स्पन्दन

हृदय के स्पन्दनों का अनुभव करो ।
तुम्हारे शरीर की धमनी-शिराओं को
यही तो अनुप्राणित कर रहे हैं ।
और यही तो शरीर के प्रत्येक कोश को
जीवन-ऊर्जा प्रदान कर रहे हैं ।
लेकिन यह हृदय तो
सब में–
चाहे वह भारतीय हो, मंगोलियन हो, अंग्रेज हो–
एक ही सा है ।
जीवन का स्पन्दन भी सब में

एक-जैसा है।
पशुओं के बारे में सोचो।
उनके हृदय तुम्हारे हृदय से थोड़े ही भिन्न हैं।
जीवन का स्पन्दन
जो तुम्हारे शरीर में है,
उनके शरीर में भी है।
तुम्हारा जीवन,
समस्त जीव-जन्तुओं का जीवन
उसी प्राण-ऊर्जा के प्रकटीकरण हैं
जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है।

पूर्ण एकात्मता (विलियम ब्लेक)

धूल के एक-एक कण में दर्शन करो ब्रह्माण्ड का।
जंगल के हर फूल में देखो स्वर्ग को।
तुम्हारी मुट्ठी में बन्द है अनन्तता;
और मात्र एक क्षण में समाहित है
शाश्वतत्व।

दैवी स्वरसंगति (इनायत खाँ)

दृष्टि मेरी बहिर्मुख जब भी हुई
स्वयं को लघु बूँद सा अनुभव किया
संसार पारावार में;
किन्तु अंतर्मुख हुआ जब
और अपने नेत्र मूँदे
यह अखिल ब्रह्माण्ड
मेरे हृद-जलधि में
बुलबुले-सा
उभर कर, उतरा गया।

सत्ता का सार

तुष्ट हूँ मैं, मुस्कुराता हूँ,
क्योंकि
सुर, रंग, भाव–
जिन्हें सुन-देख पाता हूँ
अपने कानों से,
अपनी आँखों से,
जिन्हें अनुभव कर पाता हूँ
अपने हृदय से–
तब भी रहेंगे
जब मेरी आँखें, कान, हृदय,
सब नष्ट हो जायेंगे ।

मैं कौन हूँ

पूछो अपने से–
मैं कौन हूँ–
शरीर ?
न-न, यह नहीं हो सकता ।
अनवरत रूप से परिवर्तित हो रहा है यह ।
पिछले वर्ष जो मेरा शरीर था वह इस वर्ष नहीं है ।
जब बालक था मैं
तब मेरा शरीर वह नहीं था,
जो अब है ।
मेरा शरीर लगातार परिवर्तित हो रहा है
यह मेरा आंतरिक स्वभाव नहीं है ।
क्या मैं अपना मन हूँ ?
नहीं, मेरा आंतरिक स्वभाव मन नहीं हो सकता ।
क्योंकि यह भी लगातार बदल रहा है ।

एक क्षण यह रुष्ट हो जाता है,
दूसरे क्षण तुष्ट हो जाता है।
मन:स्थितियाँ प्रति क्षण बदलती रहती हैं।
मन भी मेरा वास्तविक स्वभाव नहीं हो सकता।
क्या मैं हिन्दू हूँ ? या मुसलमान ? या ईसाई ?
नहीं ये तो अधूरा परिचय देते हैं मेरा।
इनको मेरे आंतरिक स्वभाव से कोई लेना-देना नहीं।
सतत् अपने से यह प्रश्न पूछो–
कौन हूँ मैं ?
मैं साक्षी हूँ।
वैश्व-दृश्य प्रपंचों का साक्षी।
मैं सत्ता हूँ–
अपरिवर्तनीय सत्ता।
मैं चेतना हूँ–
शुद्ध चेतना हूँ।
मैं अविनाशी हूँ।
मेरा स्वभाव है–'होना'।
मैं 'हूँ'।

श्रेणियाँ (चुआंग त्से)

मान लें एक वक्तव्य है।
पता नहीं, यह किस कोटि में आयेगा।
पर यदि हम विभिन्न कोटियों को एक में मिला दें,
कोटियों का विभेद तब समाप्त हो जाता है।
अर्थात्–
यदि कोई आदि है,
तब उस आदि से पूर्व भी कोई काल था।
इतना ही नहीं, उस काल से भी पूर्व कोई काल था।
यदि कोई सत्ता है,

तब सत्ता– विहीनता भी रही होगी ।
और यदि कोई ऐसा समय था ।
जब कोई सत्ता न थी,
तब वह समय भी रहा होगा,
जब असत्ता भी न रही हो ।
सत्ता का होना आकस्मिक बात नहीं है ।
क्या कोई बता सकता है
कि यह सत्ता की श्रेणी में आता है
अथवा असत्ता की ?
ये शब्द भी, जो मैं लिख रहा हूँ,
पता नहीं,
इनसे कोई अर्थ-बोध होता भी है कि नहीं ।

पूर्णता (ईशावास्योपनिषद्)

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

तेईसवाँ अध्याय

विविध प्रकार के ध्यान

इस अध्याय के अन्तर्गत ध्यान को विभिन्न विधियों का मिला-जुला रूप दिया गया है। निम्नलिखित ध्यान की विधियाँ प्रत्याहार की अवस्था प्राप्त करने के लिए बहुत ही उपयोगी हैं। प्रत्येक विधि पुरोगामी यौगिक क्रियाओं पर बल देते हुये मन को जागरूकता के विशिष्ट स्तरों का अनुभव कराती है।

पाठक देखेंगे कि इस पुस्तक में दिये गये विभिन्न अभ्यासों तथा कक्षा प्रतिलेखनों में विभिन्न साधना-विधियों को जोड़ दिया गया है, ताकि वे अपने अनुकूल उपयुक्त अभ्यासों का चुनाव कर सकें।

मंत्र योग

ध्यान के किसी आसन में बैठ जाइए।
मेरुदंड सीधा रहे।
पूरे अभ्यास की अवधि में अपनी आँखें बन्द रखिये।
कोशिश कीजिये कि आपका शरीर स्थिर रहे।
अपने हाथों को उपयुक्त मुद्रा में रखिये।
सुविधा जनक स्थिति में बैठिये।
आँखें मत खोलिये।
यदि मन इधर-उधर भागे, विद्रोह करे तब भी चिन्ता मत कीजिये।
ध्यान को यह पद्धति, विश्रान्ति की यह पद्धति मंत्र और जप पर आधारित है।
आपको एक विशेष ध्वनि को मानसिक रूप से देखना है।
वह ध्वनि आपके मानसक्षेत्र में गति का आधार बनेगी।

वह ध्वनि, शब्द या मंत्र आपकी चेतना का केन्द्र बनेगा।
यह केन्द्र भ्रूमध्य में स्थित है।
यह केन्द्र भ्रूमध्य में स्थित है।
यह पद्धति सरल है, तनिक भी जटिल नहीं है।
लेकिन अध्यवसाय और धैर्य की आवश्यकता है।
मान लीजिये आप अपने लिए 'राम' मंत्र चुनते हैं। इसे आपको भ्रूमध्य में मानसिक रूप से लयबद्धता के साथ उत्पन्न करना है।
लय न तो बहुत द्रुत हो, न बहुत मन्द। इस लयबद्ध गति को कम से कम बीस मिनट तक चलना चाहिये।
और उसके बाद भ्रूमध्य में आप इस गति को स्थगित कर सकते हैं और वहाँ स्वर के बदले भ्रूमध्य की जागरूकता विकसित कर सकते हैं।
मान लीजिये कि वह ध्वनि 'राम' है।
आपको भ्रूमध्य में बीस मिनट तक अनवरत, अविरल 'राम-राम-राम-राम' का मानस-कम्पन अनुभव करना होगा।
विभिन्न प्रकार के विचार बीच में बाधा पहुँचाने आयेंगे।
इसकी चिन्ता मत कीजिये।
इस बाधा पर कोई प्रतिक्रिया न होने दीजिये।
कभी-कभी ये विचार प्रबल हो उठेंगे।
तब फिर मंत्र की लयबद्ध गति की चेतना इन विचारों से अधिक प्रभावकारी हो जायेगी।
फिर विचार बाधा पहुँचायेंगे।
इसी तरह सारी प्रक्रिया चलती रहेगी।
और अगर बाधक विचार बीच में आ जायें, तो आपको तनिक भी चिन्ता नहीं करनी चाहिये और न कोई प्रतिक्रिया ही।
स्वर की लयबद्ध गति के साथ एक बने रहिये।
इसलिए, उदाहरणार्थ, हम एक लयबद्ध मंत्रोच्चारण करेंगे ताकि आपको यह बात स्पष्ट हो जाये।
अब हम 'ॐ' का मंत्रोच्चारण करेंगे।
मैं गति और लय निश्चित कर दूंगा। आप सब मेरा अनुसरण करेंगे।
यह मंत्रोच्चारण सिर्फ उदाहरण के लिए है ताकि आप जान जायें कि

किस प्रकार आपको मानसिक रूप से अभ्यास करना है ।
बाह्य स्तर पर जिस प्रकार यह अभ्यास किया जा रहा है, इसी प्रकार आपको मानसिक स्तर पर अभ्यास करना है ।
अंतर यह है कि यहाँ हम समझाने के लिए स्वर उत्पन्न करते हैं और मंत्रों का उच्चारण करते हैं, जबकि वास्तविक अभ्यास में इस प्रकार का मंत्रोच्चारण नहीं होगा, सिर्फ मानसिक बोध और अनुभूति होगी ।
और जब आप बीस मिनटों तक इसका अभ्यास करते हैं, तब चेतना बहुत हद तक केन्द्रित हो जाती है ।
अब उस प्रतीक या रूप को लीजिये जिस पर आप ध्यानस्थ होने की चेष्टा कर रहे हैं ।
अब, जब मैं 'ॐ ॐ ॐ' का मंत्रोच्चारण करूँ, तब आप मेरा अनुकरण कीजियेगा ।
और जब हम मानसिक रूप से लय के साथ मंत्रोचारण शुरू करेंगे तब मंत्र का प्रश्न सामने आयेगा ।
जिनका अपना मंत्र है, वे उसी मंत्र को प्रयोग में लायेंगे ।
जिनका अपना कोई मंत्र नहीं है वे 'ॐ' को प्रयोग में लायेंगे ।
यहाँ हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि जब आप जप और ध्यान की इस पद्धति का अभ्यास करते हैं तो आप अपना मंत्र उपयोग में ला सकते हैं ।
यदि मंत्र नहीं है तो आप 'ॐ' का उपयोग कर सकते हैं ।
अब लयबद्ध मन्त्रोच्चारण में मेरा अनुकरण कीजिये ।
ॐ, ॐ, ॐ, का लयबद्ध उच्चारण पचास बार किया जायेगा ।
क्रमशः अपने मन को भ्रूमध्य में लाइये और मानसिक रूप से इसी तरह मंत्रोच्चारण कीजिये ।
मंत्र का लयबद्ध अनवरत पाठ ।
चिन्ता मत कीजिये ।
अपनी चेतना को भ्रूमध्य में केन्द्रित कीजिये ।
हम लोग सिर्फ पाँच मिनटों तक अभ्यास करेंगे ।
इसलिए एकाग्रता से अभ्यास कीजिये ।
(पाँच मिनट तक अभ्यास)
मेरे साथ ॐ का उच्चारण कीजिये ।

ॐ ॐ ॐ ।
अब अपने मन को तनावमुक्त करके बहिर्मुखी हो जाइये ।
आसन बदलते हुये आँखें खोल लीजिये ।
हरि ॐ तत्सत् ।

उन्मनी क्रिया

किसी दृढ़ आसन में बैठ जाइए ।
मेरुदण्ड तना हुआ, सीधा रहे ।
किसी उपयुक्त मुद्रा में अपने हाथ भली प्रकार रख लीजिए ।
पहले हम कपालभाति प्राणायाम का अभ्यास करेंगे ।
यह बहुत महत्वपूर्ण है ।
मुझे नहीं मालूम कि आपको इसका कितना ज्ञान है, लेकिन कुछ समय के लिए इसका अभ्यास करेंगे ।
(कपालभाति प्राणायाम का प्रदर्शन)
आप इसे मंद गति से पूरा नियंत्रण रखते हुये कीजिए ।
इसे इस प्रकार कीजिए कि आप एक सौ प्रश्वास पूरे कर लें ।
अपने प्रश्वास को इस प्रकार साधें कि आप बिना किसी कठिनाई के एक सौ आवृत्ति पूरी कर लें ।
लेकिन यदि बीच में कोई कठिनाई हो तो आप निश्चित रूप से रुक जाइए ।
अपने प्रश्वास को इस प्रकार साधें कि बिना किसी कठिनाई के एक सौ आवृत्ति पूरी कर लें ।
सौवाँ प्रश्वास पूरा करने के बाद जालंधर बंध लगा लीजिए ।
फिर उड्डियान बन्ध लगाइये ।
इसके बाद मूलबन्ध लगाइये ।
क्रमशः मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध तथा जालंधर बंध खोल दीजिये और साँस लीजिये ।
इसके बाद आप ध्यान का अभ्यास शुरू कर सकते हैं ।
इन तीन संकुंचनों के पश्चात कपालभाति का अभ्यास पूरा हो जाता है ।

अब आपको अपनी आँखें नहीं खोलनी हैं।
आवश्यकता हो तो आप आसन बदल सकते हैं, परंतु आँखें मत खोलिये।
अब आपको मेरुदण्ड में उसके निचले हिस्से में स्थित मूलाधार से प्रारंभ करते हुए आज्ञा चक्र तक उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास करना है।
इस तरह आप स्वयं कपालभाति का अभ्यास करेंगे।
पूरे सौ प्रश्वास और अन्त में रेचक के साथ यह अभ्यास पूरा होता है।
इसके बाद यदि चाहें तो आप अपना आसन बदल सकते हैं लेकिन अपनी आँखें नहीं खोलिये। सूक्ष्म पथ पर उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास जारी रखिये।
अब तैयार हो जाइये।
(कक्षा में सब लोग एक सौ प्रश्वास और महाबन्ध का अभ्यास करते हैं)
कृपया श्वसन क्रिया जारी रखिये।
उज्जायी में श्वास लेते जाइये और मेरे निर्देशों को भी सुनिये।
मेरे निर्देशों को सुनने के बाद आप मूलाधार से आज्ञा तक श्वास लीजिए।
श्वास छोड़ते समय आप ॐ की गुंजन-ध्वनि आज्ञा से मूलाधार में करेंगे।
जब आप आज्ञा से मूलाधार में 'ॐ' का उच्चारण करते हैं तो 'ओ' लघु और 'म' दीर्घ होता है।
यह इस प्रकार होता है– ओममम् (ओऽऽऽम् नहीं)।
अच्छा होगा कि आप कुछ देर 'ॐ' का उच्चारण कर लीजिये।
आज्ञा से 'ओ' स्वर आता है,
और मूलाधार तक 'ममम्' स्वर चलता है।
मूलाधार से आज्ञा तक श्वास की चेतना रहती है।
आज्ञा से मूलाधार तक ॐ की चेतना रहती है।
इस ॐ चेतना का तेरह बार अभ्यास कीजिए। जब तेरह आवृत्तियाँ पूरी हो जायें तब भी अपनी उज्जायी श्वास को जारी रखिये।
(कक्षा में सब लोग तेरह बार ॐ का उच्चारण करते हैं।)
ॐ के उच्चारण के पश्चात् आप अपना आसन बदल सकते हैं लेकिन अपनी आँखें नहीं खोलें।
अब ॐ की चेतना को तेरह बार दुहराइये।
(ॐ का उच्चारण बन्द होने के बाद)

अपनी आँखें बन्द रखिये, लेकिन आप चाहें तो अपना आसन बदल सकते हैं। स्थिर बैठने के बाद आप अपनी श्वसन क्रिया को मूलाधार से आज्ञा और आज्ञा से मूलाधार में जारी रख सकते हैं।

सावधानी से उज्जायी श्वास को उनचास बार गिनिये।

सावधानी से गिनते जाइये और श्वास को मेरुदण्ड में अनुभव कीजिए। इसे श्वास की सजगता का अभ्यास कहते हैं। इसे उनचास बार करना चाहिए। उनचास बार कर लेने के बाद इसमें 'सो-हं' मंत्र मिलाते हुये इसे जारी रखिए।

इसका अभ्यास उनसठ बार होना चाहिये।

आप अभी जो कर रहे हैं और नया जो करना है उसमें सिर्फ मन्त्र का ही फर्क है।

मूलाधार से आज्ञा और आज्ञा से मूलाधार तक।

सावधानी से गिनिये।

उनचास आवृत्तियों के पश्चात मेरे निर्देशों की प्रतीक्षा किये बिना ही अपनी चेतना को मन्त्र पर ले आइये।

उनसठ बार 'सो-हं' का अभ्यास करने के बाद आप चिदाकाश में जाइये और ललाट के भीतरी भाग में मन को केन्द्रित कीजिये। मेरे निर्देशों की प्रतीक्षा मत कीजिये।

मेरे साथ ॐ का उच्चारण कीजिये।

ओमम्म्‌....ओमम्म्‌....ओमम्म्‌ (एक साथ)।

अपने शरीर को तनाव-मुक्त कीजिये।

अपना आसन बदल लीजिये। आँखें खोल दीजिये।

हरि ॐ तत्सत्‌।

अचेतन ध्यान

ध्यान के किसी आसन में बैठ जाइये। मेरुदण्ड सीधा रखिये।

स्थिर हो जाइये। तुरन्त ध्यान शुरू करना आवश्यक नहीं है।

ध्यान शुरू करने के पहले आपको पाँच-दस मिनट तक स्थिर बैठना है। इस बीच आप बैठने की अपनी स्थिति को ठीक कर लीजिये और अपने

को सुविधाजनक स्थिति में ले आइये। लेकिन अपनी आँखें बन्द रखिये। बीस मिनट तक आप ध्यान करेंगे।
ध्यान का पहला नियम है कि बैठते ही कभी भी ध्यान शुरू न कर दें। अपनी शारीरिक स्थिति को ठीक कीजिये।
शारीरिक उत्तेजना को शान्त होने दीजिये। अपने विचारों पर ध्यान दीजिये।
अपने से पूछिये– 'मैं क्या सोच रहा हूँ?'
अपने विचारों को देखिये। अपने विचारों को रोकिये नहीं। किसी विचार को दबाइये नहीं। विचार को आने दीजिये और उसे देखिये। आप क्या सोच रहे हैं, यह जानने के लिए विशेष प्रयास कीजिये।
'क्या मैं सोच रहा हूँ?
अब मैं क्या सोच रहा हूँ?'
प्रत्येक विचार को देखिये। विचारक नहीं, बल्कि साक्षी बनिये।
विचारों में खो न जाइये। विचार-प्रक्रिया से अपने को अलग रखिये।
अपने विचारों के साथ तादात्म्य स्थापित मत कीजिये। अपने विचारों के तटस्थ द्रष्टा बने रहिये।
किसी विचार को घृणा की दृष्टि से मत देखिये और न उसे राग का विषय ही बनाइये। उसके पीछे भागिये नहीं। उसे दबाइये नहीं। उससे बचने की कोशिश न कीजिये। उसे आने दीजिये, जाने दीजिये।
पूरी सतर्कता से देखते जाइये, देखते जाइये। प्रत्येक विचार को देखते जाइये। और अगर कोई विचार न हो तो उस अवस्था को भी देखिये।
अगर मानसिक बाधायें हों तो उन्हें भी दबाइये नहीं, दबाइये नहीं। उन्हें तटस्थ द्रष्टा की तरह देखने की कोशिश कीजिये। विचार अच्छे हों या बुरे, उन्हें तटस्थ भाव से देखिये।
सभी विचारों को अपनी चेतना के सम्मुख अनावृत्त कर दीजिये।
प्रत्येक विचार को अपनी चेतना के सम्मुख खोलकर रख दीजिये।
अगर कोई विचार न हो, अगर कोई विचार न हो, तब इसे भी जानिये।
अगर कोई चिन्ता हो तो उसे देखिये।
अगर बेचैनी हो, तो साक्षी बने रहने की कोशिश कीजिये। अगर शान्ति हो, तो उसे जानिये।

उस शान्ति के साथ तादात्म्य मत स्थापित कीजिए। बेचैनी के साथ भी नहीं, पीड़ा और चिन्ता के साथ भी नहीं।
तटस्थ बनिये और कहिये—
'मैं सोचने वाला नहीं हूँ;
मैं अपने विचारों का द्रष्टा हूँ;
मैं श्रोता नहीं हूं;
मैं श्रवण-क्रिया का साक्षी हूँ।'
आप मेरे निर्देशों को सुन रहे हैं, इसके प्रति सजग होइये।
यदि बाहर से कोई ध्वनि या बिचार बाधा पहुँचायें तो उन पर कोई प्रतिक्रिया मत कीजिये।
उन ध्वनियों पर ध्यान दीजिए और उन्हें पराभूत करने की कोशिश कीजिये।
उन विचारों पर ध्यान दीजिये और उन्हें पराभूत कीजिये।
उन पर ध्यान दीजिये और उन्हें पराभूत करने की कोशिश कीजिये।
विचार के हर पहलू पर ध्यान देकर उसे जीतने की कोशिश कीजिये।
किसी विचार का दमन नहीं कीजिये। किसी विचार का दमन नहीं कीजिये।
अगर मन में कोई विचार उठें तो इस स्थिति को भी जानिये और कहिये—कोई विचार नहीं।
सब शून्य है, कोई विचार नहीं, सब शून्य है।
किसी विचार पर प्रतिक्रिया मत कीजिए। किसी बाह्य बाधा या बाह्य अनुभव पर प्रतिक्रिया मत कीजिए।
अपनी विचार प्रक्रिया को इस प्रकार देखने की कोशिश कीजिये जैसे आप टेलीविजन के पर्दे पर कुछ देख रहे हों।
पूरे समय सचेतन बने रहिये।
'मैं चिन्तक नहीं हूँ, मैं दर्शक हूँ। मैं चिन्तक नहीं हूँ, मैं दर्शक हूँ।'
और अब 'ॐ' का उच्चारण करना है।
पहले मैं एक बार उच्चारण करूँगा, आप मेरा अनुकरण करेंगे।
सुनिये और समझिये।
उज्जायी में नीचे से ऊपर श्वास लीजिये। उसे ध्यान से सुनिए।

श्वास लीजिये, मेरुदण्ड के निचले भाग से श्वास लीजिये।
उज्जायी में श्वास लीजिए। फिर 'ॐ' का उच्चारण करते हुए श्वास चेतना को नीचे लाइए।
आरोहण के साथ श्वास लीजिए और अवरोहण के साथ श्वास छोड़िए।
साथ में 'ॐ' का संगीत चलता रहे।
मैं एक बार उच्चारण करूंगा। आप मेरा अनुकरण करेंगे।
ओमममम्।
श्वास लीजिए और इसी प्रकार उच्चारण कीजिए। श्वास लीजिए और 'ॐ' का उच्चारण कीजिए; श्वास लीजिए और 'ॐ' का उच्चारण कीजिए; मेरुदण्ड से श्वास लीजिए और 'ॐ' का उच्चारण कीजिए।
ऐसा आठ बार कीजिए।
अब मेरुदण्ड में उज्जायी का अभ्यास।
श्वास-प्रश्वास के साथ मन को मेरुदण्ड में घुमाना जारी रखिये।
यह अनुभव करने की कोशिश कीजिए कि मेरुदण्ड में श्वास नीचे से ऊपर जा रही है।
पूरी सजगता के साथ अनुभव कीजिए।
भारी आवाज मत कीजिये।
जो भी आवाज हो वह लोगों को सुनाई न पड़े।
इस तरह श्वास लीजिये और छोड़िए कि आप उसके स्वर को स्पष्ट सुन सकें।
श्वास दीर्घ कीजिए।
गहरी श्वास, गहरी श्वास, लम्बी श्वास।
श्वास की अवधि और नीचे से ऊपर तक मेरुदण्ड की दूरी के बीच तालमेल होना चाहिये।
आपको श्वास की स्पष्ट अनुभूति होनी चाहिये।
आपको चाहिये कि अपनी उज्जायी श्वास को सुन सकें। यह श्वास ही जीवन है।
आपकी इच्छाशक्ति के द्वारा श्वास मेरुदण्ड में ऊपर-नीचे जायेगी।
आप श्वास के आधार पर ऊपर-नीचे जायेंगे।

अपनी चेतना को केवल मेरुदण्ड में श्वास के आधार पर ऊपर ले जाइये और नीचे ले आइये ।
श्वास का अनुभव आपको करते जाना है ।
इसे तनावरहित होना चाहिये ।
इसे अन्दर से मुक्त होना चाहिये ।
इसे दीर्घ रखना है ।
इसका अनुभव मेरुदण्ड के अन्दर होना चाहिये ।
यह एक पतली धारा है ।
यह एक पतली धारा है ।
यह स्वर का अत्यन्त सूक्ष्म प्रवाह है ।
यह स्वर का अत्यन्त सूक्ष्म और दीर्घ प्रवाह है ।
इसका मेरुदण्ड में आरोहण-अवरोहण होता है ।
इसका अनुभव कीजिए ।
नीचे से ऊपर,
और ऊपर से नीचे ।
मेरुदण्ड एक मार्ग है और श्वास है आधार ।
चेतना ऊपर-नीचे जाती है ।
मेरुदण्ड एक मार्ग है और श्वास आधार है ।
चेतना ऊपर-नीचे जाती है ।
श्वास को सूक्ष्म और पवित्र होना चाहिये ।
दूसरों को इसका बोध नहीं होना चाहिये, लेकिन यदि आप श्वसन क्रिया को जारी रखना चाहते हैं तो आपको इसके प्रति पूरे समय तक जागरूक रहना चाहिये ।
अनवरत जागरूकता ।
'मैं श्वास ले रहा हूँ ।
मैं ऊपर-नीचे श्वास ले रहा हूँ
मैं ऊपर-नीचे श्वास ले रहा हूँ ।'
आपको लगातार सोचना है कि–
मेरुदण्ड एक मार्ग है,
मेरुदण्ड एक मार्ग है ।

यह नीचे से आरम्भ होता है,
और शीर्ष पर समाप्त होता है।
नीचे से शीर्ष तक आप श्वास ले रहे हैं,
शीर्ष से नीचे तक आप श्वास छोड़ रहे हैं।
श्वास जितनी ही सूक्ष्म होगी, अनुभूति उतनी ही गहरी होगी।
अभ्यास जारी रखिये, अभ्यास जारी रखिये।
'मैं श्वास ले रहा हूँ,
मैं श्वास ले रहा हूँ।'
इसी तरह जारी रखिये।
थोड़ी और गहरी एकाग्रता,
सिर्फ तीन मिनट और।
अपनी चेतना को सब ओर से खींचकर मेरुदण्ड में ले आइये।
थोड़ी और चेष्टा कीजिये।
अब पूरक के साथ मंत्र को मिला दीजिये।
अब रेचक के साथ मंत्र को मिला दीजिये।
यदि आपका कोई मंत्र नहीं है तब 'सो-हं' का अभ्यास कीजिये।
यदि आपका मंत्र है तो श्वास के साथ अपने मंत्र को मिला दीजिए।
और यदि आपका कोई मंत्र नहीं है तब श्वास के साथ 'सो' और प्रश्वास के साथ 'हं' को मिला दीजिये।
मेरुदण्ड एक मार्ग है, श्वास है आधार।
मंत्र का साक्षात्कार करना है।
श्वसन क्रिया पर एकाग्र होइये।
मंत्र पर एकाग्र होइये।
तीव्र एकाग्रता के साथ दो मिनट।
मेरुदण्ड में अपने मन को एकाग्र करने के लिए उसे चारों ओर से समेट लीजिए।
ललाट के अन्दर की तरफ मन को ले आइये।
इसे हर चीज से, मेरुदण्ड से भी खींचकर ले आइये।
अन्दर से ललाट की भीतरी दीवाल को देखने की कोशिश कीजिये, मानो ललाट का भीतरी भाग किसी कमरे की सामने की दीवाल हो।

ललाट की भीतरी दीवाल को भीतर से देखिये ।
अपने मन को भीतर की ओर से सिर के सबसे ऊपरी भाग (crown) पर ले जाइये,
मानो वह भाग एक कमरे की छत हो ।
इस भाग पर भीतर से एकाग्र होइये,
यह भाग कमरे की छत है ।
कमरे का भीतरी भाग ।
भीतर से सिर के इस ऊपरी हिस्से में आइये ।
ऊपर की ओर भीतर से ।
सिर के सबसे ऊपरी भाग की भीतरी दीवालों को अन्दर से देखिये ।
इस भाग के भीतरी पार्श्व को अन्दर से देखिये ।
अपने मन को पीछे की ओर ले जाइये ।
सिर के पिछले हिस्से को भीतर से देखने की कोशिश कीजिये ।
लघु मस्तिष्क की अंदरूनी दीवाल ।
अब फिर ललाट की भीतरी दीवाल ।
ऊपरी हिस्से की छत ।
पीछे की ओर भीतरी दीवाल ।
दाहिनी कनपटी की भीतरी दीवाल, बायीं कनपटी की भीतरी दीवाल ।
मस्तक की भीतरी दीवाल ।
सिर के सबसे ऊपरी भाग की छत । शीर्ष की छत ।
पीछे की भीतरी दीवाल ।
दाहिनी कनपटी की भीतरी दीवाल । बायीं कनपटी की भीतरी दीवाल ।
और फर्श ।
फर्श ।
तब फिर सामने, सिर के सबसे ऊपरी भाग की छत, शीर्ष की छत, पीछे ।
दाहिनी दीवाल, बायीं दीवाल, मानो आप एक कमरे में हों ।
अब कमरे की सभी दीवालों को देखिये ।
सामने की दीवाल को ध्यान से देखिये ।
सिर के सबसे ऊपरी भाग की छत । शीर्ष की छत । दीवार का पिछला हिस्सा, दाहिनी दीवाल, बायीं दीवाल ।

फर्श, सामने, सिर का सबसे ऊपरी भाग, शीर्ष, दाहिने पीछे, दाहिने, बायें पीछे, बायें, नीचे, फिर सामने ।

सिर के सबसे ऊपरी भाग की छत, शीर्ष की छत।

पीछे की दीवाल, दाहिनी दीवाल, बायीं दीवाल, पीछे का फर्श।

मेरुदण्ड में नीचे की ओर जाने वाला एक छोटा सा मार्ग है। इसको देखिये । इससे होकर चेतना मेरुदंड में जाती है।

यह एक कमरा है।

कमरे में फर्श है।

पिछले हिस्से में नीचे की ओर एक छोटा-सा छिद्र है।

पिछले हिस्से में नीचे की ओर एक छोटा-सा छिद्र है।

पुनः दुहराइये ।

आप एक कमरे में हैं।

सामने देखिये– ऊपरी छत, पिछला हिस्सा, दाहिनी दीवाल, बायीं दीवाल, नीचे का फर्श पिछले हिस्से का छिद्र।

बाह्य परिवेश के प्रति सजग हो जाइये।

अपनी आँखें खोलिये नहीं, लेकिन शारीरिक स्थिति बदल कर विश्रांति की अवस्था में आ जाइये ।

अपने को पूरी तरह तनावरहित कर दीजिये।

लेकिन सोइये नहीं ।

अभी भी आँखें मत खोलिये, लेकिन अपनी शारीरिक स्थिति बदल दीजिये ।

अब याद कीजिये कि आपने क्या-क्या किया ?

सबसे पहले आपने अपने को ध्यान के लिये तैयार किया। तब विचार के प्रति सजग हुये ।

फिर 'ॐ' का उच्चारण किया। मेरुदंड में श्वास पर एकाग्र हुये। फिर इसके बाद मेरुदण्ड में मंत्र का अभ्यास किया।

फिर आप आंतरिक आकाश पर एकाग्र हुये।

अब आप आँखें खोल सकते हैं।

अचेतन ध्यान का अभ्यास समाप्त हुआ।

हरि ॐ तत्सत् ।

अतीन्द्रिय (सूक्ष्म) आवरण

आँखें बन्द कर लीजिये। यदि आप चश्मा पहने हैं, तो उसे उतार दीजिये।
आँखें बन्द कीजिये।
अपनी दोनों बाँहों को दोनों तरफ रखिये।
दोनों पाँव अगल-बगल रखिये, एक दूसरे पर नहीं।
यह ध्यान का अभ्यास नहीं है। यह विश्रांति की स्थिति में किया जाने वाला अभ्यास है।
अपने मन को अन्तर्मुखी बनाइये।
यह अभ्यास काफी सरल है, पर अत्यन्त महत्वपूर्ण और प्रभावशाली है।
अभ्यास के बीच आँखें मत खोलिये।
अभ्यास करते समय यथासंभव स्थिर रहिये।
किसी प्रकार की शारीरिक हलचल करना हो तो अभी कर लीजिये।
मन को एकाग्र मत कीजिये। उसे उसकी इच्छानुसार जाने दीजिए।
अपने मन को पूर्णतः बहिर्मुख होने दीजिए। उन चीजों के प्रति सजग होइये जो बाह्य हैं, मानसिक नहीं।
अपने मन को अन्तर्मुखी न बनाइये। अपने मन को अन्तर्मुखी न बनाइये।
इसे उसकी इच्छानुसार किसी भी दिशा में विचरण करने दीजिए।
कृपया ऐसा तनाव अनुभव मत कीजिए जैसा कि आप कोई काम शुरू करने के समय महसूस करते हैं।
अपने को वैसा ही तनावरहित बना लीजिये जैसे आप दिन के सारे काम समाप्त करने के बाद रात्रि को सोने के समय होते हैं।
मैं आपको एकाग्रता का पाठ पढ़ाने नहीं जा रहा हूँ। मैं आपको यह सिखाने जा रहा हूँ कि मन को किस प्रकार बाहरी वस्तुओं पर दौड़ाया जाये।
मन बाह्य आवाजों के प्रति आकर्षित होता है।
मन बाह्य संस्पर्शों के प्रति आकर्षित होता है।
मन बाह्य परिवेशों के प्रति आकर्षित होता है। तो इसे ऐसा ही करने दीजिये।
आपको रेडियो, कार, चिड़िया, कुत्ते या किसी की भी आवाज सुनाई पड़ सकती है।

इस अभ्यास विशेष में आपको अपने मन को बाह्य ऐन्द्रिक अनुभवों के साथ-साथ विचरने के लिये छोड़ देना है।

रेकार्डर के माइक्रोफोन की तरह अपनी परिधि में आने वाले प्रत्येक स्वर को नोट कर लीजिये।

अथवा रडार की तरह सभी प्रकार के बाह्य प्रभावों को ग्रहण कर लीजिये।

याद रखिये कि आप न तो एकाग्रता सीख रहे हैं और न मन को नियंत्रित करने का अभ्यास कर रहे हैं।

अपने मन को तनावरहित कीजिये।

दिन भर के कार्य समाप्त करके सोने के लिए जाते समय मन की जो स्थिति होती है, उसी स्थिति में रहिये।

बाह्य पदार्थों के प्रति सजग होइये। बाह्य पदार्थों के प्रति सजग होइये।

इसे किस प्रकार किया जाय?

क्या आपको सजग रहने की चेष्टा करनी चाहिये?

क्या आपको बाह्य वस्तुओं के प्रति जागरूक रहने की चेष्टा करनी चाहिये?

यह बहुत महत्वपूर्ण बात है।

याद रखिये, जागरूकता दो तरह की होती है।

एक, ऐच्छिक (voluntary) जागरूकता और दूसरी है अनैच्छिक जागरूकता।

अगर आप यह सोचें कि इतने लोग इस कमरे में बैठे हुए एक विशेष अभ्यास कर रहे हैं और मैं कुछ निर्देश दे रहा हूँ, टेपरिकार्डर चल रहा है, तो यह ऐच्छिक जागरूकता कही जायेगी जिसको आप अपने अन्दर विकसित करना चाहते हैं।

लेकिन यदि आपकी जागरूकता को कोई स्वर या अनुभव अपनी ओर आकर्षित कर लेता हो तो यह अनैच्छिक जागरूकता है।

इस अभ्यास में आपको स्वयं पूर्णतः खाली रखना है।

और अगर आप बाहर से कोई शब्द सुनें तब उसे स्वीकार कीजिये।

या यदि इस कमरे में बैठे लोगों के प्रति आप सजग हो जायें तो इसे स्वीकार कीजिये।

या आप किसी संवेदन (sensation) के प्रति सजग हों तो इसे स्वीकार कीजिये।

अब इसे तीन मिनट तक स्वयं कीजिये।

और किसी बात की चिन्ता मत कीजिये। मन को जो भाता है उसे उसी को ग्रहण करने दीजिये।

हो सकता है मेरी आवाज या कोई दूसरी आवाज आपका ध्यान आकर्षित करे।

अब तीन मिनट तक इसका अभ्यास कीजिये।

बाह्य जगत में विचरण करते रहिये।

बाह्य जगत में हो रही प्रत्येक घटना, उठ रहे प्रत्येक स्वर के प्रति जागरूक रहने की कोशिश कीजिये।

साक्षी बने रहिये। बाह्य जगत के साक्षी बने रहिये।

अन्तर्मुखी मत होइये। नींद मत आने दीजिये।

अपने मन को बाहर ही बाहर दौड़ने दीजिये और बाह्य जगत में घट रही सभी बातों के प्रति जागरूक रहिये।

यह प्रथम अभ्यास है।

इस अभ्यास में आपको इन्द्रियानुभवों के प्रति जागरूक रहने का प्रयास करना है।

अब दूसरा अभ्यास—

अपने से पूछिये– 'मैं क्या सोच रहा हूँ ?'

जागरूक रहिये, जागरूक रहिये। अपनी चिन्तन प्रक्रिया के प्रति जागरूक रहिये।

किसी विचार को नियंत्रित मत कीजिये।

अपने मन में अच्छे-बुरे दोनों ही तरह के विचार उठने दीजिए।

किसी भी विचार से प्रभावित मत होइये। अपने ऊपर उसका सीधा-उलटा किसी भी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ने दीजिये।

मन जो चाहे सोचने दीजिये। बीच में मत पड़िये।

लेकिन आपको यह जानना चाहिए कि कौन से विचार आपके मन में आ रहे हैं।

'मैं क्या सोच रहा हूँ ?'

यह एक मनोरंजक अभ्यास है जिसमें आप अपने को सोचने का मौका देते हैं लेकिन अपने मन के सभी विचारों के तटस्थ साक्षी बने रहते हैं।
विचार अच्छा है या बुरा, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।
आपका सोचना और अनुभव करना ही मुख्य चीज है।
क्षण-क्षण में आप अपने मन को याद दिलाते रहें– मैं क्या सोच रहा हूँ?
मैं क्या सोच रहा हूँ?
यदि अपनी विचार प्रक्रिया को देख पाना आपके लिए सम्भव नहीं हो तो आपको अपने विचारों को कुछ काल के लिये आने देना चाहिये और जब वे आ जायें तब आपको तुरन्त उन विचारों के प्रति जागरूक हो जाना चाहिये।
इसका अभ्यास तीन मिनट तक कीजिये।
किसी मानसिक विक्षेप की चिन्ता मत कीजिये।
किसी चिन्तन की चिन्ता मत कीजिये।
यदि आपका मन भीतर-बाहर दौड़ रहा हो, तब भी चिन्ता मत कीजिये।
मन को नियंत्रित मत कीजिये। सिर्फ अपने विचारों को देखिये।
इस बात के प्रति जागरूक रहिये कि—
'मैं क्या सोच रहा हूँ?'
'मैं क्या सोच रहा हूँ?'
चिदाकाश पर एकाग्र होइये।
ललाट के अंत:पुर चिदाकाश पर एकाग्र होइये।
यदि आप ललाट की भीतरी दीवाल को देखने का प्रयास करेंगे तो चिदाकाश दिखाई देगा।
यह चिदाकाश एक पर्दे के सदृश है। इस पर आप यह देखने की चेष्टा कीजिये कि किस प्रकार के विचार आप के मन में आते हैं।
यदि आप चिदाकाश देखते रहेंगे तो आप विभिन्न आकृतियों और बिम्बों को इसकी पृष्ठभूमि पर उभरते देखेंगे।
इस पृष्ठभूमि पर किसी भी बिम्ब, आकृति, फूल या विचारों को उभरते हुये देखते रहिये।
आप चाहे विचारों का मानसदर्शन करें या बिम्बों का या किसी वस्तु का लेकिन आप लगातार चिदाकाश को देखते रहिये।

अगर आप इसी प्रकार लगातार देखते रहेंगे तो विभिन्न प्रकार के ज्ञात-अज्ञात बिन्दु उस पर प्रकट होंगे ।

चिदाकाश को देखते रहिये । कोई वस्तु उभरे, या न उभरे, उसे देखते रहिये ।

किसी प्रकार का तनाव न हो । चिदाकाश की स्थिति तनावरहित होनी चाहिये ।

चिदाकाश में क्या आता है ?

हो सकता है कि जब आप चिदाकाश में देख रहे हों तो अचानक किसी किताब, मित्र, आध्यात्मिक विचार, सांसारिक चिन्ता, फुलवारी या फूल या किसी भी चीज का दृश्य या कोई आकृति सामने आ जाये ।

चिदाकाश पर देखते रहिये ।

आप जो कुछ देखते हैं उन सब की सजगता बनाये रखिए और अगर आप नहीं देखते हों तब भी अचेत मत होइये ।

चिदाकाश में जो कुछ हो रहा है, उसके आप साक्षी हैं ।

चिदाकाश में जो कुछ हो रहा है, उसके आप साक्षी हैं ।

दृश्य या आकृतियाँ दिखलाई पड़ सकती हैं । शायद कुछ भी दिखलाई न पड़े ।

सम्भव है कि मध्य रात्रि का दृश्य दिखलाई पड़े ।

दर्शन की यह प्रक्रिया सजगतापूर्ण होनी चाहिये, स्वप्न की अचेतन क्रिया की तरह नहीं । कोई भी चीज दिखाई पड़ सकती है– आकृति, त्रिकोण फूल, पत्ती, फुलवारी, लोग, जानवर, नदियाँ, मध्यरात्रि, अंधकार, तारों का प्रकाश, पूर्णिमा की रात, दिन का प्रकाश– कुछ भी ।

कुछ भी सम्भव है । सिर्फ़ इसके प्रति जागरूक रहिये ।

ध्यान रखिये कि आप सो न जायें, बस इतना ही ।

बस इतना ही और यही बहुत महत्वपूर्ण है ।

मैंने जो कहा, उसका ध्यान रखिये ।

आप चिदाकाश देख रहे हैं ।

यह चिदाकाश-दर्शन की विश्रान्तिपूर्ण विधि है ।

चिदाकाश में आप कुछ देख पाते हैं या नहीं– हर स्थिति में एक साक्षी बने रहिये ।

जागरूक रहिये और चिदाकाश दर्शन करते रहिये।
अपने मन को बहिर्मुख बनाते हुए बाह्य वातावरण के प्रति सजग होइये।
अपने घुटनों को सीधा कीजिये और शरीर को तनावरहित कीजिये।
आप अपनी आँखें खोल सकते हैं।
उठ कर बैठ जाइये।
हरि ॐ तत्सत्।

चौबीसवाँ अध्याय

प्राण विद्या

प्राण विद्या अतीन्द्रिय (सूक्ष्म) शक्ति को नियंत्रित करने और उपचार करने की एक यौगिक विधि है। संसार में यह विधि अनेक नामों से प्रसिद्ध हुई है। इस विधि में प्राण उज्जायी प्राणायाम में (खेचरी में भी, अगर सुविधापूर्वक किया जा सके) अपने मार्ग पर प्रवाहित होता है। बैठकर, करवट, पेट या पीठ के बल लेटकर शरीर को किसी भी अवस्था में रखा जा सकता है, परंतु मेरुदण्ड एकदम सीधा रहे।

दो मूल अवस्थाएँ हैं। प्रत्येक की अनेक स्थितियाँ हैं। पहली अवस्था में प्राण को आज्ञा चक्र में लाकर संचित किया जाता है। वहाँ पर प्राण मणिपुर चक्र से पहुँचता है या साँस लेते हुये शरीर के बाहर से त्वचा के द्वारा ग्रहण किया जा सकता है। किसी भी तरह से प्राण ग्रहण किया जाये, इस प्रथम अवस्था में श्वास लेते हुये आज्ञा चक्र की ओर ही प्राण प्रवाहित होता है।

दूसरी अवस्था में आज्ञा चक्र से प्राण को भेजा जाता है। इस अवस्था में प्राण का वितरण पूरे शरीर में या शरीर के किसी बीमार हिस्से में या हाथों में किया जा सकता है। हाथों से प्राण दूसरे व्यक्ति के शरीर में पहुँचाया जा सकता है। इस स्थिति में सदैव प्राण को श्वास लेते हुये आज्ञा चक्र से निर्दिष्ट स्थान की ओर प्रवाहित किया जाता है।

सामान्यत: एक से दूसरी अवस्था की ओर जाते हुये अंतर स्पष्ट नहीं दिखाई पड़ता तथा पहले के बाद दूसरा अभ्यास बारी-बारी से होता रहता है। परन्तु दोनों अवस्थाओं के बीच का अंतर अभ्यास के दौरान स्पष्ट होना चाहिये।

इस यौगिक विधि में पिंगला के सूक्ष्म अतीन्द्रिय मार्ग का ही उपयोग किया जाता है। इस मार्ग का वर्णन इस पुस्तक के चतुर्थ

अध्याय में किया जा चुका है। इसका अभ्यास इड़ा नाड़ी का उपयोग करते हुये कदापि नहीं करना चाहिये। इससे बहुत हानि हो सकती है। प्राणविद्या रोगोपचार की एक गुप्त यौगिक अतीन्द्रिय विधि है।

दूसरे व्यक्ति का उपचार करने हेतु प्राण को आज्ञा चक्र से अपने दाहिने हाथ की ओर प्रेषित करना होता है। उसी हाथ से बीमार व्यक्ति के रोगी अंग का स्पर्श किया जाता है। यदि बीमार व्यक्ति भी अपने शरीर में हाथ के स्पर्श से प्राप्त उस प्राण प्रवाह की उष्णता का अनुभव करे, तो इससे उपचार करने में सहायता मिलती है।

प्राण विद्या का कक्षा प्रतिलेखन

अपनी आँखों को यथासम्भव हल्के से बन्द कर लीजिए।

आप प्राण विद्या का अभ्यास करने जा रहे हैं।

ध्यान भंग न हो, इसलिए यह आवश्यक है कि आप अपनी आँखें बन्द रखें।

आप किसी भी सुविधाजनक आसन में रह सकते हैं अर्थात् दाहिनी या बायीं करवट में अथवा पीठ के बल लेट कर। आप आरामकुर्सी पर बैठ सकते हैं या अपने बिछावन पर लेट सकते हैं। लेकिन याद रखिये कि आप का आसन किसी प्रकार की असुविधा उत्पन्न न करे।

जहाँ तक जागृति का सम्बन्ध है, मुझे विश्वास है कि आप को स्पष्ट रूप से मूलाधार से आज्ञा चक्र की ओर प्राण की सर्पिल (spiral) गति का स्मरण होगा।

दाहिनी ओर से शुरू कीजिये और धीरे-धीरे लेकिन फुरती से श्वास की गति के साथ तालमेल बैठाते हुए आगे बढ़िये।

मूलाधार से दाहिनी ओर मुड़िये। मोड़ लेते हुये स्वाधिष्ठान में पहुँचिये।

स्वाधिष्ठान से बायें मोड़ से ऊपर उठते हुये मणिपुर की ओर,

मणिपुर से दाहिना मोड़ लेते हुए अनाहत की ओर,

अनाहत से बायाँ मोड़ लेते हुए विशुद्धि की ओर ऊपर बढ़िये।

विशुद्धि से दाहिने मोड़ से आज्ञा की ओर बढ़िये।

यह मूलाधार से आज्ञा चक्र की ओर प्राण की सर्पिल ऊर्ध्वगामी गति है।

इस प्रकार प्राण जागृत होता है। आप अभ्यास जारी रखिये।
प्रारम्भ में आपको उनचास आवृत्तियाँ पूरी करनी हैं।
लेकिन जब आप इसके अभ्यस्त हो जायें तब गिनने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि आप सहज ही प्राण की जागृति का अनुभव कर लेंगे।
जब प्राणशक्ति मूलाधार से आज्ञा में जागृत होने लगती है और आप इसकी गति का अनुभव करने लगते हैं, तभी आगे की यात्रा शुरू होती है।
मूलाधार से प्रारंभ करते हुये प्राण को आज्ञा चक्र की ओर जागृत करना आरम्भ कीजिए।
लेकिन कृपया मूलाधार में लौटिये मत।
पूर्ण जागरूकता के साथ मूलाधार से आज्ञा चक्र तक की यात्रा पूरी कीजिये।
अपने मन और चेतना को अतीन्द्रिय (सूक्ष्म) और प्राणिक शक्तियों के साथ मेरुदंड में और उससे होकर आरोहण करते रहने दीजिये।
सजगतापूर्वक अभ्यास जारी रखिये और कम्पन-रहित (vibration-less) नाद को सुनते जाइये।
मूलाधार में कुंडलिनी को जागृत करना है।
इसे शनैः-शनैः आज्ञा चक्र तक जाने दीजिये।
तब कुम्भक के रूप में आज्ञा चक्र पर थोड़ा ठहरिये।
यहाँ पहली आवृत्ति समाप्त होती है। अब हम दूसरी आवृत्ति प्रारंभ करेंगे।
पुनः मूलाधार से यात्रा आरम्भ कीजिये।
आज्ञा में लघु कुम्भक के साथ रुकिये। पूर्ण एकाग्रता होनी चाहिये।
पूर्ण एकाग्रता के साथ प्राण की गति का अनुभव कीजिये।
बतलाये गये मार्ग पर प्राणशक्ति को जगाते रहिये।
कहीं आप भूल न जायें– अतीन्द्रिय (सूक्ष्म) पथ मूलाधार से आज्ञा तक है।
जब आप आज्ञाचक्र पर पहुँचें तब कृपया याद रखिये कि वहाँ आपको थोड़ी देर तक कुम्भक में रहना है।
अब मैं जो कहता हूं, उसे ध्यान से सुनिये–

आज्ञा चक्र पर कुम्भक के पश्चात् आपको श्वास छोड़ते हुये अपने पूरे शरीर को तनावरहित (शिथिल) कर देना है।

ध्यान दीजिये, आप मेरुदण्ड से होकर श्वास नहीं छोड़ रहे हैं बल्कि आप बैलून की तरह पूरे शरीर से श्वास छोड़ रहे हैं।

श्वास भरने के साथ शरीर फूलता है। शरीर के प्रत्येक रन्ध्र से आप श्वास ले रहे हैं।

प्रत्येक प्रश्वास के साथ एक शिथिलता (विश्रांति) की स्थिति आती है और प्रत्येक बार श्वास लेते समय शरीर फैलता है।

इस नियम को न भूलें, क्योंकि ऐसा सचमुच होता है।

उज्जायी में श्वास लीजिये।

पूर्व अभ्यासों की तरह इसे मेरुदण्ड में अनुभव मत कीजिये।

यह उज्जायी वायु पूरे शरीर में व्याप्त है– मानो शरीर का प्रत्येक रन्ध्र उज्जायी में श्वास ले रहा हो।

जब आप श्वास लेते हैं, तब शरीर का प्रत्येक रन्ध्र आपको श्वास भरने में मदद करता है और आपका शरीर एक बैलून की तरह फूल उठता है। और जब आप श्वास छोड़ते हैं तो आपका पूरा शरीर श्वास छोड़ता है और रुई की तरह हल्का बन जाता है– यह विश्रान्ति का काल है।

शरीर के प्रति सम्पूर्ण सजगता। श्वास चेतना और शरीर चेतना को समक्रमिक बनाइये।

शरीर के प्रति पूर्ण सजगता।

अब श्वास लीजिए। श्वास लेते समय पूरा शरीर रन्ध्रों से, त्वचा से, प्रत्येक अंग से श्वास ले रहा है। श्वास लेने के समय आपका शरीर फैल रहा है।

अब श्वास छोड़िये। श्वास छोड़ते समय शरीर का प्रत्येक रन्ध्र श्वास छोड़ रहा है।

अब शरीर तनावरहित हो रहा है।

याद रखिये कि श्वास लेने और छोड़ने की सम्पूर्ण प्रक्रिया भ्रूमध्य केन्द्र के पीछे आज्ञा चक्र में हो रही है।

आज्ञा मुख्य बिन्दु है। पूरे श्वसन संस्थान का मुख्य वितरक केन्द्र यही है। अन्दर भरी गई श्वास आज्ञा चक्र से ही पूरे शरीर में विचरण करने के

लिए आगे बढ़ती है। छोड़ी हुई श्वास आज्ञा चक्र में वापस आ जाती है और वहीं से बाहर छोड़ दी जाती है।

श्वास भरने से शरीर फूलता है, यह प्रारम्भ है। श्वास छोड़ने में शरीर में विश्रान्ति की स्थिति उत्पन्न होती है।

जब आप आज्ञा चक्र से श्वास लेते हैं और पूरे शरीर को फैलाते हैं, तब यह अनुभव कीजिये कि प्राण के भंडार आज्ञा चक्र से पूरे शरीर में प्राण का वितरण हो रहा है।

और छोड़ी हुई श्वास आज्ञा चक्र में वापस पहुँचती है– सीधे ही; मेरुदण्ड से होकर नहीं।

याद रखिये कि उज्जायी में श्वास लेना-छोड़ना है।

निम्नलिखित विधि से अभ्यास कीजिये।

आप आज्ञा चक्र से श्वास भरते हैं, फिर इस श्वास को पैर के अँगूठे तक पूरे शरीर में वितरित कर देते हैं।

श्वास छोड़ते समय आप प्राण को आज्ञा चक्र में वापस लाते हैं और विश्रांति की स्थिति में आ जाते हैं।

प्रश्वास में स्वाभाविक रूप से विश्रान्ति की स्थिति उत्पन्न होती है।

आगे का अभ्यास अपेक्षाकृत अधिक सरल है। पूर्व के अभ्यास में आप शरीर के रन्ध्रों द्वारा श्वास ले और छोड़ रहे थे लेकिन अब संपूर्ण श्वसन-क्रिया आज्ञा चक्र के माध्यम से होगी।

आज्ञा चक्र को प्राण का भंडार कहा जा सकता है। यहाँ से उज्जायी द्वारा प्राण को सम्पूर्ण शरीर में वितरित किया जाता है।

और प्रश्वास के समय प्राण सभी दिशाओं से आज्ञा चक्र में वापस लाया जाता है।

आप यह अवश्य याद रखिये कि प्रश्वास के बाद विश्रांति की स्थिति आती है।

विश्रांति की स्थिति में चेतना और प्राण दोनों ही अपने को शरीर से हटा कर आज्ञा चक्र में आ जाते हैं।

इसे समझ लीजिये कि शरीर में विश्रांति की स्थिति आती है परन्तु शरीर का संकुंचन नहीं होता।

आपको उज्जायी की स्थिति का इस तरह अभ्यस्त हो जाना चाहिए कि

प्राण विद्या की प्रक्रिया के बीच आपकी समस्त चेतना, कल्पना, चिन्तन, और आपका शरीर-यन्त्र भी श्वास लेने के साथ फैल जायें और श्वास छोड़ते समय विश्रान्ति की स्थिति में आ जायें।

आपको श्वसन क्रिया के प्रति इस प्रकार उदासीन हो जाना चाहिए कि आपकी चेतना का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंश भी इसके प्रति जागरूक न रहे।

श्वास लेते समय प्राण सूक्ष्म शरीर को फैलाता है। श्वास छोड़ते समय प्राण सूक्ष्म शरीर को विश्रांति की स्थिति में ले आता है।

आपकी सम्पूर्ण चेतना प्रसारण और विश्रांति की प्रक्रिया पर केन्द्रित रहनी चाहिए, न कि प्राणों पर जो सूक्ष्म शरीर में प्रसारण और विश्रांति की स्थिति उत्पन्न करते हैं।

इसका अर्थ यह हुआ कि आपके गुरुत्व केन्द्र को अब शरीर की श्वसन क्रिया से हट कर प्रसारण और विश्रांति की प्रक्रियाओं पर अवस्थित हो जाना चाहिये।

संक्षेप में, आपको श्वास चेतना के परे हो जाना है।

अब हम लोग अगली अवस्था की ओर बढ़ेंगे। इसमें थोड़ा परिवर्तन करना है।

पूर्व अभ्यास की तरह श्वास के साथ शरीर का प्रसारण तो होगा, लेकिन प्रश्वास के साथ शरीर विश्रांति की स्थिति में नहीं आयेगा वरन् उसका संकुंचन होगा।

इस तरह, अब प्रसारण और संकुंचन की स्थिति आयेगी; प्रसारण और विश्रान्ति की नहीं।

जब हम अभ्यास करने लगेंगे तब बात और स्पष्ट हो जायगी।

जब आप श्वास लेते हैं तब आपका शरीर फूलता है। आज्ञा चक्र से प्राण पूरे शरीर में वितरित होता है।

यानी श्वास लेते समय प्राण आज्ञा चक्र से सारे शरीर में प्रवाहित होता है और साथ-साथ शरीर भी फूलता है।

और जब आप श्वास छोड़ते हैं तो प्राण आज्ञा चक्र की ओर लौटता है जिससे सूक्ष्म शरीर संकुंचित होता है।

इसलिए यदि आप इन दो नियमों को समझ लें तो पूरा अभ्यास समझ लेंगे।

पहला नियम है– सांस अन्दर लेना और प्राण का वितरण तथा शरीर का प्रसारण।

दूसरा है– सांस छोड़ना और प्राण का आज्ञा चक्र की ओर मुड़ना तथा शरीर का संकुंचन।

हम इसे दुहरा रहे हैं।

पहले श्वास लीजिये, फिर प्राण को आज्ञा चक्र से पूरे शरीर में वितरित कीजिये।

इससे शरीर में प्रसारण आयेगा।

अब, श्वास छोड़िये। इससे शरीर में संकुंचन आयेगा।

शरीर का प्रसारण और संकुंचन शारीरिक नहीं, बल्कि मानसिक है।

अपनी कल्पना का अधिकाधिक विस्तार कीजिये।

जब आप अपने प्राण को शरीर के किसी हिस्से की ओर भेजते हैं, (यथा, पैर) तो मानसिक रूप से अनुभव कीजिये कि पैर सभी दिशाओं में फैल रहा है।

यह शारीरिक प्रसारण नहीं, बल्कि शारीरिक अनुभव है।

इस तरह जब आप श्वास लेते हैं तब आप अपने प्राण को सभी दिशाओं में भेजते हैं। इस प्रकार प्राण आज्ञा केन्द्र से प्रारम्भ करते हुए पूरे शरीर को आवृत्त कर लेता है।

एड़ी से चोटी तक आपका शरीर प्राणशक्ति से संतृप्त हो गया है।

एड़ी से चोटी तक आपका शरीर प्राणशक्ति से संतृप्त हो गया है।

इसका अनुभव तीव्रता से कीजिये।

साथ ही साथ आपको अवश्य ही यह कल्पना करनी चाहिए कि आपका सूक्ष्म शरीर सभी दिशाओं में व्यापक रूप से फैल रहा है और इसने वैश्व रूप (cosmic form) धारण कर लिया है।

इसी तरह जब आप श्वास छोड़ें तो सचेत होकर अपने प्राण को शरीर के अन्य भागों से खींचकर आज्ञा की ओर ले जाइये।

जिस तरह ज्वार के पलटने पर समुद्र का जल पीछे हटता हुआ सा दिखाई पड़ता है, उसी तरह श्वास छोड़ते समय प्राण भी पीछे की ओर हटता है और शरीर सिकुड़ता है।

संकुंचन में शरीर-चेतना के परे जाना होता है।

लेकिन याद रखिये कि संकुंचन या प्रसारण शरीर के विशिष्ट भागों में नहीं होता। इसका प्रभाव पूरे शरीर में होता है।

एक समग्र इकाई के रूप में शरीर का संकुंचन या प्रसारण होना चाहिये।

जब आप श्वास लेते हैं तो आपका शरीर फैलता है।

और जब श्वास छोड़ते हैं तब शरीर का संकुंचन होता है।

श्वास लेते समय प्राण को आज्ञा चक्र से पूरे शरीर में ले जाते हैं।

जब आप श्वास छोड़ते हैं तो प्राणशक्ति आज्ञा चक्र से होते हुए वापस अपने मूल स्रोत में लौट आती है।

अब हम इस अभ्यास को अलग-अलग हिस्सों में करेंगे।

दाहिने हाथ से शुरू कीजिये। प्राणशक्ति को आज्ञा चक्र से दाहिने हाथ की ओर भेजिये।

अब दाहिने हाथ को फैलाइये– शारीरिक रूप से नहीं, मानसिक रूप से।

अब श्वास छोड़िये। प्राण को दाहिने हाथ से खींच कर आज्ञा तक वापस ले आइये और हाथ में विश्रांति का अनुभव कीजिये।

जब आप प्राण दाहिने हाथ को भेजें, तब अनुभव कीजिये कि प्राण उस अंग के प्रत्येक रन्ध्र में समा रहा है, उँगलियों के पोर तक में।

प्राण की गति का अनुभव कीजिये।

प्राण को आज्ञा की ओर लाकर साँस रोकिये।

बायें हाथ की अंगुलियों के पोरों तक प्राण ले जाइये।

अब आज्ञा चक्र में प्राण वापस ले आइये।

आज्ञा चक्र से प्राण बायें हाथ की ओर जाता है। फिर यह प्राण बायें हाथ से आज्ञा की ओर लौटता है।

अपने हाथों की ओर प्राण भेजते और वहाँ से वापस लाते समय क्रमशः हाथों का प्रसारण और संकुंचन कीजिये।

प्राण को आज्ञा चक्र पर वापस लाइये और साँस रोकिये।

अब श्वास लीजिये और साथ ही साथ प्राण को पीठ के दाहिने हिस्से से होकर दाहिने पैर में ले जाइये।

मानसिक रूप से अपने दाहिने पैर का प्रसारण अनुभव कीजिये।

अब श्वास छोड़िये, अपने प्राण को दाहिने पैर से समेट कर आज्ञा चक्र में वापस ले आइये।

ऐसा करते समय अपने दाहिने पैर को विश्रान्ति की स्थिति में लाइये।
अब बायें पैर में प्राण भरिये– अंगुलियों के पोरों तक।
जब भी प्राण किसी अंग में भेजे जायेंगे, मानसिक रूप से उस अंग का प्रसारण अनुभव किया जायेगा।
बायें पैर से प्राण खींचकर उसे विश्रान्ति की स्थिति में लाइये।
अब दुहराइये।
प्राण भरना...प्रसारण; प्राण वापस लाना...विश्रांति।
प्राण भरना...प्रसारण; प्राण वापस लाना...विश्रांति।
अपने प्राण को वापस आज्ञा चक्र में ले आइये और मुझे सुनिये।
आज्ञा चक्र से प्राण को दाहिनी छाती की ओर भेजिये,
और श्वास छोड़ते समय प्राण को आज्ञा चक्र की ओर वापस लाइये।
श्वास भरिये... प्राण भरिये...प्रसारण; श्वास छोड़िये...प्राण वापस ले आइये...विश्रान्ति।
अब प्राण को वापस आज्ञा चक्र में लाइये। साँस रोकिये।
श्वास भरिये, अपनी बायीं छाती में प्राण भरिये और मानसिक रूप से छाती का प्रसारण कीजिये।
श्वास छोड़िये, बायीं छाती से प्राण छोड़िये और छाती को शिथिल कीजिये।
प्राण भरना...प्रसारण; प्राण वापस ले आना...विश्रान्ति।
अब प्राणों को आज्ञा में वापस लाइये, श्वास रोकिये और मुझे सुनिये।
इस बार प्राण को वापस लाते समय विश्रान्ति के स्थान पर संकुंचन कीजिये।
प्राण भरते समय पूर्ववत् प्रसारण करना है।
सबसे पहले दाहिने हाथ में प्राण भर कर उसका प्रसारण कीजिये।
प्राण को दाहिने हाथ से खींच कर आज्ञा की ओर ले जाइये और संकुंचन कीजिये।
आज्ञा चक्र और वहाँ प्राण की उपस्थिति के प्रति सजग रहिये।
श्वास लीजिये। बायें हाथ में प्राण भरिये और बायें हाथ में प्रसारण का अनुभव कीजिये। श्वास छोड़िये और प्राण खींच कर संकुंचन कीजिये।
प्रसारण और संकुंचन की दोनों क्रियायें मानसिक होंगी।

अपने प्राण को पुन: खींच कर आज्ञा चक्र में ले जाइये। उसे आज्ञा चक्र में कुछ देर तक रोकिये।

मानसिक रूप से बायें हाथ को शिथिल कीजिये। अब दाहिने पैर की ओर बढ़िये।

आज्ञा चक्र से प्राण को पीठ के दाहिने भाग से होते हुए पूरे दाहिने पैर में भेजिये– पैर की अंगुलियों के पोरों तक। अब प्रसारण कीजिये।

प्राण को अन्दर खींचिये, श्वास छोड़िये, और दाहिने पैर का मानसिक रूप से संकुंचन कीजिये।

आज्ञा चक्र में लौटिये, श्वास रोकिये, मानसिक रूप से दाहिने पैर को शिथिल कीजिये।

बायें पैर में प्राण भेजिये और उसका प्रसारण कीजिये।

आज्ञा में प्राण को बायें पैर से वापस लाते हुए संकुंचन कीजिये।

आज्ञा में प्राण को वापस ले आइये, उसे वहाँ मानसिक रूप से रोकिये और बायें पैर को शिथिल कीजिये।

दाहिनी छाती में प्राण भरिये। प्रसारण कीजिये। संकुंचन के साथ प्राण को वापस लाइये। दाहिनी छाती को शिथिल कीजिये।

बायीं छाती में प्राण भरिये। मानसिक प्रसारण कीजिये।

आज्ञा चक्र में प्राण को खींचिये। संकुंचन कीजिये। वहाँ प्राण को कुछ समय तक रोकिये।

अब आपको प्राणशक्ति का दर्शन होना चाहिये।

प्राण को सीधे अपने पूरे शरीर में भरिये। फिर आज्ञा चक्र में प्राण को वापस ले आइये। कोई संकुंचन नहीं; कोई प्रसारण नहीं; उसे रोक कर भी नहीं रखिये।

यदि स्वयं ऐसा हो जाये तो ठीक है। परंतु यदि ये क्रियायें प्राण भरने या वापस लाने की क्रियाओं के साथ-साथ न घटित हों तो चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

प्रमुख बात यह है कि आज्ञा चक्र से शरीर में प्राण भरते समय प्रकाश-रेखाओं का सूक्ष्म दर्शन होना चाहिए। इसी प्रकार प्राण को वापस लौटाते समय इन प्रकाश रेखाओं को वापस आज्ञा चक्र में लौटने का अनुभव होना चाहिये।

यह प्रकाश वेल्डिंग करते समय निकलने वाली चिनगारियों या आतिशबाजी की चिनगारियों की तरह दिखाई देगा ।

इसी प्रकार जब शरीर के विभिन्न अंगों में प्राण संचार हो रहा हो तो प्राण का आज्ञा चक्र से निकलने वाली चिनगारियों के रूप में मानसदर्शन करना चाहिये जो प्रभावित अंग की ओर जा रही होती हैं ।

कल्पना कीजिये कि आज्ञा चक्र ज्योति का एक अक्षय भंडार है या वह ज्वालामुखी तल है जिसके फूटने पर चिनगारियाँ विद्युत गति से विकीर्ण होती हैं ।

ये सारे शरीर में व्याप्त हो जाती हैं और जब उद्भेदन रुक जाता है तब प्रकाश किरणों के रूप में ऊर्जा अपने स्रोत में वापस लौट आती है तथा अगले उद्भेदन के समय पुन: प्रकट होती है ।

अब प्राण शक्ति को दाहिने हाथ के अँगूठे में भरिये । उसे वहीं रोकिये । अब कल्पना कीजिये कि आपका दाहिना अँगूठा पिघल रहा है; आपको इस पिघलने के भाव को तीव्रता से अनुभव करना है ।

प्राण शक्ति की उपस्थिति के कारण आपके दाहिने हाथ के अँगूठे के पिघलने की अनुभूति स्व-उपचार की दृष्टि से बहुत ही सहायक होगी ।

कल्पना कीजिये कि आप एक अस्पताल में हैं और आपके दाहिने हाथ का अँगूठा बुरी तरह से जख्मी हो गया है और उसमें से रक्त की धारा बह रही है ।

उस समय आपकी क्या अनुभूति होगी ?

अंगूठे के पिघलने की बात सोचते समय इस भावना को जीवन्त बनाइये ।

अब प्राण को आज्ञा चक्र में वापस लाकर सुषुम्ना मार्ग द्वारा मूलाधार में ले जाइये ।

बाह्य वातावरण के प्रति सजग हो जाइये ।

हरि ओम् तत्सत् ।

पच्चीसवाँ अध्याय

कुण्डलिनी क्रियाएँ

निम्नांकित तांत्रिक क्रियाएँ मानव चेतना के सुनियोजित विकास की अत्यन्त प्रभावकारी विधियाँ हैं। ये विधियाँ मूल रूप से तंत्र शास्त्र में अंकित की गई थीं। कहा जाता है कि अनुभवातीत साधना के लिए इन विधियों की शिक्षा भगवान शिव ने पार्वती को दी थी।

ये विधियाँ औसत अभ्यासियों के लिए भारी पड़ सकती हैं। इनका अभ्यास करने के पूर्व उन्हें इस पुस्तक में दिये गये प्रारंभिक अभ्यासों का व्यावहारिक अनुभव प्राप्त कर लेना चाहिए।

इसके अतिरिक्त इनका अभ्यास गुरु की ही देखरेख में करना ठीक है। गुरु ही समझ सकता है कि शिष्य इनका अभ्यास करने के लिए तैयार है कि नहीं। साथ ही अभ्यास के दौरान उत्पन्न हुई कठिनाइयों (जो शिष्य को रोगों और मानसिक असंतुलन का शिकार बना सकती हैं) को भी गुरु ही दूर कर सकता है।

इन अभ्यासों को तीन भागों में बाँटा जाता है—

(१) प्रत्याहार
(२) धारणा
(३) ध्यान

वस्तुतः ये तीनों अवस्थायें क्रमविकास की निरन्तरता हैं। इनके बीच विभाजन-रेखा नहीं खींची जा सकती। चेतना एक अवस्था से दूसरी अवस्था की ओर प्रवाहित होती रहती है। इसलिए इनका अभ्यास एक विराम-रहित अनुक्रम में किया जाना चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि प्रारम्भ से ही जागरूकता की उच्च स्थिति की उपलब्धि हो जाये। लेकिन यदि कोई सक्षम साधक किसी कुशल गुरु के मार्गनिर्देशन में उनका अभ्यास करे तो निश्चय ही इस

प्रकार की उपलब्धि होगी। यह वह अवस्था होती है, जब जागरूकता का अनवरत रूप से विकास होता रहता है।

प्रत्याहार के अभ्यास

विपरीतकरणी मुद्रा

विपरीतकरणी आसन में आ जाइए।
ठुड्डी छाती को छुये। आप के पाँव एकदम सीधे (vertical) रहें।
सूक्ष्म उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास कीजिए।
आँखें बन्द कीजिए।
उज्जायी में श्वास लीजिए। साथ ही साथ यह अनुभव कीजिए कि अमृत की एक गर्म धारा मेरुदण्ड में मणिपुर से विशुद्धि तक प्रवाहित हो रही है।
अमृत विशुद्धि में संचित होगा।
कुछ सेकेंडों तक श्वास रोकिये और इसके प्रति सजग रहिये कि अमृत विशुद्धि में संचित हो कर शीतल हो रहा है।
अब उज्जायी में श्वास छोड़िये।
इस बात का ख्याल रखिये कि अमृत विशुद्धि चक्र से आज्ञा और बिन्दु होते हुये सहस्रार तक प्रवाहित हो रहा है।
अनुभूति इस प्रकार की होनी चाहिए कि अमृत का संचार श्वास की सहायता से हो रहा है।
श्वास छोड़ने के बाद अपनी सजगता को तुरन्त मणिपुर में ले आइये।
इस क्रिया को दुहराते जाइये ताकि और अधिक अमृत विशुद्धि में संचित होकर अंततः सहस्रार तक जाये।
विपरीतकरणी की इक्कीस आवृत्तियाँ कीजिए।

चक्रानुसन्धान

सिद्धासन या पद्मासन में बैठ जाइये।
आँखें बन्द कर लीजिये।

सामान्य श्वास लीजिये।
इस अभ्यास में श्वास और चेतना के बीच कोई सम्बन्ध नहीं है।
अपनी चेतना को मूलाधार चक्र पर लाइये।
आपकी चेतना मूलाधार से स्वाधिष्ठान के अग्रबिन्दु में जघनास्थि तक, मणिपुर में नाभि तक, अनाहत में उरोस्थि तक और विशुद्धि से होते हुए बिन्दु तक शनैः-शनैः अग्र भाग के पथ से आरोहण पूरा करेगी
ऊपर की ओर जाते हुए आप विभिन्न चक्रों से गुजरते हुए मानसिक रूप से यथास्थान 'मूलाधार, स्वाधिष्ठान, विशुद्धि, बिन्दु' का उच्चारण करते जाइये।
बिन्दु चक्र में पहुँचने के बाद मेरुदण्ड पथ में मूलाधार तक अवरोहण कीजिए। साथ ही साथ चक्रों से गुजरते हुए उनके नाम को मानसिक रूप से दुहराइए, जैसे– आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।
मूलाधार से तुरन्त अग्र भाग के पथ में आरोहण करना शुरू कर दीजिये।
स्वाधिष्ठान में पहुँच कर मानसिक रूप से चक्रों के नाम लेना शुरू कर दीजिये।
एक के बाद दूसरी आवृत्तियाँ दुहराते हुए अनवरत रूप से अपनी चेतना को घुमाते जाइये।
चक्रों से होकर गुजरते हुए उन्हें पहचानने की चेष्टा में तनावपूर्ण प्रयास मत कीजिये।
उनसे होकर गुजरते हुए उन पर उसी तरह निगाह डालिये मानो चलती हुई गाड़ी पर से बाहर का दृश्य देख रहे हों।
इस क्रिया में आप अपनी सजगता को एक रजत वर्णीय पतले सर्प के रूप में देख सकते हैं, जो शरीर में एक दीर्घ वृत्त के भीतर घूम रहा है।
चक्रानुसंधान का अभ्यास नौ आवृत्तियों में पूरा कीजिये।

नाद संचालन

पद्मासन अथवा सिद्धासन में बैठ जाइये। अपनी आँखें खुली रखिये।
पूरी तरह श्वास बाहर निकालिये।

अपना सिर सामने झुकाइये ताकि यह आराम से नीचे की ओर रह सके। छाती पर ठुड्डी का अधिक दबाव नहीं डालिये।
अपनी सजगता को मूलाधार चक्र में लाइये।
मानसिक रूप से दुहराइये– 'मूलाधार, मूलाधार, मूलाधार'।
उज्जायी में श्वास लीजिये। इस समय आपकी चेतना आरोहण के अग्र भाग से बिन्दु तक उठनी चाहिये।
बिन्दु की ओर बढ़ते समय स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत और विशुद्धि चक्रों से गुजरते हुए इन चक्रों के प्रति पूर्ण रूप से सजग रहिये।
आपकी चेतना विशुद्धि से बिन्दु की ओर जा रही है। इस समय उज्जायी श्वास के अन्तिम भाग में आपका सिर धीरे-धीरे ऊपर उठकर सामान्य स्थिति में आ जायेगा।
इस समय आपके अन्दर श्वास संचित है। बिन्दु पर आपकी सजगता है। इसी स्थिति में मानसिक रूप से दुहराइये– 'बिन्दु, बिन्दु, बिन्दु'।
आपके द्वारा बिन्दु शब्द दुहराये जाते समय सजगता की शक्ति निर्मित होगी, और यह 'ॐ' के कंठोच्चार में प्रगट होगी।
इसी कंठोच्चार के सहारे आप मेरुदण्ड पथ से होते हुए मूलाधार में अवरोहण करेंगे।
'ॐ' की 'ओ' ध्वनि आकस्मिक और विस्फोट के साथ होगी।
'म्' ध्वनि लम्बी और खींची हुई होगी और इसका अन्त मूलाधार में एक गुंजन के साथ होगा।
जब आप अवरोहण मार्ग से 'ॐ' ध्वनि के साथ उतर रहे हों तब आपको यथास्थान आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर और स्वाधिष्ठान चक्रों के नाम भी मानसिक रूप से दुहराना चाहिये।
जब आप मूलाधार में पहुँच जायें तो मानसिक रूप से दुहराइये– 'मूलाधार, मूलाधार, मूलाधार'। ऐसा बहिर्कुम्भक के साथ कीजिये।
तब, अन्त में अपना सिर आगे की ओर झुका लीजिये और पहले की तरह उज्जायी में श्वास लेते हुए और चक्रों से गुजरते समय उनके प्रति सजगता के साथ आरोहण कीजिये।
तेरह आवृत्तियों के अन्त में और 'मूलाधार, मूलाधार, मूलाधार' के साथ अभ्यास पूरा कीजिए।

पवन संचालन

पद्मासन अथवा सिद्धासन में बैठ जाइये और आँखें खुली रखिये।
इस क्रिया में पूरे समय तक खेचरी मुद्रा का अभ्यास किया जायेगा।
पूरी तरह रेचक कीजिये और नाद संचालन के अभ्यास की तरह ही अपना सिर आगे की ओर झुका लीजिये।
मूलाधार की सजगता के साथ मानसिक रूप से 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' दुहराइये।
तब मानसिक रूप से कहिये– आरोहण। फिर अपना आरोहण अग्र भाग के पथ से सूक्ष्म उज्जायी पूरक श्वास के साथ प्रारम्भ कीजिये।
जब आप आरोहण कर रहे हों तब नाद संचालन की तरह ही चक्रों से होकर गुजरते हुए उनके प्रति सजग रहिये।
बिन्दु पर मानसिक रूप से दुहराइये– 'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु'।
मानसिक रूप से कहिये– 'अवरोहण'। फिर उज्जायी प्रश्वास के साथ चक्रों से गुजरते समय मानसिक रूप से उनके नाम दुहराते हुए अवरोहण कीजिये।
अवरोहण के समय आपकी आँखें उन्मनी मुद्रा में रहेंगी।
मूलाधार पर पहुँचनें पर उनमें एक दरार भर रहेगी।
मानसिक रूप से दुहराइये– 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार'। फिर आंखें खोलकर सिर सामने झुका लीजिये।
फिर उज्जायी श्वास के साथ पूर्ववत् आरोहण शुरू कीजिये।
पूर्ण श्वासों को उनचास आवृत्तियाँ पूरी कीजिये।
अन्तिम 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' के साथ आँखें खोलकर अभ्यास समाप्त कर दीजिये।

शब्द संचालन

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन अथवा पद्मासन में बैठिये।
अपनी आँखें खुली रखिये और अभ्यास की पूरी अवधि में खेचरी मुद्रा कीजिये।

पूर्ण रेचक के साथ अपना सिर सामने झुका दीजिये और मूलाधार चक्र के प्रति कुछ क्षणों तक सजगता रखिये।

उज्जायी में श्वास भर कर अग्र भाग के पथ से आरोहण कीजिये।

आरोहण करते हुए श्वास-ध्वनि के प्रति सजग रहिये। यह ध्वनि 'सो' मंत्र की तरह है।

जब आप विशुद्धि से बिन्दु में आयेंगे तो पवन संचालन के अभ्यास की तरह सिर ऊपर उठेगा।

तब अन्दर श्वास भरे हुए (अन्तर्कुम्भक) कुछ सेकेण्ड के लिए बिन्दु के प्रति सजग होइये। और तब मेरुदण्ड के पथ से आरोहण करते हुए प्रश्वास की स्वाभाविक ध्वनि तथा 'हं' मंत्र के प्रति सजग होइये।

मूलाधार में पहुँचकर अपनी सजगता को कुछ सेकेण्डों तक बनाये रखिये और तब अपना सिर नीचे झुका लीजिए।

उज्जायी में श्वास लेना प्रारम्भ कीजिए और अग्र भाग के पथ से होते हुए 'सो' मंत्र के प्रति सजगता के साथ आरोहण कीजिए।

इस विधि से श्वास की उनसठ आवृत्तियाँ पूरी कीजिए।

महामुद्रा

यह क्रिया सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या उत्तानपाद आसन में की जा सकती है।

उत्तानपाद में एक पैर सामने सीधा रहता है और दूसरे पैर की एड़ी मूलाधार या योनि मुख पर रखी जाती है।

दोनों हाथों को सीधे किये हुए पैर के घुटने के ऊपर रखिए।

यदि सिद्धासन में महामुद्रा का अभ्यास करना है तो अभ्यास इस प्रकार कीजिये—

सिद्धासन अथवा सिद्धयोनि आसन में बैठकर निचले पैर की एड़ी को मूलाधार चक्र की ओर अच्छी तरह दबाकर रखिये।

खेचरी मुद्रा में पूरी तरह रेचक करके सिर आगे की ओर झुकाइये।

आँखें खुली रखिये।

मानसिक रूप से 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' दुहराइये।

अग्र भाग के पथ से आरोहण करते हुए उज्जायी श्वास (पूरक) के साथ उन चक्रों के प्रति सजगता बनाए रखिये जिनसे होकर आप गुजर रहे हों।

विशुद्धि से बिन्दु की ओर जाते हुए अपना सिर उठाइये।

बिन्दु पर मानसिक रूप से दुहराइये– 'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु'।

श्वास को अन्दर रोके रखिये और मूलबन्ध तथा शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।

मानसिक रूप से दुहराइये– 'शाम्भवी-खेचरी-मूल'। साथ ही, अपनी सजगता को इन अभ्यासों के केन्द्रों में ले जाइये।

प्रारम्भिक साधकों को चेतना को इस प्रकार रूपान्तरित करने का अभ्यास तीन बार दुहराना चाहिये।

अभ्यस्त साधक यह अभ्यास बारह बार कर सकते हैं।

तब, पहले शाम्भवी मुद्रा और फिर मूलबन्ध खोलिये।

अपनी सजगता को बिन्दु पर वापस ले आइये। उज्जायी प्रश्वास (रेचक) के साथ मेरुदण्ड से होते हुए मूलाधार में वापस आ जाइये। विभिन्न चक्रों से गुजरते समय उनके प्रति सजग रहिये।

मूलाधार पर आकर 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' कहिये, सिर सामने झुका लीजिये और पूर्ववत् उज्जायी में श्वास भरते हुए अग्र भाग के पथ से आरोहण कीजिये।

इसकी बारह आवृत्तियाँ कीजिए और अन्तिम 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' से अभ्यास पूरा कीजिए।

नोट–

उत्तानपाद आसन में महामुद्रा की अभ्यास-विधि इस प्रकार होगी–

बिन्दु पर पहुंचकर और 'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु' कहने के बाद आगे झुकिये और घुटने से अपना हाथ हटा लीजिये।

अपने दोनों हाथों की अंगुलियों से आगे के पैर के अँगूठे को पकड़िये।

फैले हुए पैर का घुटना नहीं मुड़ेगा। यह उत्तानपाद मुद्रा है।

अब शाम्भवी मुद्रा और मूलबन्ध लगाइये।

तीन से बारह बार 'शाम्भवी-खेचरी-मूल' दुहराइये। दुहराते समय इन

अभ्यासों के स्थानों (seats) पर अपनी सजगता को लाते जाइये । शाम्भवी, फिर मूलबन्ध और फिर उत्तानपाद मुद्रा को खोलते हुए घुटनों पर अपने हाथ रख लीजिये ।
अब अपनी चेतना को बिन्दु पर ले आइये और मेरुदण्ड से उज्जायी प्रश्वास के साथ अवरोहण कीजिए ।
यदि महामुद्रा का अभ्यास उत्तानपाद के साथ किया जाये तो इसका अभ्यास चार बार दाहिने पैर को सामने फैलाकर, चार बार बायें पैर को फैलाकर और चार बार दोनों पैर फैलाकर कीजिये ।
बाकी सभी बातें दोनों पद्धतियों में एक-सी रहेंगी ।

महाभेद मुद्रा

इस मुद्रा का अभ्यास सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या उत्तानपाद आसन में किया जा सकता है ।
यदि सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में यह अभ्यास किया जाये, तो विधि यह होगी–
खेचरी मुद्रा में आँखें खुली रखिये ।
पूर्ण रेचक के बाद जालन्धर बन्ध लगाइये ।
मानसिक रूप से 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' दुहराइये । फिर जालन्धर बन्ध खोल दीजिए ।
बिन्दु की ओर अग्र भाग के पथ से आरोहण करते हुए उज्जायी में श्वास लीजिये (पूरक) ।
आरोहण के समय अपना सिर सीधा रखिये ।
मानसिक रूप से 'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु' दुहराइये और तब मेरुदण्ड से होते हुए मूलाधार तक उज्जायी प्रश्वास के साथ अवरोहण कीजिये ।
चक्रों से गुजरते समय उनके प्रति सजग होना न भूलिये ।
मानसिक रूप से 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' दुहराइये और तब बहिर्कुम्भक के साथ जालन्धर बन्ध का अभ्यास कीजिए ।
मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध और नासिकाग्र दृष्टि का अभ्यास कीजिए ।
मानसिक रूप से 'नासिकाग्र-उड्डियान-मूल' दुहराइये । साथ ही साथ

इन अभ्यासों के स्थानों के प्रति भी सजग रहिये।
प्रारम्भिक साधक सजगता के इंस चक्र को तीन बार दुहरायेंगे।
अनुभवी साधक इसकी बारह आवृत्तियाँ पूरी करेंगे।
नासिकाग्र दृष्टि, मूलबन्ध और उड्डियान बन्ध खोल दीजिये।
अपनी सजगता को पुन: मूलाधार पर ले आइये।
तब उज्जायी में श्वास लेते हुए अपना सिर ऊपर स्वाभाविक अवस्था में उठाते हुए अग्र भाग से आरोहण कीजिये।
बारह आवृत्तियाँ पूरी कीजिये।

विशेष–
यदि महाभेद मुद्रा का अभ्यास उत्तानपाद आसन में किया जायेगा, तो विधि इस प्रकार होगी–
अपने हाथों को घुटने पर रखिये, पूर्ण रेचक कीजिये और सिर आगे की ओर झुकाइये।
मानसिक रूप से दुहराइए– 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार'।
उज्जायी में श्वास लेते हुए अग्र भाग के पथ से मूलाधार से बिन्दु तक आरोहण कीजिये। विशुद्धि पार करते समय सिर उठा लीजिये।
'बिन्दु-बिन्दु-बिन्दु' दुहराइये। मेरुदण्ड पथ से उज्जायी में श्वास छोड़िये। ऐसा करते समय मार्ग में पड़ने वाले चक्रों के प्रति सजगता बनाये रखिये।
मानसिक रूप से 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' करते हुए जालन्धर बन्ध लगाने के लिए अपना सिर आगे झुकाइये।
उत्तानपाद मुद्रा में आने के लिए आगे झुककर अपना फैला हुआ पैर पकड़िये। मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध और नासिकाग्र दृष्टि का अभ्यास बहिर्कुम्भक लगाये हुए ही कीजिये।
मानसिक रूप से 'नासिकाग्र-उड्डियान-मूल' दुहराइये। साथ ही, इन अभ्यासों के स्थानों के प्रति भी सजग रहिये।
सजगता के इस चक्र को प्रारम्भ में तीन बार और कुछ अभ्यास हो जाने के बाद बारह बार दुहराइये।
तब नासिकाग्र दृष्टि, मूलबन्ध और उड्डियान बन्ध को मुक्त कीजिये।

हाथों को घुटने पर लाइये और उठकर बैठ जाइये । अपना सिर झुकाये रखिये ।

अपनी सजगता को पुनः मूलाधार पर लाइये और तब उज्जायी में श्वास लेते हुए अग्र भाग के पथ से आरोहण कीजिये ।

इस प्रकार चार आवृत्तियाँ दाहिने पैर को फैलाकर, चार आवृत्तियाँ बायें पैर को फैलाकर और चार आवृत्तियाँ दोनों पैर फैलाकर पूरी कीजिये ।

प्रत्येक आसन में चौथी आवृत्ति के बाद जब आप बन्धों का अभ्यास कर चुकें, तब एक बार उज्जायी पूरक के साथ बिन्दु पर आइये, बिन्दु मन्त्र को दोहराइये, मूलाधार में अवरोहण कीजिये, मन्त्र को दोहराइये और फिर विश्रान्ति की स्थिति में आ जाइये ।

माण्डूकी क्रिया

भद्रासन में बैठिये और आँखें खुली रखिये ।

आपके शरीर में मूलाधार चक्र के नीचे का बिन्दु धरती का स्पर्श अवश्य करे ।

यदि ऐसा नहीं है तो इस बिन्दु पर दबाव डालने के लिए तकिया रखिये ।

हाथों को घुटने पर रखिए और अगोचरी मुद्रा में आ जाइये ।

अपनी स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग होइये जो शांकवीय पथ से आ-जा रही है ।

गंध की अनुभूति पर एकाग्र होइये ।

इस क्रिया का उद्देश्य है सूक्ष्म शरीर की सुगंध का अनुभव करना ।

यह सुगंध मलय गंध के समान है ।

यदि आँखें थक गई हों तो कुछ देर के लिए उन्हें बन्द कर लीजिये ।

फिर दुबारा अगोचरी मुद्रा में लौट आइये ।

इस क्रिया का अभ्यास तब तक करते जाइये जब तक कि यह आपको मदोन्मत्त न बना दे ।

लेकिन अभ्यास इस सीमा तक न कीजिये कि आप इसी में लीन रह जायें और इसे समाप्त करना ही न चाहें ।

ताड़न क्रिया

पद्मासन में बैठकर आँखें खुली रखिये।
अपनी हथेलियों को फर्श पर नितम्बों के बगल में इस तरह रखिये कि उँगलियाँ सामने की ओर रहें।
सिर किंचित पीछे की ओर झुकाकर आकाशी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।
उज्जायी में सस्वर मुंह से श्वास लीजिये।
श्वास लेते समय अनुभव कीजिये कि वह शरीर में नीचे उतर रही है।
श्वास मूलाधार चक्र में संचित हो जायेगी।
अपनी सजगता मूलाधार में रखिये और अत्यन्त हलके सूक्ष्म मूलबंध का अभ्यास कीजिये।
अपने हाथों को नितम्ब के बगल में टेकते हुए उनके सहारे शरीर को ऊपर उठाइये। फिर शरीर को इस प्रकार हलके से नीचे गिराइये कि मूलाधार में किंचित आघात पहुँचे।
इस क्रिया की दो आवृत्तियाँ और कीजिये।
इसे तेजी से या कठोरता से मत कीजिये।
तीसरी आवृत्ति के बाद उज्जायी प्राणायाम में धीरे-धीरे श्वास छोड़िये।
आपको ऐसा प्रतीत होगा कि मूलाधार (जहाँ श्वास एकत्रित है) से सभी दिशाओं की ओर श्वास का प्रसारण हो रहा है।
इस क्रिया का अभ्यास कुल सात बार कीजिये।
प्रति आवृत्ति आप जितनी बार ताड़न क्रिया करते हैं उसकी संख्या प्रति महीने एक के हिसाब से बढ़ाते जाइये। इस संख्या को ग्यारह तक बढ़ाइये।

धारणा के अभ्यास

नौमुखी

सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में बैठकर आँखें बन्द कर लीजिये।
आवश्यक हो तो मूलाधार पर दबाव डालने के लिए तकिया रख लीजिये।

पूर्ण रेचक कीजिये और सिर आगे झुका दीजिये।
मानसिक रूप से दुहराइए – 'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार'।
उज्जायी में श्वास लेते हुये बिन्दु तक आरोहण कीजिये, ऐसा करते समय सिर ऊपर उठाते जाइये।
अँगूठे से कानों, दोनों तर्जनी उँगलियों से आँखों, मध्यमा उँगलियों से नासाछिद्रों, अनामिका उँगलियों से ऊपरी होंठों तथा कनिष्ठिका उँगलियों से निचले होंठों को बन्द कर के योनि मुद्रा लगाइए।
मूलबंध और वज्रोली मुद्रा लगाइए।
मेरुदंड के मार्ग और बिन्दु के प्रति सजग होइए।
अब एक चमकते हुये ताम्र त्रिशूल का मानसदर्शन कीजिये। इसका सबसे निचला हिस्सा मूलाधार में है। इसका डंडा मेरुदंड में है और इसके शूल (prongs) विशुद्धि से ऊपर की ओर फैले हुए हैं।
ये शूल अत्यंत पैने हैं। बीच का शूल बिन्दु को छू रहा है।
त्रिशूल अनेक बार स्वयं ऊपर उठकर बिन्दु का भेदन करेगा।
जब-जब यह बिन्दु का भेदन करे, तब-तब 'बिन्दु-भेदन' मंत्र दुहराइये।
वज्रोली मुद्रा और मूलबंध खोल दीजिए।
ऊपरी द्वार खोलकर हाथ नीचे कीजिए।
बिन्दु से मूलाधार तक उज्जायी में रेचक कीजिए और मूलाधार मंत्र को दुहराइये।
अपना सिर आगे झुकाइये तथा अग्र भाग के पथ से बिन्दु तक पूरक करते हुये इस क्रिया को दुहराइये।
पाँच आवृत्तियाँ पूरी कीजिये। रेचक के साथ अभ्यास समाप्त कीजिये।

शक्ति चालिनी

सिद्धासन अथवा सिद्धयोनि आसन में आँखें बन्द कर के बैठिये।
खेचरी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।
पूरी श्वास बाहर निकाल दीजिये और मूलाधार का ख्याल कीजिये।
अपना सिर झुकाइये।
मानसिक रूप से दुहराइये–'मूलाधार-मूलाधार-मूलाधार' और तब

अग्र भाग के पथ से उज्जायी में श्वास लेते हुये बिन्दु तक आरोहण कीजिये ।

अपना सिर बिन्दु पर पहुँचने के साथ ऊपर उठा लीजिये ।

कुम्भक लगाकर नाक, कानों, आँखों और होंठों को उँगलियों से बन्द करते हुए योनि मुद्रा का अभ्यास कीजिये ।

मेरुदण्ड से मूलाधार तक अवरोहण और अग्र भाग के पथ से बिन्दु तक आरोहण के प्रति अनवरत क्रम में सजगता बनाये रखिये । श्वास अन्दर रोके रखिये ।

आप इस तरह से भी अभ्यास कर सकते हैं–

आप अपने अन्दर एक पतले हरे सर्प का मानसदर्शन कर सकते हैं ।

इस सर्प की पूँछ बिन्दु में है ।

इसका शरीर मूलाधार तक नीचे गया है ।

इसका सिर बिन्दु में है । मुँह में इसकी पूँछ दबी हुई है ।

इस सर्प को ध्यान से देखेंगे तो इसे सूक्ष्म मार्ग पर चक्कर लगाते हुये पायेंगे । यह अपना कोई अलग मार्ग भी बना सकता है ।

यह कुछ भी कर रहा हो, इसे सिर्फ देखते जाइये ।

जब आप और अधिक श्वास न रोक सकें तब योनिमुद्रा खोलकर हाथों को घुटनों पर ले आइये ।

अपनी सजगता बिन्दु पर लाइये और उज्जायी में श्वास छोड़ते हुये मूलाधार तक अवरोहण कीजिये ।

मूलाधार पर मूलाधार मंत्र जपिये । अपना सिर झुका लीजिए और पुनः अग्र भाग से आरोहण कीजिये ।

बिना रुके हुये इस क्रिया को पाँच बार या पाँच श्वास आवृत्तियों तक दुहराइये ।

शाम्भवी

सिद्धासन सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठिये ।

आँखें बन्द करके खेचरी मुद्रा का अभ्यास कीजिये ।

एक कमल का मानसदर्शन कीजिये । इसकी लम्बी पतली नाल नीचे की

ओर फैलती चली गयी है।
कमल की जड़ पारदर्शी हरे रंग की है।
कमल प्रस्फुटित नहीं हुआ है।
कमल कली के रूप में है।
कली के नीचे कुछ नई हलके हरे रंग की पत्तियाँ हैं।
फूल की पँखुड़ियाँ गुलाबी रंग की हैं।
पँखुड़ियों पर लाल शिरायें हैं।
कमल की डंडी आपके मेरुदण्ड में है। इसकी जड़ मूलाधार में है।
कमल का फूल सहस्रार में है।
श्वास निकालकर अपनी सजगता को मूलाधार में कमल की जड़ में ले जाइये।
उज्जायी प्राणायाम में श्वास लीजिए और अपनी सजगता को मेरुदण्ड में स्थित कमल-नाल पर ले जाइये।
श्वास (पूरक) के अंत में आप कमल-नाल के सिरे पर कमल की कली तक पहुँच जायेंगे।
आपका आरोहण एक कीट की तरह होगा जो किसी पुष्प-नाल के अन्दर से होकर ऊपर चढ़ता जाता है।
साँस अन्दर रोके हुये अपनी सजगता को सहस्रार पर ले जाइये।
आप कमल के भीतर हैं, लेकिन आप इसे बाहर से भी देख सकते हैं।
यह बहुत धीरे-धीरे खुलेगा।
जब यह खुलेगा तो आप इसके केन्द्र में पीत-पराग-मंडित पुष्प-केसर को देखेंगे।
यह फिर धीरे-धीरे बन्द हो जायेगा और फिर तुरन्त ही खुल जायेगा। जब कमल का खुलना और बन्द होना रुक जाये और यह बन्द रह जाये, तब धीरे-धीरे नाल से होकर उज्जायी प्रश्वास के साथ मूलाधार में अवरोहण कीजिये।
जड़ में, मूलाधार पर कुछ सेकेण्ड ठहरिये और तब फिर धीरे-धीरे श्वास लेते हुए नाल से होकर आरोहण कीजिए।
आरोहण-अवरोहण की क्रिया ग्यारह आवृत्तियों में करने के बाद इसका अभ्यास समाप्त कीजिये।

अमृत पान

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में सुखपूर्वक बैठकर आँखें बन्द कर लीजिए।
खेचरी मुद्रा का अभ्यास कीजिए।
अपनी सजगता को मणिपुर चक्र तक ले आइये जहाँ उष्ण, मृदु रस का भंडार है।
उज्जायी में श्वास लीजिये। श्वास की चूषण (suction) शक्ति द्वारा मेरुदण्ड के पथ से होते हुये विशुद्धि चक्र तक इस रस को ऊपर खींच लीजिए।
कुछ सेकेण्डों तक विशुद्धि पर रुकिये।
मणिपुर से प्राप्त अमृत विशुद्धि की शीतलता के कारण बर्फ की तरह ठंडा हो जायेगा। तब उज्जायी में ललना चक्र तक श्वास छोड़िये। श्वास के साथ शीतल अमृत को ललना तक ले जाइये।
आप जैसे ही ललना पर पहुँचेंगे वैसे ही आपकी श्वास स्वयं बिखर जाएगी। इस समय आपकी सजगता को तुरन्त सीधे मणिपुर में आना होगा।
दूसरी बार उज्जायी में श्वास लेते समय ऊर्ध्वमुखी रस संचार का अभ्यास जारी रखिये।
नौ आवृत्तियों में अभ्यास पूरा कीजिए।

चक्र भेदन

सिद्धासन या पद्मासन लगाकर आँखें बन्द कर लीजिये।
श्वास और प्रश्वास के बीच बिना रुके हुये स्वाभाविक ढंग से श्वास लेते रहिये।
इस क्रिया में श्वास और चेतना की गति में सामंजस्य नहीं होता है। हालाँकि दोनों में एक अन्त:सम्बन्ध होता है और दोनों को बिना किसी बाधा के अपनी-अपनी लय के अनुसार चलते रहना चाहिए।
श्वास छोड़िये और अपनी सजगता को मूलाधार में ले आइये।

श्वास लीजिए और अपनी चेतना को अग्र भाग के पथ से धीरे-धीरे ऊपर लाइये।

विशुद्धि तक आने पर श्वास रुकने लगेगी और आप श्वास छोड़ना शुरू कर देंगे।

फिर भी, सजगता बिन्दु तक जायेगी जहाँ यह अपनी दिशा बदलकर मेरुदण्ड से नीचे उतरने लगेगी।

जिस समय चेतना अवरोहण कर रही हो, उस समय आप श्वास छोड़ेंगे। इस तरह दोनों में सामंजस्य होगा।

स्वाधिष्ठान के आसपास श्वास समाप्त हो जायेगी। तब आप श्वास लेना शुरू करेंगे।

चेतना मूलाधार पर टिकी रहेगी और तब तुरन्त पलटकर अग्र भाग के पथ से ऊपर जाने लगेगी।

अब विशुद्धि तक दोनों साथ-साथ यात्रा करेंगे। यहाँ फिर श्वास (पूरक) पूर्ववत् समाप्त हो जायेगी।

इस क्रिया की उनसठ आवृत्तियाँ होनी चाहिये, लेकिन यदि इस संख्या तक पहुँचने के पूर्व ही मन अन्तर्मुखी होने लगे, तो इसे रोक कर दूसरी क्रिया शुरू कर देनी चाहिये।

सुषुम्ना दर्शन

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठिये।

आँखें बन्द करके सामान्य श्वास लेते रहिये।

इस क्रिया में श्वास और सजगता के बीच कोई सम्बन्ध नहीं है।

अपनी सजगता को मूलाधार में लाइये।

कल्पना में एक पेंसिल लेकर मूलाधार पर एक वर्ग खींचिये।

वर्ग के अन्दर यथासम्भव बड़े से बड़े आकार का एक उलटा समभुज (equilateral) त्रिभुज अंकित कीजिये।

तब वर्ग के चारों कोनों को छूते हुए एक वृत्त बनाइये।

वर्ग की प्रत्येक भुजा के लिए चार पंखुड़ियाँ बनाइये।

अपनी सजगता को स्वाधिष्ठान में ले आइये।

वहाँ एक वृत्त बनाइये जिसका व्यासार्ध (radius) मूलाधार पर अंकित चतुर्भुज के व्यासार्ध जितना बड़ा हो।
वृत्त के चारों ओर छ: पँखुड़ियाँ बनाइये।
अब मणिपुर में आ जाइये।
एक वृत्त खींचिये और इस वृत्त में फिट होने लायक बड़े से बड़ा ऐसा त्रिभुज खींचिये जिसका सिरा ऊपर की ओर हो।
इस वृत्त के चारों ओर दस पँखुड़ियाँ अंकित कीजिये।
चेतना को अनाहत तक ले जाइये।
वहाँ दो त्रिकोण अंकित कीजिये, एक का सिरा ऊपर की ओर तथा दूसरे का सिरा नीचे की ओर हो। दोनों त्रिकोण एक-दूसरे को काटेंगे। उन्हें बारह पँखुड़ियों से युक्त एक वृत्त से घेर दीजिये।
तब विशुद्धि पर आइये।
एक वृत्त खींचिये। उसकी परिधि के तल में एक अर्धचन्द्र अंकित कीजिये।
इस वृत्त के चारों ओर सोलह पँखुड़ियाँ बनाइये।
अब आज्ञा में आइये और वहाँ पर एक वृत्त अंकित करके उसके अन्दर संस्कृत में एक बहुत बड़ा 'ॐ' लिखिये।
वृत्त के दायें-बायें एक-एक वृहदाकार पँखुड़ी अंकित कीजिए।
बिन्दु पर एक अर्धचन्द्र अंकित कीजिए और उसके ऊपर एक छोटा-सा वृत्त बनाइये।
सहस्रार पर पहुँचिये और वहाँ भी एक वृत्त बनाइए। उस वृत्त में एक बड़े से बड़ा त्रिभुज बनाइये। इसका सिरा ऊपर की ओर रहे। इस वृत्त के चारों ओर एक हजार पँखुड़ियाँ हैं।
अब चक्रों में इन रंगों को भरिये—
मूलाधार—लाल; स्वाधिष्ठान—काला; मणिपुर—पीला; अनाहत—आसमानी नीला; विशुद्धि—चन्द्र श्वेत के साथ बैंगनी, आज्ञा—हल्का स्लेटी; बिन्दु— स्वर्णिम पीला; सहस्रार— लाल।
सभी चक्रों की पँखुड़ियाँ मूलाधार वाले लाल रंग से रँगी जायेंगी।
इस मानसिक चित्रांकन के बाद, सभी चक्रों को उनके उचित स्थानों पर एक ही दृष्टि में देखने की चेष्टा कीजिए।
यदि उन्हें एक साथ देख पाना बहुत कठिन लगे, तो पहले दिन सिर्फ दो

चक्र देखिये। अपने इस मानसदर्शन में प्रतिदिन एक चक्र जोड़ते जाइये, जब तक कि आप सभी चक्रों को एक साथ नहीं देखने लगें।

प्राण आहुति

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठ जाइये।
आँखें बन्द करके सामान्य ढंग से श्वास लीजिये।
अपने सिर पर एक दिव्य हाथ का स्निग्ध स्पर्श अनुभव कीजिये।
यह हाथ आपके शरीर में दिव्य प्राण भर रहा है। यह प्राण मेरुदण्ड से होकर सहस्रार से नीचे की ओर यात्रा कर रहा है।
आप इसका अनुभव शीत या ताप की लहर, ऊर्जा, विद्युतधारा, चुम्बकीय शक्ति या वायु अथवा द्रव के प्रवाह की तरह कर सकते हैं।
आपको कम्पनों, आघातों, झटकों या गुदगुदी की अनुभूति हो सकती है।
जब प्राण मूलाधार में पहुँच जायें, तब तुरंत दूसरी क्रिया का अभ्यास शुरू कर दीजिये।
दूसरी बार प्राण की अनुभूति होने की प्रतीक्षा मत कीजिए।

उत्थान

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठकर अपनी आँखें बन्द कर लीजिए।
इस क्रिया में भी आपको श्वास स्वाभाविक ढंग से लेना-छोड़ना है।
अपनी सजगता को मूलाधार चक्र में ले आइये।
इसका स्पष्ट रूप से और पूर्णत: मानसदर्शन करने की चेष्टा कीजिए, ताकि आप सभी चीजें भली प्रकार देख सकें।
आप एक काला, धूमित तथा गैसीय पदार्थ से बना हुआ शिवलिंग देखेंगे। शिवलिंग के तल और शिखर नहीं हैं। एक लाल बाल-सर्प इसे घेरे हुये है। इसका सिर आधा झुका हुआ है। सर्प साढ़े तीन कुंडली मारे बैठा है। यह कुंडली खोलना चाहता है। आप देखेंगे कि ऐसा करने की चेष्टा में सर्प अपने को सीधा कर रहा है और एक क्रुद्ध फुफकार के

साथ सुषुम्ना मार्ग से ऊपर उठ रहा है। शिवलिंग के तल में ही सर्प की पूँछ जमी रहेगी लेकिन उसका सिर और शरीर ऊपर की ओर उठेंगे और पुनः नीचे आ जायेंगे।
कभी-कभी सर्प समेत शिवलिंग शरीर में अपना स्थान परिवर्तित कर सकता है।
इस तरह कभी आप उसे आज्ञा या सहस्रार में भी देख सकते हैं।
सर्प का सिर काफी चौड़ा है– आपके शरीर के बराबर चौड़ा लेकिन इसका आकार कोबरा साँप जैसा नहीं है।
कुछ देर बाद आपको अपने शरीर के संकुंचन का अनुभव होगा।
इसके बाद आनन्द की स्थिति आयेगी।
जब ऐसा हो तब इस क्रिया को बन्द कर के अगली क्रिया कीजिये।

स्वरूप दर्शन

सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठ जाइये।
आँखें बन्द कर लीजिए।
अपने शरीर के प्रति सजग हो जाइए।
आपका शरीर पूर्णतः स्थिर है और आप इस स्थिरता के प्रति पूर्णतः सजग हैं।
आपको पूर्णतः एक चट्टान की तरह स्थिर होना है। जब आप पूर्णतः स्थिर हो जायें, तब अपने स्वाभाविक श्वास के प्रति भी सजग होइये।
अपनी श्वास के अनवरत प्रवाह पर ध्यान दीजिये।
परन्तु आपका शरीर पूर्णतः स्थिर होना चाहिये।
आपका शरीर कड़ा होने लगेगा।
यह जितना ही कड़ा होता जायेगा, आपकी सजगता पूर्णतः आपकी श्वास क्रिया पर केंन्द्रित होती जायेगी। शरीर अपने आप अधिकाधिक कड़ा होता जायेगा।
जब आपका शरीर पत्थर की तरह कड़ा हो जाये और आप इसे चाह कर भी न हिला सकें, तब अगली क्रिया का अभ्यास प्रारंभ कीजिये।

लिंग संचालन

अपने उसी आसन में बैठे रहिये, जिसमें आप जड़वत् हो गये हैं। आँखें बन्द रखिये।
शरीर के कड़ेपन के कारण आपकी श्वास स्वत: उज्जायी श्वास बन जायेगी और खेचरी मुद्रा लग जायेगी।
अपने श्वास के प्रति पूर्णत: सजग रहिये।
आप अनुभव करेंगे कि प्रत्येक श्वास (पूरक) के साथ आपका शरीर फैल रहा है।
प्रत्येक प्रश्वास के साथ आपका शरीर सिकुड़ता है।
यह अजीब बात है क्योंकि आपका शरीर हिल नहीं रहा है। वह पत्थर की तरह कड़ा है।
वस्तुत: आपका सूक्ष्म शरीर ही फैल-सिकुड़ रहा है। जितना ही आप इस सिकुड़ने और फ़ैलने की प्रक्रिया पर ध्यान देंगे, यह और स्पष्ट होती जायेगी। कुछ समय बाद आप भौतिक शरीर की चेतना खो देंगे और आप सीधे सूक्ष्म शरीर को ही देखेंगे।
इस अभ्यास को जारी रखिये। फैलने तथा सिकुड़ने का दायरा बढ़ता जायेगा।
अन्तत: आप उस स्थिति में पहुँच जायेंगे जहाँ सिकुड़ते समय शरीर प्रकाश का एक बिन्दु बन कर रह जाएगा।
जब ऐसा होने लगे तब इस क्रिया को बन्द करके अगली क्रिया का अभ्यास कीजिये।

ध्यान का अभ्यास

आपने अपने सूक्ष्म शरीर को प्रकाश-बिन्दु के रूप में अनुभव कर लिया है।
उस प्रकाश बिन्दु को देखिये। वह आपको एक सुनहले अंडे के रूप में दिखाई देगा।
जब आप इस सुनहले अंडे को देखेंगे, तो यह बड़ा होने लगेगा।

सुनहला अंडा प्रकाशमान है और पूरी तीव्रता से चमक रहा है, परन्तु इससे किरणें नहीं फूट रही हैं।

सुनहला अंडा जैसे-जैसे बड़ा होता जायेगा, यह आपके सूक्ष्म और भौतिक शरीर का आकार ग्रहण करता जायेगा।

यह आकार भौतिक नहीं है।

यह सूक्ष्म भी नहीं है।

एक दीप्त प्रकाश है।

यह आपका कारण व्यक्तित्व है।

समाप्त

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
जीवन-परिचय

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म सन् 1923 में अल्मोड़ा (उत्तरांचल) में एक किसान परिवार में हुआ था। उनके पूर्वज योद्धा थे तथा पिता के अलावा उनके बहुत से रिश्तेदारों ने सेना और पुलिस विभाग में अपनी सेवाएँ दीं।

छ: वर्ष की अवस्था में एक दिन उनकी चेतना सहज ही शरीर से विलग हो गयी और वे धरती पर निश्चल पड़े अपने शरीर को देखने लगे। बाल्यावस्था में ही ऐसी आध्यात्मिक अनुभूतियों से यह स्पष्ट हो गया कि श्रीस्वामी जी सामान्यजनों से भिन्न हैं। अनेक साधु-संतों ने उन्हें आशीर्वाद दिया और उनके माता-पिता को आश्वस्त किया कि उनकी चेतना बहुत उच्च स्तर की है। इस अशरीरी चेतना का अनुभव उन्हें बार-बार होता रहा, जिसके कारण वे अनेक संतों, यथा—आनन्दमयी माँ के सम्पर्क में आए। श्री स्वामीजी एक तांत्रिक भैरवी सुखमन गिरि से भी मिले, जिन्होंने उन पर शक्तिपात किया और उन्हें अपने आध्यात्मिक अनुभवों के स्थायित्व के लिए एक गुरु खोजने का निर्देश दिया।

सन् 1943 में 20 वर्ष की अवस्था में उन्होंने गृह-त्याग किया और गुरु की खोज में निकल पड़े। यह खोज अन्तत: उन्हें ऋषिकेश में स्वामी शिवानन्द सरस्वती के पास ले गयी, जिन्होंने 12 सितम्बर 1947 को गंगा किनारे उन्हें दशनामी संन्यास परम्परा में दीक्षित किया और स्वामी सत्यानन्द सरस्वती नाम दिया।

ऋषिकेश में प्रारम्भ के उन वर्षों में श्री स्वामीजी ने अपने को पूरी तरह गुरु-सेवा में निमग्न कर दिया। उन दिनों आश्रम अपने शैशवकाल में ही था और वहाँ भवन तथा शौचालय जैसी मूलभूत सुविधाएँ भी नहीं थीं। उस छोटे आश्रम के चारों ओर फैले घने जंगलों में साँप, बिच्छू, मच्छर और बन्दरों की भरमार थी ही, बाघ भी प्राय: दिखायी पड़ जाते थे। आश्रम का कार्य भी बहुत कठिन और श्रम-साध्य था। श्री स्वामीजी मजदूर की तरह बाल्टियों में पानी भर-भर कर गंगा से ऊपर आश्रम में लाते थे। उन्होंने आश्रम निर्माण के लिए जल-संग्रह करने हेतु कई किलोमीटर दूर ऊँचे पर्वतीय झरने से आश्रम तक पानी लाने के लिए नाले भी खोदे।

ऋषिकेश उस समय एक छोटा शहर था और आश्रम के लिए सभी आवश्यक वस्तुएँ बहुत दूर से पैदल ही लानी पड़ती थीं। इसके अलावा भी अनेक कार्य थे। विश्वनाथ मंदिर की दैनिक पूजा के लिए श्री स्वामीजी को घने जंगल में दूर-दूर तक

बेल-पत्र संग्रह करने जाना पड़ता था। यदि कोई बीमार हो जाता तो उसके लिए चिकित्सा सुविधा भी न थी और न ही उसकी देखभाल करने वाला कोई था। सभी संन्यासियों को भिक्षा के लिए बाहर जाना पड़ता था, क्योंकि आश्रम में भोजन बनाने की कोई व्यवस्था नहीं थी।

जिन दिनों श्री स्वामीजी गुरु-सेवा में रहे, उन महत्त्वपूर्ण दिनों के बारे में उनका कहना है कि वह गुरु-तत्त्व से पूर्ण सायुज्य और समर्पण का काल था, जहाँ उन्होंने अनुभव किया कि स्वामी शिवानन्द जी को सुनना, देखना या उनसे बातें करना ही योग था। उनके गुरु की लगभग सभी बातें सच निकलीं। गुरु के प्रति समर्पण और निष्काम-सेवा-भाव से ही उन्हें आध्यात्मिक जीवन के रहस्यों का पूर्ण ज्ञान मिला और वे योग, तंत्र, वेदान्त, सांख्य एवं कुण्डलिनी योग के मूर्धन्य विशेषज्ञ बन गये। स्वामी शिवानन्द जी ने श्री स्वामीजी के बारे में कहा था, 'विरलों में ही इस कम उम्र में ऐसा तीव्र वैराग्य पाया जाता है। स्वामी सत्यानन्द नचिकेता-वैराग्य से परिपूर्ण हैं।'

यद्यपि स्वामी सत्यानन्द चित्रोपम स्मृति और कुशाग्र बुद्धि के धनी थे और उनके गुरु ने उन्हें बहुमुखी प्रतिभाशाली की संज्ञा दी थी, तथापि उनका ज्ञान आश्रम की पुस्तकों के अध्ययन से नहीं आया था। उनका ज्ञान अपने गुरु, स्वामी शिवानन्द जी की अथक सेवा और उनके प्रति अविचल श्रद्धा और प्रेम से प्रस्फुटित हुआ था। स्वामी शिवानन्द जी ने उनसे कहा था, 'कठोर परिश्रम करो, तुम निर्मल हो जाओगे। तुम्हें प्रकाश खोजने की आवश्यकता नहीं, प्रकाश स्वयं तुम्हारे अंदर से प्रकट होगा।'

बारह वर्षों तक गुरु-सेवा के पश्चात् सन् 1956 में स्वामी सत्यानन्द जी परिव्राजक के रूप में निकल पड़े। विदा के पूर्व स्वामी शिवानन्द जी ने उन्हें क्रिया योग की शिक्षा दी और लक्ष्य देते हुए कहा, 'योग को द्वार-द्वार पहुँचाओ, विश्व के कोने-कोने में फैलाओ।' एक परिव्राजक संन्यासी के रूप में स्वामी सत्यानन्दजी ने पूरे भारत, अफगानिस्तान, बर्मा, नेपाल, तिब्बत, श्रीलंका और एशिया उपमहाद्वीप का व्यापक रूप से परिभ्रमण कभी पैदल, कभी कार, कभी ट्रेन और कभी ऊँट द्वारा किया। अपनी यात्रा के दौरान वे समाज के सभी वर्ग के लोगों से मिले और योग के प्रचार के लिए अपनी योजना को रूप देना प्रारम्भ किया। यद्यपि उनकी औपचारिक शिक्षा और आध्यात्मिक परम्परा वेदान्त की थी, तथापि योग प्रचार का कार्य उनका आन्दोलन बन गया।

उनका लक्ष्य 1956 में उनके समक्ष प्रकट हुआ जब उन्होंने योग का वैश्विक परिवार बनाने के उद्देश्य से अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मंडल की स्थापना की। चूँकि उनका लक्ष्य मुंगेर में ही उनके समक्ष प्रकट हुआ था, अत: उन्होंने मुंगेर में बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। बहुत पहले से ही उनकी शिक्षाएँ तेजी से सम्पूर्ण विश्व में फैलने लगी

थीं। सन् 1963 से 1983 की अवधि में स्वामी सत्यानन्दजी ने योग को विश्व के कोने-कोने में, हर जात्ति, सभ्यता, धर्म और राष्ट्रीयता के बीच पहुँचा दिया। उन्होंने सभी महाद्वीपों के लाखों लोगों का मार्गदर्शन किया एवं विभिन्न देशों में योग-केन्द्रों और आश्रमों की स्थापना की।

उन्होंने कई देशों की यात्राएँ कीं, जिनमें ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, जापान, चीन, फिलीपीन्स, हाँगकाँग, मलेशिया, थाईलैण्ड, सिंगापुर, अमेरिका, इंगलैण्ड, आयरलैण्ड, फ्राँस, इटली, जर्मनी, स्वीट्जरलैण्ड, डेनमार्क, स्वीडन, यूगोस्लाविया, पोलैण्ड, हंगरी, बुल्गारिया, स्लोवेनिया, रूस, चेकोस्लोवाकिया, ग्रीस, सउदी अरब, कुवैत, बहरीन, दुबई, ईराक, इरान, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, कोलम्बिया, ब्राजील, उरुग्वे, चिली, अर्जेन्टीना, सेंट डोमिंगो, प्युर्टि रीको, सूडान, मिश्र, नैरोबी, घाना, मॉरीशस, अलास्का और आइसलैण्ड सम्मिलित हैं। कोई भी बेझिझक कह सकता है कि श्री स्वामीजी ने योग का झंडा विश्व के कोने-कोने में फहरा दिया।

उन्हें कहीं विरोध, संघर्ष या आलोचना का सामना नहीं करना पड़ा। उनका तरीका अनोखा था। सभी धर्मों और धर्म-शास्त्रों की जानकारी होने के कारण उन्होंने उस ज्ञान को स्वाभाविक रूप में इस तरह प्रस्तुत किया कि सभी आस्थाओं के लोग उनकी ओर आकृष्ट हुए। उनकी शिक्षा योग तक ही सीमित नहीं थी, वरन् उसमें युगों-युगों का ज्ञान निहित था।

श्री स्वामीजी ने सभी दर्शनों के स्रोत–तंत्र के ज्ञान तथा वेदान्त, उपनिषदों, पुराणों, बौद्ध-धर्म, जैन-धर्म, सिक्ख-धर्म, पारसी-धर्म, इस्लाम-धर्म और ईसाई-धर्म के परम सत्य पर प्रकाश डाला। साथ ही उन्होंने अपनी शिक्षा में पदार्थ और सृष्टि के आधुनिक वैज्ञानिक विश्लेषण का भी समावेश किया। अब तक अज्ञात साधनाओं को उद्घाटित करते हुए उन्होंने तंत्र और योग की प्राचीन पद्धतियों की विवेचना एवं व्याख्या की तथा उनके यथार्थ स्वरूप को व्यवस्थित ढंग से लोगों के सामने रखा।

यह कहा जा सकता है कि श्री स्वामीजी योग के क्षेत्र में अग्रणी थे, क्योंकि उनके तरीके में नवीनता और निरालापन था। अजपाजप, अन्तर्मौन, पवनमुक्तासन, क्रियायोग और प्राणविद्या जैसे अभ्यासों को उन्होंने विधिपूर्वक एवं सरल रूप में इस प्रकार बताया कि इस बहुमूल्य और अब तक अगम्य विज्ञान को अपने भौतिक, मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक विकास के लिए अपनाना सभी के लिए संभव हुआ।

श्री स्वामीजी ने तंत्र की न्यास पद्धति पर शोध कर योगनिद्रा का आविष्कार किया। अपनी गहरी अन्तर्दृष्टि से उन्होंने न्यास के इस अभ्यास की प्रभावशीलता को देखकर

उसे इस तरह से प्रस्तुत किया कि अभी तक केवल उपासना की एक पूर्वापेक्षित क्रिया के रूप में प्रयुक्त होने वाला यह अभ्यास सभी के लिए व्यावहारिक योग का एक अभ्यास बन गया। योगनिद्रा प्राचीन पद्धतियों में स्वामीजी की अन्तर्भेदी दृष्टि और गहरी समझ का एक उदाहरण मात्र है।

श्री स्वामीजी का दृष्टिकोण प्रेरणाप्रद और उद्धारक होने के साथ-साथ गहरा और मर्मस्पर्शी था। फिर भी उनकी भाषा और व्याख्या सदा सरल एवं सुग्राह्य रही है। इस अवधि में उन्होंने योग और तंत्र की अस्सी से भी अधिक पुस्तकों का प्रणयन किया, जिन्हें अपनी प्रमाणिकता के कारण विश्व के विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में पाठ्य पुस्तकों के रूप में स्वीकार किया गया है। इन पुस्तकों का इटालियन, जर्मन, स्पेनिश, रशियन, यूगोस्लावियन, चीनी, फ्रेन्च, ग्रीक, इरानी और विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में अनुवाद किया जा चुका है।

लोगों ने उनके विचारों को अपनाया और सभी आस्थाओं तथा राष्ट्रों के आध्यात्मिक जिज्ञासु उनकी ओर उमड़ पड़े। उन्होंने हजारों लोगों को मंत्र और संन्यास-दीक्षा दी तथा उनमें दिव्य जीवन के बीज डाले। उन्होंने योग के प्रकाश को फैलाने में दुर्जेय उत्साह और शक्ति का प्रदर्शन किया तथा बीस वर्षों के अल्पकाल में ही अपने गुरु के मिशन को पूर्ण कर दिया।

सन् 1983 तक बिहार योग विद्यालय पूरे विश्व में योग शिक्षा और आध्यात्मिक विज्ञान के एक सम्माननीय और प्रमाणिक केन्द्र के रूप में विख्यात हो गया। इससे भी बड़ी बात यह है कि योग तपस्वियों और योगियों की गुफाओं से निकल कर समाज की मुख्य धारा में शामिल हो गया। चाहे अस्पताल हो, जेल हो, विद्यालय हो, महाविद्यालय हो, व्यापारिक संस्थान हो, खेल और फैशन जगत् हो, सेना या नौसेना हो, हर जगह योग की माँग होने लगी। पेशेवर लोग, जैसे, वकील, चिकित्सक, इंजीनियर, उद्योगपति और प्राध्यापक योग को अपने जीवन में अपनाने लगे। साथ-ही आम जनता भी। योग एक घरेलु शब्द बन गया।

सफलता के शिखर पर पहुँचने और अपने गुरु की इच्छा पूर्ण करने के बाद श्री स्वामीजी ने अपनी सभी कृतियों को त्याग दिया और कार्य आगे बढ़ाने के लिए स्वामी निरंजनानन्द को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया।

सन् 1988 में श्री स्वामीजी ने शिष्यों और संस्थाओं का त्याग कर, कभी नहीं लौटने के लिए मुंगेर छोड़ दिया तथा स्वयं के द्वारा स्थापित आश्रमों या संस्थाओं से बिना कोई मदद या सामान लिए एक भिक्षुक की तरह भारत के सिद्ध तीर्थों की यात्रा पर निकल पड़े।

त्र्यम्बकेश्वर में अपने इष्ट देवता भगवान मृत्युञ्जय के ज्योतिर्लिंग के समक्ष उन्होंने अपना चोला उतार दिया और एक अवधूत की तरह रहने लगे। इसी दौरान उन्हें अपने भविष्य के स्थान और साधना के बारे में आदेश प्राप्त हुआ।

त्र्यम्बकेश्वर (महाराष्ट्र) में नील पर्वत के निकट गोदावरी नदी के उद्गम पर अपने इष्ट देवता द्वारा दिए गये आदेशानुसार श्री स्वामीजी सन् 1989 में सती की चिता भूमि, बैद्यनाथ धाम, देवघर (झारखण्ड) के निकट स्थित रिखिया आ गये।

श्री स्वामीजी सितम्बर 1989 से रिखिया में प्रवास कर रहे हैं। इस अवधि में उन्होंने लम्बी और कठोर साधनाएँ, जैसे, पंचाग्नि एवं अष्टोत्तर-शत-लक्ष मंत्र पुरश्चरण किया। यहाँ उन्होंने परमहंसों की जीवन पद्धति अपना ली और केवल अपनी संस्था और मिशन के लिए नहीं, बल्कि सार्वभौमिक दृष्टि से साधनारत हैं। उन्होंने अपने आपको न किसी संस्था से सम्बद्ध रखा है, न दीक्षा या उपदेश देते हैं और न ही दक्षिणा ग्रहण करते हैं। वे हमेशा एकांतवास करते हैं और साधना में ही लीन रहते हैं, परन्तु यदा-कदा दर्शनों के लिए तृषित भक्तों पर करुणा कर बाहर आते हैं।

□ □ □

अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल

यह एक दातव्य एवं दार्शनिक आन्दोलन है। इसका शंखनाद परमहंस सत्यानन्द द्वारा योग संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु सन् 1956 में राजनाँदगाँव में किया गया। यह सम्बद्ध केन्द्रों द्वारा परमहंस सत्यानन्द की शिक्षाओं के प्रचार का एक माध्यम है। परमहंस निरंजनानन्द अन्तरराष्ट्रीय योग मित्र मण्डल के परमाचार्य हैं। यह सुव्यवस्थित योग प्रशिक्षण कार्यक्रम एवं मार्गदर्शन उपलब्ध कराता है और सभी सम्बद्ध योग शिक्षकों, केन्द्रों एवं आश्रमों के लिए शिक्षा के स्तर का निर्धारण करता है।

सभी संन्यासी शिष्यों, योग शिक्षकों, आध्यात्मिक जिज्ञासुओं एवं शुभचिन्तकों के लोकोपकारी कार्यों को संघटित एवं समेकित करने के लिए सन् 1993 के विश्व योग सम्मेलन के समय इसका एक घोषणा पत्र जारी किया गया। इस घोषणा पत्र के कार्यान्वयन में सहयोग का इच्छुक हर व्यक्ति योग सम्बन्धी दूरगामी परियोजनाओं में सक्रिय रूप से भाग लेकर विश्व के लिए सद्भाव और शान्ति का सन्देशवाहक बन सकता है।

बिहार योग विद्यालय

यह एक दातव्य एवं शैक्षणिक संस्था है। विश्व मानवता को योग परम्परा से अवगत कराने के लिए परमहंस सत्यानन्द द्वारा इस संस्था की स्थापना सन् 1963 में की गयी। परमहंस निरंजनानन्द इस संस्था के प्रधान संरक्षक हैं। जन समुदाय को योग की प्राचीन पद्धति की ओर वापस लाने के प्रयासों का केन्द्र है। शिवानन्द आश्रम के नाम से जाना जाने वाला प्रारम्भिक विद्यालय अब मुंगेर के स्थानीय लोगों को लिए कार्यरत है।

नये आश्रम गंगा दर्शन की स्थापना सन् 1981 में हुई। यह स्थल थोड़ी दूर पर प्रवाहित होती हुई गंगा की अनुपम छटा से विभूषित है। यहाँ वर्ष भर स्वास्थ्य रक्षा सत्र, योग साधना, क्रिया योग तथा अन्य विशेष सत्र आयोजित किये जाते हैं। यह योग सम्मेलनों एवं शिविरों के संचालन तथा व्याख्यान देने हेतु पूरे विश्व को प्रशिक्षित संन्यासी एवं शिक्षक उपलब्ध कराता है। यहाँ एक समृद्ध पुस्तकालय, वैज्ञानिक अनुसंधान केन्द्र एवं आधुनिक प्रिंटिंग प्रेस है। अपनी विशिष्ट संन्यास पद्धति एवं योग प्रशिक्षण पद्धति तथा महिलाओं एवं विदेशियों को संन्यास में दीक्षित करने के कारण यह एक ख्याति प्राप्त संस्था है।

शिवानन्द मठ

शिवानन्द मठ एक सामाजिक तथा दातव्य संस्था है। इसकी स्थापना सन् 1984 में परमहंस सत्यानन्द द्वारा अपने गुरु स्वामी शिवानन्द सरस्वती की स्मृति में की गयी। इसका मुख्यालय अब बिहार राज्य के देवघर जिले के रिखिया ग्राम में है। परमहंस निरंजनानन्द इस संस्था के प्रधान संरक्षक हैं। इनका लक्ष्य समाज के शोषित, पीड़ित एवं पिछड़े वर्गों, विशेषकर ग्रामीण समुदाय के विकास एवं उत्थान के लिए आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराना है।

संस्था के कार्य हैं–निःशुल्क छात्रवृत्तियों, कपड़े, पालतू पशुओं एवं खाद्य सामग्रियों का वितरण, नलकूपों की खुदाई, जरूरतमन्दों के लिए आवासों का निर्माण, किसानों के खेतों की जुताई एवं सिंचाई के कार्यों में सहायता पहुँचाना। चिकित्सा सेवा उपलब्ध कराने हेतु एक छोटे चिकित्सालय का निर्माण किया गया है और मवेशियों के उपचार की सुविधा उपलब्ध करायी जाती है। शिवानन्द मठ की गतिविधियों के संचालन हेतु निर्मित तीन मंजिला त्रिभुवन कार्यालय गाँव के लोगों को विश्व की घटनाओं से अवगत कराने के लिए 'सेटेलाईट डिश' भी लगाएगा। सभी सेवाएँ सार्वभौम रूप से समस्त जातियों एवं धर्मों के लोगों को प्रदान की जाती हैं।

योग रिसर्च फाउण्डेशन

इस वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान की स्थापना परमहंस सत्यानन्द द्वारा मुंगेर में सन् 1984 में की गयी थी। परमहंस निरंजनानन्द इस संस्था के प्रधान संरक्षक हैं। इस शोध संस्थान का उद्देश्य वैज्ञानिक ढाँचे के अन्तर्गत योग का सही मूल्यांकन प्रस्तुत करना तथा मानव के भावी विकास के संदर्भ में इसे एक आवश्यक विज्ञान के रूप में प्रतिष्ठित करना है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में योगानुसंधान से सम्बद्ध देश-विदेश के सौ से भी अधिक चिकित्सा शास्त्रियों की एक संगोष्ठी का आयोजन मुंगेर में वर्ष 1988 तथा 1989 को किया गया। श्वसन सम्बन्धी रोगों पर योग के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए वर्तमान में विश्वभर के लगभग 10,000 मरीजों पर एक अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान कार्यक्रम चलाया जा रहा है। भविष्य की योजनाएँ हैं–शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य एवं आध्यात्मिक उन्नति के लिए योग के कम प्रचलित पक्षों पर साहित्यिक, शास्त्रीय, चिकित्सात्मक एवं वैज्ञानिक अनुसंधान।

श्री पंचदशनाम परमहंस अलखबाड़ा

श्री पंचदशनाम परमहंस अलखबाड़ा की स्थापना परमहंस सत्यानन्द द्वारा बिहार के देवघर जिले के रिखिया ग्राम में सन् 1990 में की गयी। यह दातव्य एवं शैक्षणिक संस्था है। इसका लक्ष्य संन्यास की उच्चतम परम्पराओं—वैराग्य, त्याग और तपस्या—को बनाये रखना तथा उनका प्रचार-प्रसार करना है। इसकी जीवनशैली वैदिक युग में ऋषि-मुनियों द्वारा अपनायी गयी तपोवन शैली पर आधारित है। अलखबाड़ा में केवल संन्यासी, वैरागी, तपस्वी और परमहंस प्रवेश पा सकते हैं।

अलखबाड़ा में योग शिक्षण जैसा कोई कार्यक्रम संचालित नहीं किया जाता है और न किसी धर्म या धार्मिक अवधारणाओं पर प्रवचन ही दिया जाता है। अलखबाड़ा के लिए निर्देशित साधना तपस्या और स्वाध्याय या आत्मचिन्तन की वैदिक परम्परा पर आधारित है। परमहंस सत्यानन्द अब यहाँ स्थायी रूप से निवास करने लगे हैं। वे निरन्तर पंचाग्नि साधना एवं अन्य साधनाओं में लीन रहते हैं। इस प्रकार वे भावी परमहंसों के लिए इस महान् परम्परा को कायम रखने का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं।

बिहार योग भारती

बिहार योग भारती की स्थापना योग विज्ञान के उच्च अध्ययन हेतु परमहंस निरंजनानन्द द्वारा सन् 1994 में एक शैक्षणिक एवं दातव्य संस्था के रूप में की गयी। यह स्वामी शिवानन्द सरस्वती एवं परमहंस सत्यानन्द जी के स्वप्न का साकार रूप है। बिहार योग भारती योग शिक्षण के लिए पूर्णत: समर्पित विश्व की प्रथम मान्यता प्राप्त संस्था है।

योग की व्यापक शिक्षा के साथ-साथ योग अध्ययन के क्षेत्र में सर्टिफिकेट, डिप्लोमा तथा डिग्री प्रदान करने वाली अपने तरह की पहली संस्था है। इसमें योगदर्शन, योग मनोविज्ञान, व्यावहारिक योग विज्ञान एवं योग पर्यावरण विज्ञान विभाग के माध्यम से आज की आवश्यकता के अनुसार पूर्ण वैज्ञानिक ढंग से योग शिक्षण एवं प्रशिक्षण दिया जाता है।

वर्तमान में बिहार योग भारती अपने गुरुकुल वातावरण में चातुर्मासिक आवासीय सत्रों का आयोजन करता है, ताकि योग शिक्षण के साथ-साथ विद्यार्थियों को मानवता के प्रति सेवा, समर्पण और करुणा की शिक्षा भी मिले।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की स्थापना परमहंस निरंजनानन्द द्वारा सन् 2000 में की गयी। यह संस्थान राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर पुस्तकों, पत्रिकाओं, श्रव्य-दृश्य कैसेटों और मल्टी मीडिया के माध्यम से योग एवं तत्सम्बन्धी ज्ञान, जैसे–मनोविज्ञान (प्राच्य एवं आधुनिक), पर्यावरण विज्ञान, योग चिकित्सा, वेद, उपनिषद्, तन्त्र दर्शनों (पूर्वी एवं पश्चिमी), रहस्यवाद एवं आध्यात्मिकता के प्रचार-प्रसार हेतु समर्पित है।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट शाश्वत योग विद्या, जीवन-पद्धति एवं योगाभ्यासों के माध्यम से मानवता के उत्थान हेतु मुख्यत: योग दर्शन, मनोविज्ञान एवं व्यावहारिक योग विज्ञान पर पुस्तकें, शोध-सामग्री, अभ्यास पुस्तकें एवं सुविख्यात आध्यात्मिक प्रणेताओं एवं लेखकों की प्रेरक शिक्षाओं का प्रकाशन करेगा।

हं
क्षं
SATYANANDA YOGA
BIHAR YOGA

'ध्यान तन्त्र के आलोक में' ध्यान के प्रारम्भिक अभ्यासियों के लिए एक स्पष्ट एवं बोधगम्य पुस्तक है। इसका उद्देश्य है अभ्यासी के समक्ष संभावनाओं के द्वार खोलना, आवश्यक तैयारी की जानकारी देना और साथ-ही ध्यान का अनुभव प्राप्त करने के लिए व्यावहारिक विधियों से अवगत कराना। प्रत्याहार के आधारभूत अभ्यासों, जैसे, अन्तर्मौन तथा ध्यान की अन्य विधियों, जैसे, योग निद्रा, अजपाजप, त्राटक, क्रियाओं, मंत्र जप के विभिन्न अभ्यासों की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए, इस पुस्तक में ध्यान के उच्च अभ्यासियों के लिए आवश्यक बुनियाद भी रखी गयी है। साथ-ही स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की शिक्षण प्रक्रिया को यथावत् प्रस्तुत किया गया है।

"सैद्धान्तिक विवेचन एवं अभ्यास के बीच सहज संतुलन रखते हुए, इस अनुपम पुस्तक में उपनिषदों, तंत्रों एवं पूर्व में विकसित योग की अनेक पद्धतियों में प्रतिपादित ध्यान के सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है।"
'द हिन्दू'

YOGA PUBLICATIONS TRUST

ISBN 81-85787-63-8
9788185787633